ग्लोबीकरण, क्यों

पार्टी में कमाल

में कथा–कला

लेखक

वन्दना श्रीवास्तव

ISBN : 81-86135-85-5

संजय बुक सेन्टर
के. 38/6 गोलघर, वाराणसी - 1.
द्वारा प्रकाशित
दूरभाषा - 333504
संस्करण - प्रथम, 1998

Rs. 100

शब्द संयोजन :
डी०जी० कम्प्यूटर्स
बी० 22/398, खोजवाँ बाजार
वाराणसी - 10.

एस०पी० इण्टरप्राइजेज,
बैजनत्था, वाराणसी द्वारा मुद्रित

BHAGWATICHARAN VARMA KE UPANYASO ME KATHA-KALA

By - Vandana Srivastava

प्रिय उप्पू को

सस्नेह

समर्पित

– वन्दना श्रीवास्तव

विषय-सूची

प्रस्तावना

खण्ड-१

प्रथम अध्याय : *भगवतीचरण वर्मा — रचयिता व्यक्तित्व की प्राथमिकताएँ*

वर्माजी का प्रारंभिक जीवन और शिक्षा, साहित्यिक परिवेश, लेखकीय मानसिकता और आदर्श तथा साहित्यिक कृतियॉं।

द्वितीय अध्याय : *भगवतीचरण वर्मा की कथाकृतियाँ*

भगवतीचरण वर्मा की कथाकृतियों-पतन, चित्रलेखा, तीन वर्ष टेढ़े-मेढ़े रास्ते, आखिरी दॉंव, अपने खिलौने, भूले-बिसरे चित्र, वह फिर नहीं आई, सामर्थ्य और सीमा, थके पांव, रेखा, सीधी-सच्ची बातें, सबहिं नचावत राम गोसाईं, प्रश्न और मरीचिका, युवराज चूण्डा, धुप्पल, चाणक्य तथा कहानियों का विकास-क्रम।

खण्ड - २

तृतीय अध्याय : *भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास -- अन्तर्वस्तु*

वर्माजी के उपन्यासों की अन्तर्वस्तु की मूलप्रवृत्तियाँ तथा अन्तर्वस्तु की दृष्टि से पतन, चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, आखिरी दाव, अपने खिलौने, भूले-बिसरे चित्र, वह फिर नहीं आई, सामर्थ्य और सीमा, थके पॉंव, रेखा, सीधी-सच्ची बातें, सबहिं नचावत राम गोसाईं, प्रश्न और मरीचिका, युवराज चूण्डा, धुप्पल और चाणक्य का विश्लेषण।

चतुर्थ अध्याय : *भगवतीचरण वर्मा की कहानियाँ -- अन्तर्वस्तु*

भगवतीचरण वर्मा की कहानियों की अन्तर्वस्तु की मूलप्रवृत्तियॉं तथा अन्तर्वस्तु की दृष्टि से इन्स्टालमेण्ट, दो बांके, मेरी कहानियॉं तथा मोर्चाबन्दी कहानी-संग्रह का विश्लेषण।

पंचम अध्याय : *भगवतीचरण वर्मा का कथा-शिल्प*

विधानन की दृष्टि से पतन, चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, आखिरी दॉंव, अपने खिलौने, भूले-बिसरे चित्र, वह फिर नहीं आई, सामर्थ्य और सीमा, थके पाव, रेखा, सीधी-सच्ची बातें. सबहि नचावत राम गोसाईं. प्रश्न और मरीचिका युवराज चूण्डा धुप्पल चाणक्य तथा कहानियों का विश्लेषण

पृष्ठ सं०

षष्ठ अध्याय : *भगवतीचरण वर्मा की कथा-भाषा* ७२ - ८५

पतन, चित्रलेखा, तीन वर्ष, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, आखिरी दांव, अपने खिलौने, भूले-बिसरे चित्र, वह फिर नहीं आई, सामर्थ्य और सीमा, थके पांव, रेखा, सीधी-सच्ची बातें, सबहिं नचावत राम गोसाईं, प्रश्न और मरीचिका, युवराज चूण्डा, धुप्पल, चाणक्य तथा कहानियों का भाषागत मूल्यांकन।

उपसंहार

आधार-ग्रन्थ सूची

❀ ❀ ❀

प्रस्तावना

भगवतीचरण वर्मा प्रेमचन्दोत्तर युग के महत्वपूर्ण रचनाकार हैं। इनका कृति-व्यक्तित्व बहुआयामी और समृद्ध है। प्रेमचन्द्र की कथा परम्परा में इनकी अपनी गति और मौलिकता है। भगवतीचरण वर्मा विशेष रुप से अपनी रचनात्मक प्राथमिकताओं के रचनाकार हैं। कथ्य, चरित्र या घटना के सयोजन में इनकी यह विशेषता देखी जा सकती है। वर्माजी मूलत मिथ्या चेतना से घिरे पतनशील मध्यवर्ग की इच्छाओं और संघर्ष को गहराई में पहचानते हैं। व्यक्ति और समाज के अन्तर्सम्बन्धों के प्रति उनकी समझ की कुछ अपनी रूढ़ियाँ गतिरोध भी हैं। सकारात्मक मूल्यों या चरित्रों के निर्माण में वे एक आस्तिक भारतीय की तरह आस्थावान दिखाई देते हैं। इस प्रकार चीजें उनके यहाँ लगभग पूर्व निर्धारित रूप में स्वीकृत होती हैं। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में प्राय ये एक फ्रेम का काम भी करती है। भगबतीचरण वर्मा के कथा साहित्य का विश्लेषण करते हुए ये बिन्दु बार-बार उभर कर आये हैं।

किसी भी कथाकार को उसकी 'कथा कला' के कोण से समझना वस्तुत उसे अधिक समग्रता में समझना है। यहाँ उसके कृतित्व के विविध आयामों का विश्लेषण अन्तर्निहित होता है। भगवतीचरण वर्मा कथ्य के विशिष्ट परिवेश और परिपेक्ष्य का चयन करने वाले रचनाकार हैं। उनेक यहाँ चरित्र या घटनायें प्राय परिस्थिति के अत्यन्तिक दबावों द्वारा प्रेरित और निर्धारित होती हैं। इस परिस्थिति को विधाता की सी क्षमता प्राप्त है। सम्पूर्ण घनाचक्र और चरित्र विकास को इनका निर्णय मानना ही पड़ता है। चित्रलेखा में पाप और पुण्य की समस्या से टकराते हुए भी वे परिस्थिति या भाग्यचक्र की क्षमता स्थापित करते हैं। मनुष्य के समूचे सामर्थ्य को 'भाग्य' की सीमा में देखने की वर्माजी की दृष्टि उनके कथा वृतान्त को रोचक और नाटकीय बनाती है। वर्माजी की कथा कला में एक किस्सागो की सी तटस्थता और सूझ है।

वर्माजी के कृतित्व की निजता और वैशिष्ट्य को जानने के लिए उनके व्यक्तित्व की अर्न्तबाह्य रेखाओं से गुजरना जरूरी था। उनका रचना ससार कई बार उनके अपने निजी अनुभवों या जीवन निष्कर्षों से समृद्ध हुआ है। वर्माजी का अपना जीवन एक यायावर का सा जीवन रहा है। जीविका के लिए यहाँ से वहाँ भटकते हुए वे जीवन की कठोर सच्चाइयों से गुजरे हैं वहाँ उन्होंने अर्थ के दबाव से टूटते बिखरते हुए सम्बन्धों को, मनुष्यों के जीवन में सर्वत्र व्याप्त मूल्य भग को, निष्फल होती हुई नैतिकता और सदाशयी मनुष्य के टूटते हुए सपनों को बहुत करीब से देखा है। इन अनुभवों ने वर्माजी को भी अनेक बार तोड़ा है। उनकी रचनाओं में व्यक्त कुछ चरित्रों या स्थितियों के स्वरूप में उनकी यह टूटन देखी जा सकती है। यहाँ उनके अपने जीवन के अनुभव निर्णायक होते हैं। अपने जीवन की कितनी ही अविश्वसनीय लगने वाली घटनाओं को अपनी कथाओं में नियोजित कर वे अपने पाठकों को उलझन में डाल देते हैं। 'पतन' में पिता और पुत्र का सम्बन्ध मानने वालों का एक ही 'स्त्री' पर आसक्त होना, 'भूले बिसरे चित्र', 'सामर्थ्य और सीमा' जैसे उपन्यासों में जीवन की अनेक विघटित स्थितियों का साक्षात आदि में वे अपने जीवनानुभवों से ही काम लेते दिखाई देते हैं। इसके अतिरिक्त नियति या भाग्य को अन्तिम या निर्णायक मानने का उनका विश्वास भी इन्हीं अनुभवों से पुख्ता होता है। इस प्रकार उनकी जीवन कथा गुजरते हुए उनके रचना ससार की ज्यादा गहरी समझ प्राप्त होती है। यही कारण है कि इस शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय को भगवतीचरण वर्मा रचयिता व्यक्तित्व की के अन्तर्गत व्यवस्थित किया गया है

दूसरे अध्याय में उनकी कथाकृतियों का सिलसिलेवार अवलोकन है। यहाँ सक्षिप्त रुप में उनकी अन्तर्वस्तु की भी पड़ताल की गयी है। तीसरे अध्याय में उनके उपन्यासों की अन्तर्वस्तु का गहन विश्लेषण है। भगवतीचरण वर्मा मूलत. उपन्यासकार हैं। यद्यपि उन्होंने कुछ अत्यन्त चर्चित कहानियॉ भी लिखी हैं किन्तु उनकी कथाकला का समुचित विकास उनकी औपन्यासिक कृतियों में हुआ है। वर्माजी मूलत नगरीय मध्यवर्ग के जीवन की वास्तविकताओं के रचनात्मक पुनर्सृजन के रचनाकार हैं। वे इस शिक्षित नागर वर्ग की प्रवृत्तियों और आकाक्षाओं को पहचानते हैं। उसका सामर्थ्य, उसकी गति-प्रकृति, उसका संघर्ष, उसकी उन्नति या पतन सब कुछ उनका पहचाना हुआ है। कभी-कभी वे आत्यंतिक रूप से अपने समय के महाध्वस से आकुल होते हैं। यहॉ वे आधुनिक जीवन में गहराती हुई मूल्यहीनता से साक्षात्कार कराते हैं।

चौथे अध्याय में उनकी कहानियों की अर्न्तवस्तु का विश्लेषण है। यहॉ भी उनके कहानीकार की क्षमता को रेखाकित करने का प्रयास हुआ है। उनकी वस्तु विषयक मौलिकता और प्रभाव का भी आकलन हुआ है।

पॉचवे अध्याय के केन्द्र में वर्माजी का कथाशिल्प है। कथाशिल्प के विषय में वर्माजी का अपना निश्चित मत है। कला को वे विषय वस्तु का स्थानापन्न नहीं मानते किन्तु प्रत्येक कथाकृति को एक कलाकृति की सी गंभीरता में लेने के रचनात्मक संघर्ष का पक्ष लेते हैं। यहॉ से वे रचनाकार की निजता और मौलिकता का निर्धारण देखते हैं। वर्माजी की रचनाओं में भी कथा को बनाने-संवारने का उनका प्रयत्न दिखाई देता है। 'कथा भाषा' वाले अध्याय को भी उनके शिल्प से गहरी सम्बद्धता में ही व्यवस्थित किया गया है। वर्माजी की कथा भाषा एक किस्सागो वर्णनात्मक शिल्प की सहज प्रवाहित होती हुई भाषा है जिसके प्रभाव के निर्माण में लेखक की लेखकीय तटस्थता की अपनी भूमिका है।

इस प्रकार इस शोध प्रबध में वर्माजी जैसे महत्त्वपूर्ण रचनाकार की रचनाशीलता के सम्बन्ध में सुविचारित निष्कर्ष लेने का प्रयत्न किया गया है किन्तु प्रत्येक प्रयत्न की अपनी सीमायें होती हैं। इस शोध प्रबंध की भी सीमाएं होगी। इस सन्दर्भ में विद्वानों के परामर्श या अभिमत का सदैव स्वागत होगा।

❀❀❀

भगवतीचरण वर्मा : रचयिता व्यक्तित्व की प्राथमिकताएँ

भगवतीचरण वर्मा के कृतित्व की तरह उनका कृती-व्यक्तित्व भी उल्लेखनीय है- इसके समुचित विश्लेषण के बिना उनकी रचनाशीलता की प्रकृति और उपलब्धि का अनुशीलन कर पाना सभव नहीं है। उनके रचनाकार की प्रकृति और उसकी रचनात्मकता के चुनाव को जानकर ही उनकी कथा-कला का महत्वपूर्ण विश्लेषण किया जा सकता है।

बीसवीं शताब्दी का प्रारम्भ भारत में धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक चेतना की दृष्टि से परिवर्तन का काल रहा है। धार्मिक-क्षेत्र में आर्य-समाज का प्रभाव तेजी से बढ़ रहा था और सास्कृतिक जीवन में पुरानी परम्पराओं और मान्यताओं में अंग्रेजी शिक्षा के सम्पर्क के कारण बदलाव आ रहा था जिसके कारण मध्यवर्गीय परिवारों का ढाचा तेजी से बदल रहा था। ऐसे ही सक्रान्ति काल में वर्माजी का जन्म हुआ। परन्तु दुर्भाग्यवश सन् १९०८ के व्यापक प्लेग में इनके पिता देवीशरण का अचानक निधन हो गया उसी के साथ परिवार की आर्थिक स्थिति भी नीचे गिरी, परिणामतः इनके ताऊ ने अपने पिता के समय से चली आ रही जमींदारी के दो गाँवों में से वह गाँव, जो उत्तराधिकार में भगवती बाबू और उनके छोटे भाई आनंदस्वरूप वर्मा के हिस्से में पड़ता था, दस हजार रूपये में बेच दिया-- इसके ब्याज से मिली बाईस रूपये महीने की आय से इनके परिवार का खर्च किसी तरह चलने लगा। पिता का सरक्षण नहीं मिलने के कारण इनका बाल्यकाल दो विपरीत रुचियों वाले व्यक्तियों से प्रभावित हुआ- बड़े ताऊ कायस्थ कुल-परम्परा के अनुसार खाने-पीने के शौकीन थे किन्तु इनके सरक्षक ताऊ आर्यसमाजी थे-- इनकी सात्विकता का प्रभाव वर्माजी पर ऐसा पड़ा कि सात्विकता के प्रति एक अटूट आस्था उनमें अंत तक विद्यमान रही। पॉच वर्ष की आयु में वर्माजी घर के पास ही म्यूनिसिपल बोर्ड की एक पाठशाला में भर्ती करा दिये गये, परिवार के आर्यसमाजी प्रभाव के कारण ही उन्हें उस समय की परम्परा के अनुसार उर्दू की शिक्षा न दिलाकर हिन्दी की शिक्षा दिलायी गयी। आरभिक जीवन में कानपुर के पटकापुर मुहल्ले का परिवेश भी काफी महत्वपूर्ण स्थान रखता है-- इनके व्यक्तित्व में जो एक मस्ती दिखायी देती है, वह इन प्रारभिक क्षणों में पड़े सामंती वातावरण का प्रभाव है। वही मस्ती का भाव इनकी कविताओं में झलकता है। चौथे दर्जे में प्रथम स्थान प्राप्त करने के कारण उन्हें सीधे छठे दर्जे में भर्ती करा दिया गया। वहाँ गणित का सवाल हल न कर पाने के कारण अध्यापक ने उन्हें निर्दयतापूर्वक पीटा, फलस्वरूप उनकी माँ ने उनका नाम स्कूल से कटा दिया। उसके बाद थियोसॉफिकल स्कूल में अध्ययन के दौरान कक्षा सात में प्रथम बार अनुत्तीर्ण हुए और सबसे कम अक उन्हें हिन्दी में ही मिले। हिन्दी में उनकी इस दुर्दशा से खिन्न होकर अध्यापक पं० जगमोहन विकसित- जो साहित्यिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे- ने असफलता के लिए डाँटा और समझाया भी-- उन्होंने पाठ्यक्रम के अतिरिक्त हिन्दी पुस्तकें पढ़ने का सुझाव दिया। हिन्दी के समुचित अभ्यास के लिये उन्होंने सबसे पहली पुस्तक 'भारत-भारती' पढ़ी और 'सरस्वती' के अंकों को देखना शुरु किया-- इसी समय उनके कवि रूप का प्रस्फुटन हुआ और वे तुकबन्दियॉ करने लगे। 'विकसितजी' उनकी कविताओं को देखते और अशुद्धियों को सुधार देते फलस्वरूप वर्माजी का उत्साह निरन्तर बढ़ता गया और उन्हें कविताएँ लिखने का ऐसा शौक लगा कि वह अपने स्कूल की हस्तलिखित पत्रिका के नियमित लेखक बन गए। परिवार के दिन आर्थिक कष्ट में बीत रहे थे-- कविता और खेलकूद के चक्र में तथा पारिवारिक दायित्व का निर्वाह करने के कारण वे पढ़ाई में लगातार पिछड़ते जा रहे थे उनकी रुचि संगीत के प्रति भी बढ़ रही थी

गणेश शंकर विद्यार्थी के 'प्रताप' में उनकी प्रथम कविता प्रकाशित हुई -- 'चलजा होवे वायु हड़हड़ाता आंधी हो विकट बड़ी'- यह पक्ति सशोधित होकर छपी 'हहर-हहर हो पवन प्रवाहित आधी होवे विकट बड़ी' के रूप में। इसके बाद 'प्रताप' में वर्माजी की कविताएं छपने लगी। 'प्रताप' कार्यालय से ही निकलने वाली पत्रिका 'प्रभा' में भी उनकी कविताएं छपी और बाद में जबलपुर से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'श्रीशारदा' में भी। साहित्य क्षेत्र में मिली इन सफलताओं से प्रभावित होकर उन्होनें सृजन-कर्म को ही जीवन का लक्ष्य निश्चित कर लिया। १५ वर्ष की अवस्था में ही कानपुर की साहित्यिक गोष्ठियों में उन्हें सम्मानित स्थान प्राप्त होने लगा। आयु में छोटे होने पर भी विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', प० रमाशकर अवस्थी, चन्द्रिका प्रसाद मिश्र से उनकी घनिष्ठ मित्रता हो गयी। इन दिनों वर्माजी को रेनाल्ड के 'लंदन-रहस्य' से लेकर विक्टर ह्यूगो और ड्यूमा तक के उपन्यास पढ़ने का अवसर मिला, प्रताप से सबधित उपर्युक्त साहित्यिक गुट कानपुर में नवीन चेतना का प्रतीक माना जाता था इसी समय वर्माजी के अदर कुछ विशिष्ट सस्कार पनपे जिनमें समय के साथ विकास हुआ। परन्तु साहित्यिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के परिणामस्वरूप वर्माजी हाईस्कूल में फेल हो गये और दूसरे वर्ष भी बड़ी कठिनाई से तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण हो सके। 'हम दीवानों की क्या हस्ती' कविता इन्हीं दिनों लिखी गयी-- सन् १६२३ तक छायावादी कवि के रूप में इन्हें पर्याप्त ख्याति मिल चुकी थी। इसी वर्ष कानपुर में हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का अधिवेशन हुआ। भगवती बाबू इस आयोजन के लिये दौड़-धूप करते रहे- व्यस्तता के कारण और साहित्यिक रुचि होने के कारण इनका पढ़ाई के प्रति रहा-सहा लगाव भी समाप्त हो गया। अधिवेशन के कवि सम्मेलन में वर्माजी ने भी कविता सुनायी जिसकी बड़ी प्रशसा हुई--

"प्रतिध्वनि, प्रतिध्वनि क्यों रोती है, जले हृदय को रोने दे,
आँसू की धारा में उसको सारा विश्व भिगोने दे।"[1]

इस कविता को वर्माजी ने अपने किसी भी सग्रह में स्थान नहीं दिया। काव्य-चर्या और आर्थिक दुश्चिन्ताए -- उन्हें इण्टरमीडिएट में असफलता से न बचा सकी- और उस वर्ष वे इटर में अनुत्तीर्ण हुए। इस विषय में उन्होंने लिखा है-- "मैं एक अकड़कर चलने वाला अभावग्रस्त परिवार का कर्त्ता था, मेरे अदर एक भयानक अहम् कि मैं अपने अभाव किसी पर प्रकट न होने दूं, अपनी व्यथा की कहीं चर्चा न करूँ। शायद अपने उस अभावों और अपनी उस व्यथा को अनुभव करने में मैं स्वयं कतराता था। मेरे पास पुस्तकें थी ही नहीं, पास होता तो कैसे।"[2] परीक्षा के बाद १६ अप्रैल, १६२३ में इनका विवाह उमाजी के साथ हुआ, इनकी पत्नी के माता-पिता का देहान्त पहले ही हो चुका था- भाई हरप्रसाद वर्मा ही इनके अभिभावक थे और वे मध्यप्रदेश की खैरागढ़ रियासत में किसी मिल के मैनेजर थे।

१६२४ में इन्होंने द्वितीय श्रेणी में इण्टर पास किया- यह वर्ष उनके लिये एक दूसरी दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था-- गणेश शंकर विद्यार्थी से उनका सबध पहले ही बन चुका था- 'प्रभा' के नियमित लेखक होने के कारण वे उनके और निकट आये। यद्यपि सक्रिय राजनीति के प्रति उनके मन में आकर्षण नहीं था फिर भी राजनीतिज्ञों के सम्पर्क के कारण वर्माजी में एक विशेष चेतना का विकास हुआ- विद्यार्थी जी के प्रभाव के कारण वर्मा जी ने 'प्रभा' में अनेक राजनीतिक टिप्पणियाँ और लेख लिखे इसी समय वर्मा जी पत्रकारिता के एक ऐसे आयाम से परिचित हुए जो आगे चलकर उनके लिये उपयोगी सिद्ध हुआ। १६२४ में ही वे एक और हादसे का शिकार हुए-- पत्नी उमा के साथ राजनांद गॉव

---

१ भगवतीचरण वर्मा श्री [illegible] पृ० १३

२ हिन्दुस्तान 'कहि न जाय का कहिये ६ नवम्बर १६८८, पृ० ५३

से लौटते हुए वे इलाहाबाद स्टेशन पर कुछ देर रुके, उमाजी जनाना वेटिंगरुम में ट्रंक में ताला बद किये बिना स्नानागार में चली गयी- इसी बीच किसी ने उनके ट्रक से सारे जेवर निकाल लिये लगभग डेढ़ सौ तोले सोने की हानि हुई। थाने में रिपोर्ट लिखाकर इस पारिवारिक क्षति को उन्होंने खामोशी से स्वीकार कर लिया। इस घटना के कुछ दिनों बाद गणेशशकर विद्यार्थी से एक पत्र लेकर वर्माजी रामकृष्ण दास से मिलने बनारस गये- काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रवेश लेने हेतु। राय साहब के यहॉ वर्माजी कवि मैथिलीशरण गुप्तजी से मिले परन्तु पढ़ाई के विषय में कोई उत्साहजनक बात नहीं हुई अत उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया और उस समय के 'आक्सफोर्ड एंड कैम्ब्रिज' हॉस्टल में रहना शुरु किया। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में वर्माजी का सम्पर्क सुमित्रानन्दन पंत से हुआ जो आजीवन मैत्री में बदल गया वहीं इनकी मित्रता श्री रामकुमार वर्मा से भी हुई। 'अभ्युदय' के सम्पादक कृष्णकात मालवीय ने वर्माजी को अग्रेजी का लघु उपन्यास हिन्दी में अनुवाद करने के लिये दिया इस कार्य के लिये उन्हें पचास रूपये मिले परन्तु उपन्यास का अनुवाद कभी नहीं छपा। शायद मालवीय जी को अनुवाद की आवश्यकता थी ही नहीं, मालवीय जी ने यह कार्य वर्माजी की सहायता के उद्देश्य से करवाया था। सन् १६२५ में वर्माजी के यहॉ कन्या ने जन्म लिया- नामकरण हुआ शकुन्तला। इलाहाबाद में बीता समय वर्माजी के साहित्यिक जीवन की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है उनके अन्तर्मन में बसी अल्हड़ता, मस्ती एवं विनोदप्रियता यहॉ के स्वच्छंद वातावरण में अपनी चरमसीमा पर पहुँच गयी थी।

कानपुर लौटने के उपरात उन्हें लगा कि एल०एल०बी० को प्राथमिकता देकर उन्होंने गलती की है-- विद्या अर्थोपार्जन में सहायक नहीं हो रही थी। इसी दौरान भगवतीबाबू के यहॉ दूसरी सतान उत्पन्न हुई-- नामकरण हुआ-- अभय- अभय प्रताप सिह वर्मा। इस बीच इन्होंने एम०ए० फाइनल करने का विचार किया परन्तु दो महीने बाद ही ये विश्वविद्यालय छोड़कर फिर कानपुर आ गये और अपने पिता के एक पुराने सहयोगी वकील बाबू मुन्नालाल जूनियर के रूप में वकालत शुरु कर दी। वर्ष १६२८ में वर्माजी ने अपना पहला उपन्यास 'पतन' पूरा किया और वह गगा पुस्तकमाला, लखनऊ से प्रकाशित हुआ। जीवन का संघर्ष उन्हें यथार्थ की कठोर भूमि की ओर ले गया-- कविता की अपेक्षा गद्य की ओर झुकाव का यही कारण था। आर्थिक कठिनाइयो के कारण उन्हें इस उपन्यास का प्रकाशनाधिकार गगा पुस्तकमाला के सचालक और प्रकाशक श्री दुलारेलाल भार्गव के हाथ बारह आना (पचहत्तर पैसे) प्रति पृष्ठ की दर से बेचना पड़ा उस समय हिन्दी प्रकाशन के क्षेत्र में ऐसी ही परम्परा थी। वर्माजी की वकालत तो नहीं चली परन्तु उन दिनों इन्होंने कई कविताएं लिखी। कवि-सम्मेलनों मे उनकी लोकप्रियता बढ़ी-- कविताओं और उनके सस्वर पाठ की विशिष्ट शैली के कारण। सन् १६२६ में वर्माजी को बुंदेलखण्ड की रियासत छतरपुर से आने का निमंत्रण मिला- स्वय महाराजा छतरपुर का जिसे प्रसिद्ध साहित्यकार, आलोचक तथा महाराजा के सचिव बाबू गुलाबराय ने भिजवाया था। महाराजा 'पतन' में अवध के अंतिम नबाब वाजिद अली शाह का प्रसंग देखकर अवध के इतिहास के प्रति आकृष्ट हुये थे। भगवती बाबू को अवध के इतिहास में न दिलचस्पी थी, न जानकारी अत सतोषजनक विदाई प्राप्त करके वे कानपुर लौट आये। इनका परिवार आर्थिक संकटों से जूझ रहा था, वकालत में न इनकी रुचि थी और न ही वह चल रही थी। १६२६ में पत्नी उमा यक्ष्मा का शिकार हुई-- इलाज के लिये जलवायु-परिवर्तन की आवश्यकता थी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के एक पुराने साथी की सहायता से उन्होंने पत्नी और परिवार के अन्य सदस्यों को अल्मोड़ा में रखने की व्यवस्था की। स्वास्थ्य में सुधार होने पर सन् १६३० के शरदकाल में उमाजी सपरिवार अल्मोड़ा से कानपुर आ गयी। कानपुर में वर्माजी की वकालत न चल सकी और एक मुवक्किल से तनातनी बढ़ने के कारण उन्हें कानपुर छोड़ना पड़ा इसके बाद वे अपनी ननिहाल हमीरपुर आये और वहॉ वकालत शुरु करने का निश्चय किया

कानपुर की कौशिक-मण्डली में बालकृष्ण शर्मा 'नवीन',--आस्कर वाइल्ड और अनातोले फ्रास की चर्चा किया करते थे-- खास तौर पर अनातोले फ्रांस के उपन्यास 'थापा' की। हमीरपुर के उनींदे माहौल में वर्माजी के पास कोई काम नहीं था। अफसरों की सख्या कम होने के कारण स्थानीय क्लब में अफसरों और वकीलों का सम्पर्क हुआ करता था। वर्माजी टेनिस, ब्रिज, शतरंज आदि के अच्छे खिलाड़ी थे। जिले के तत्कालीन कलेक्टर 'भटकाकर' से उनका सम्पर्क हो चुका था। भटकांकर के निजी पुस्तकालय में एक दिन वर्माजी को अनातोले फ्रास की 'थापा' का अग्रेजी अनुवाद देखने को मिला उसे पढ़कर उन्हें पाप और पुण्य की समस्या पर एक उपन्यास लिखने की प्रेरणा मिली एक दिन सूने दफ्तर में बैठे-बैठे उन्होंने चित्रलेखा की शुरुआत कर दी। इसी समय वर्माजी ने उज्जैन के एक उद्योगपति श्री लालचंद सेठी के प्राइवेट सेक्रेटरी के पद के लिये आवेदन किया। वर्माजी उज्जैन में काव्य-पाठ भी कर चुके थे और प्रशसा-प्राप्ति भी अत उनकी नियुक्ति हो गयी और वे श्री सेठी के निजी सचिव के रूप में उज्जैन पहुँच गये। वहाँ रहने की उत्तम-व्यवस्था के साथ दो सौ पचास रूपये मासिक वेतन निश्चित हुआ और काम मिला-- श्री सेठी को प्रतिदिन अखबार के महत्वपूर्ण अंश सुनाना व उनकी निजी डाक के लिये उत्तर तैयार करना। सेठ की इस नौकरी में कोई सार्थकता न देखकर उन्होंने एक सप्ताह में ही त्यागपत्र दे दिया। हमीरपुर जाने के लिये इलाहाबाद होकर निकलना आवश्यक नहीं है फिर भी वर्मा जी ने यात्रा के अवसर का लाभ उठाते हुए इलाहाबाद के मार्ग से हमीरपुर पहुँचने का निश्चय किया। इलाहाबाद में भगवतीबाबू की भेंट कवि श्री जगदम्बा प्रसाद मिश्र 'हितैषी' से हुई। हितैषी जी के साथ वर्माजी प्रतापगढ की कालाकाकर रियासत में सुमित्रानन्दन पंत के पास पहुँचे वहाँ कुछ दिन रहकर भदरी रियासत गए जहाँ उनका स्वागत आत्मीयता के साथ हुआ। रात्रि में हितैषीजी ने काव्य-पाठ किया और वर्माजी ने काव्य-पाठ के स्थान पर 'चित्रलेखा' की अधूरी पाडुलिपि के कुछ अध्याय सुनाये। उससे प्रभावित होकर राजा साहब ने अपनी रियासत के मुकदमों का काम वर्माजी को सौंपने का आश्वासन दिया। जनवरी, १९३२ में वर्माजी हमीरपुर छोड़कर सपरिवार वकालत करने के लिये प्रतापगढ़ आ गये। प्रतापगढ़ में भी वर्माजी की वकालत नहीं चली उनके रहने का खर्च भदरी राज से निकल आता था परन्तु रिसायत के मुकदमें उन्हें नहीं मिली। पत्नी उमा की बीमारी समाप्त नहीं हुई थी रियासत से मुकदमों की माग करने पर उन्हें भदरी बुलाया गया- एक प्रकार से मैनेजर के प्रशिक्षण के लिये। फलत' अपने परिवार छोटे भाई के पास इलाहाबाद छोड़कर वे भदरी चले गये। भदरी में भी वर्माजी को कोई काम नहीं दिया गया परन्तु साहित्य-सृजन का कार्य अवश्य चलता रहा अत उन्होंने कुछ महीने वहाँ बिताये। राजा साहब भदरी राष्ट्रवादी थे और मालवीयजी के सहयोगियों में से एक थे। उनके साथ वर्माजी ने बम्बई की यात्रा की और उन्हीं के साथ यरवदा जेल में महात्मा गांधी से मिले। गांधी से उन्होंने मालवीयजी के लिये सांकेतिक भाषा में १९३२ के आन्दोलन को रोकने या आगे बढ़ाने के विषय में निर्देश प्राप्त किये-- आन्दोलन शिथिल पड़ने के कारण महात्माजी का निर्देश था अगर जनता की रुचि उसमें न हो तो उसे बंद कर दिया जाय। वहाँ से लौटने पर वर्माजी ने राजासाहब से पुन. कुछ काम देने की माग की परन्तु उन्हें कोई भी काम नहीं दिया गया अतः उन्होंने दूसरे ही दिन सद्भावना के वातावरण में राजा साहब से विदाई ली और वापस इलाहाबाद चले आये।

इलाहाबाद में वर्माजी ने पुराणों और दूसरे धार्मिक ग्रथों के उत्कृष्ट और पुस्तकालय सस्करण प्रकाशित करने की योजना बनायी। पुराणों के सम्पादन और हिन्दी अनुवाद कार्य के लिये उन्हें श्री चन्द्रशेखर शास्त्री के सहायोग का आश्वासन प्राप्त था। राजा साहब भदरी ने इस योजना में आर्थिक सहयोग दिया। वर्माजी ने पर्याप्त मात्रा में कीमती कागज खरीदा और इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस से ग्रथों के प्रकाशन की व्यवस्था कर ली परन्तु शास्त्रीजी अपना वायदा पूरा नहीं कर पाये और इस योजना को

बीच ही में छोड देना पड़ा। इसी समय कृष्णकात मालवीय के साथ वर्मा जी की मुलाकात आनन्दभवन में सरोजिनी नायडू से हुई। श्रीमती नायडू और पडित नेहरू को उन्होंने अपनी कविताएं सुनायी और प्रशसा अर्जित की। उन्हीं दिनों कवि नरेन्द्र शर्मा से वर्माजी का सम्पर्क और घनिष्ठ हुआ। इन दिनों वर्मा जी 'बेकार' थे अत: उन्होंने 'हिन्दुस्तानी अकादमी' की पुस्तकों के विक्रेता का काम करना शुरु कर दिया परन्तु अपने खर्च पर कई जगह दौरा करने पर भी उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। पत्नी की हालत बिगड़ती जा रही थी, अतत १९३३ में उमाजी का देहात हो गया। अबतक वर्माजी की तीन सतानें हो चुकी थी- शकुन्तला और दो पुत्र- अभय और विजय। उनकी माता ने बच्चों का भार किसी तरह सँभाल लिया। वर्ष भर के बाद परिवार की व्यवस्था की दृष्टि और भावात्मक स्तर पर स्वय को बचाने के लिये उन्होंने गिरिजा नाम की कन्या से विवाह किया जो इलाहाबाद के ही एक परिवार की थी। जीविकोपार्जन के क्षेत्र में लगातार लडखड़ाने के बावजूद वे साहित्यिक क्षेत्र में सुदृढ़ता प्राप्त करते जा रहे थे अब तक उनकी अनेक कविताएं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी थी और छायावाद युग के एक नवोदित कवि के रूप में उनकी प्रतिष्ठा बन चुकी थी। सन् १९३२ में काव्यसग्रह 'मधुकण' छपा और १९३४ में 'चित्रलेखा' के प्रकाशन के साथ उनकी साहित्यिक स्थिति में एक नया मोड़ आया। 'चित्रलेखा' के कारण ही वर्माजी की आर्थिक स्थिति बदली और उन्हें नये-नये काम मिलने लगे। वकालत चला सकने के गुण वर्माजी में नहीं थे अत उनके व्यवसायिक जीवन से वकील का रूप सदा के लिये तिरोहित हो गया और वे पूर्णत. साहित्य पर निर्भर हो गये। जीविका के लिये उन्होंने कई काम किये परन्तु उनका स्वभाव हर जगह आडे आया-- किसी के आगे नहीं झुकना, दान नहीं लेना, जी-हजूरी नहीं करना- स्वभाव की इन प्रवृत्तियों के कारण वे कहीं नही टिक सके। सरदार नर्मदा सिंह से उनके सम्बन्ध इसी कारण बिगड़े-- आदर्श बीमा कम्पनी के मासिक सरदार नर्मदा सिह ने उन्हें सचिव पद पर नियुक्त किया परन्तु कुछ दिनों बाद उन्हें लगा कि नर्मदा सिह उन्हें साहित्यकार न मानकर सिर्फ अपना नौकर मानते हैं अत स्वय को अपमानित मानकर उन्होंने अपना इस्तीफा दे दिया।

सन् १९३५ में भगवती बाबू हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के मंत्री चुने गये। सन् ३७ तक उनके तीन उपन्यास ('पतन', 'चित्रलेखा', और 'तीन वर्ष') दो कविता-संग्रह ('मधुकण' और 'प्रेम सगीत') तथा दो कहानी-सग्रह ('इन्स्टालमेण्ट'और 'दो बॉके') प्रकाशित हो चुके थे। इस समय वे साहित्य जगत में बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न रचनाकार के रूप में स्थापित हो चुके थे। उनकी इस प्रतिष्ठा से आकर्षित होकर फिल्म कार्पोरेशन, कलकत्ता नामक एक नयी संस्था के सचालक श्री रामेश्वर शर्मा का उन्हें आमत्रण मिला और वे कार्पोरेशन के कहानीकार और सवाद लेखक बनकर कलकत्ता चले गये परन्तु एक साल के अन्दर ही त्याग-पत्र देकर इलाहाबाद चले आये। कलकत्ता में एक वर्ष बिताने का भगवतीबाबू को यह लाभ अवश्य हुआ कि फिल्म कार्पोरेशन द्वारा 'चित्रलेखा' पर फिल्म बनाने का प्रस्ताव भी उनके सामने आया-- १९४० में श्री केदार शर्मा के निर्देशन में 'चित्रलेखा' पर फिल्म बनी। इसके लिये भगवतीबाबू को एक हजार रूपये फीस के रूप में प्राप्त हुये। फिल्म-कार्पोरेशन से लौटने के बाद भगवती बाबू ने पुन. एक प्रकाशन सस्थान स्थापित करने की चेष्टा की और उसके निर्देशकों में राजा साहब भदरी व बाबू राजेन्द्र प्रसाद का नाम शामिल करने की स्वीकृति मांगी परन्तु यह योजना कार्यान्वित नहीं हो पायी। १९३९ में बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' के साथ उन्होंने त्रिपुरी कांग्रेस अधिवेशन में भी भाग लिया बाद में १९४२ में काग्रेस की कार्यकारिणी की जो बैठक बम्बई में हुई उसमें भी वे 'नवीन जी' के साथ दर्शक की हैसियत से शामिल हुये, इसी बैठक में 'भारत-छोड़ो' प्रस्ताव पारित किया गया। त्रिपुरी काग्रेस अधिवेशन के बाद वे पुन- कलकत्ता चले गये और वहाँ से उन्होंने 'विचार' नामक निकालने की योजना बनायी यह साप्ताहिक लगभग डेढ़ वर्ष तक प्रभावशाली

ढग से निकला-- वर्माजी इस पत्र के सम्पादक, सचालक, प्रकाशक और मालिक होने के साथ ही लेखक भी थे। इसी दौरान उनकी दूसरी पत्नी का देहान्त भी हो गया और परिवार में दो पुत्रों की वृद्धि हो चुकी थी। मातृहीन सतानों के रख-रखाव की चिता 'विचार' के सम्पादन के साथ ही चल रही थी। इस पत्र में छपने वाली सामग्री मूलत साहित्यिक न थी- देश और समाज की विभिन्न स्थितियों पर भी इनकी दृष्टि रहती थी। इ.। पत्र के प्रकाशन के लिये वर्माजी ने लक्ष्मीदास बिड़ला की सहायता से एक छोटा सा प्रेस भी स्थापित कर लिया था। पत्र नियमिति रूप से निकल रहा था और पत्रकारिता के क्षेत्र में उसके स्थापित होने की सम्भावना भी थी परन्तु उसे चलाना दुष्कर कार्य था अत जब १६४२ में बाम्बे टाकीज में उन्हें सवाद लेखक के रूप में कार्य करने का अवसर मिला तो वे प्रेस और 'विचार' का प्रकाशन छोड़कर बम्बई चले गये। भगवतीबाबू के बम्बई पहुँचते ही कलकत्ता में एक बम गिरने से भगदड़ मच गयी और इस भगदड़ का लाभ उठाकर उनके एक घनिष्ठ पारिवारिक मित्र ने 'विचार' प्रेस ही बेच डाला। प्रेस में लक्ष्मी निवास बिडला ने चार हजार रूपये लगाये थे अत अपने एक मित्र से डेढ़ हजार रूपये कर्ज लेकर वर्माजी ने बिड़लाजी को देना चाहा परन्तु उन्होंने उस रकम का बट्टा-खाता कर दिया।

कलकत्ता प्रवास के अन्तिम दिनों में वर्माजी की घनिष्ठता नन्दिता नामक महिला से हुई। परिवार की दारुण यत्रणाओं से त्रस्त नन्दिता को इन्होंने सरक्षण प्रदान किया। अत बम्बई पहुँचकर वे वर्माजी की तीसरी विवाहिता पत्नी बनी तब कुछ बच्चे उनके साथ बम्बई में आकर रहने लगे और शेष इलाहाबाद में चाचा के संरक्षण में पढ़ते रहे। बम्बई में वर्माजी का संघर्ष नये ढंग से प्रारंभ हुआ- बाम्बे टाकीज में ये कहानी और सवाद लेखक की हैसियत से काम करने लगे। इस टाकीज के गीतकार प्रदीप 'फिल्मिस्थान' सस्था में चले गये थे अत वर्माजी गीतकार की हैसियत से श्री नरेन्द्रशर्मा को ले आये। बाम्बे टाकीज की स्वामिनी देविकारानी थी परन्तु उसकी समस्त व्यवस्था उनके एक विशेष कृपापात्र के हाथ में थी जिनका नाम था अमिय चक्रवर्ती। देविकारानी पर वर्माजी का प्रभाव श्री अमिय को अच्छा नहीं लगता था वे इन्हें नीचा दिखाने के लिये मौका तलाश कर रहे थे। एक दिन नरेन्द्र शर्मा ने इनके द्वारा लिखे गये संवाद का रूप बदल दिया और चक्रवर्ती ने उस बदले हुए रूप को ही स्वीकार किया। वर्माजी बुरी तरह तिलमिला उठे और वहाँ से उठते ही देविकारानी को अपना त्यागपत्र दे दिया। बाम्बे टाकीज के साथ उनका तीन वर्ष का कान्ट्रेक्ट था। उसे पूरा होने में छ महीने बाकी थे। अत उन्होंने छ. महीने की अवैतनिक छुट्टी ले ली। इसी समय इन्होंने 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' उपन्यास पूरा किया और दूसरे उपन्यास 'भूले-बिसरे चित्र' का प्रथम परिच्छेद लिखकर इस उपन्यास की नींव डाली। बाम्बे टाकीज से वर्माजी के अलग होने के कुछ दिनों बाद बाम्बे टाकीज टूट गयी और वे पुनः साहित्यिक क्षेत्र में आ गये। कविता लेखन से अपने साहित्यिक जीवन का प्रारभ करने वाले भगवतीबाबू का रुझान गद्य की ओर होता गया इसका कारण स्पष्ट करते हुए वर्माजी लिखते हैं-- "कविता केवल शौक की ही चीज बन सकती है, वह सिवा कवि-सम्मेलनों के और कहीं बिकती नहीं और इसलिए मैंने कहानी एव उपन्यास में ही अपनी गति देखी।"[1] किसी भी कार्य की प्रेरणा के पीछे आजीविका प्रमुख होती है। और उसका रूप है-- अर्थ। इस सत्य को अपने स्पष्टवादी स्वभाव के कारण वर्माजी ने अपने मित्रों के बीच स्वीकारा भी है। सन् १६६८ में पटौदी हाउस में नागर जी और इलाचन्द्र जोशी के साथ हुए इस वार्तालाप में इस बात की ओर सकेत करते हुए उन्होंने कहा-- "मैं तो जीविका के लिए लिखता हूँ, इस बारे में मैं स्पष्ट हूँ और साहित्य का पता तो चलता है कि लोग उसे कितना पढ़ते हैं।"[2] विशुद्ध साहित्य

१- भगवतीचरण वर्मा- (एक स्वर) -- कुसुम वार्ष्णेय, पृ० २

२ सारिका (१६ जनवरी १६७६ सेव अक्स्थी पृ० ५४

द्वारा आजीविका की समस्या हल होने के कारण इन्होंने इधर-उधर छिट-पुट काम किये। भगवतीबाबू बम्बई में प्रेस का काम जमाना चाहते थे उसी समय देश के आजाद होने पर लखनऊ से एसोशिएटेड जनर्ल्स के तत्वावधान में हिन्दी के 'नवजीवन' नामक दैनिक-पत्र का सम्पादन-कार्य वर्माजी को सौपा गया और इस प्रकार वे बम्बई छोडकर लखनऊ आ गये। इस नियुक्ति के पीछे इनके चचेरे भाई श्री ओंकारनाथ वर्मा और श्री ज्ञानस्वरूप भटनागर का हाथ था जो इसी संस्था में काम करते थे। उस समय एसोशिएटेड जनर्ल्स के सर्वेसर्वा श्री फीरोज गाधी थे और दिल्ली में श्री रफी अहमद किदवई इसके प्रमुख थे। एसोशिएटेड जनर्ल्स का सूत्रपात पंडित जवाहरलाल नेहरू ने किया था और इस सगठन से निकलने वाले पत्र मुख्यत काग्रेस (इडियन नेशनल काग्रेस) की नीतियों के पोषक थे। उस समय उत्तर प्रदेश की कांग्रेस दो खेमों में बटी थी जिनमें एक का नेतृत्व उत्तर प्रदेश के मुख्यमत्री श्री गोविन्द बल्लभ पत कर रहे थे और दूसरे का दिल्ली से श्री रफी अहमद किदवई- इन दोनों नेताओं में अदरुनी मतभेद थे परिणामस्वरूप उत्तर प्रदेश में पत द्वारा सचालित नीतियों को नवजीवन का समर्थन प्राप्त हुआ जो रफी अहमद के विपरीत सिद्ध हुआ। इसी कारण एक वर्ष के अन्दर ही उन्होंने नवजीवन के सम्पादक-पद से इस्तीफा दे दिया-- ऐसा लगता है उनकी घुमक्कड़ी और साहसी प्रवृत्ति जीवन में आये प्रत्येक मोड़ पर ठहरकर निरीक्षण करती थी उसके बाद वहॉ बसेरा करने का निश्चय करती थी। अपनी रुचि के प्रतिकूल काम इन्होंने कभी नहीं किया।

इस समय तक वर्माजी उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे-- इसबात का अनुभव करते हुए वर्माजी लिखते हैं-- "सन् १९४८ में 'नवजीवन' के प्रधान सम्पादक की हैसियत से मैं बम्बई से अपने प्रदेश की राजधानी लखनऊ वापस लौटा और तब मैंने देखा कि हिन्दी साहित्य का संसार यह भूल चुका है कि मैं कवि हूँ। केवल उपन्यासकार के रूप में लोग मुझे जानते हैं।"[१] नवजीवन से इस्तीफा दे देने पर इनके सामने पुन बम्बई जाने की मजबूरी पैदा हो गयी। गोविन्द बल्लभ पत को इस स्थिति का आभास था। उन दिनों जमींदारी उन्मूलन के सम्बन्ध में भारी प्रचार कार्य हो रहा था। जमींदारी उन्मूलन विधेयक के लिए एक प्रचार इकाई मुख्यमत्री कार्यालय में ही खुल गयी थी। पंतजी ने वर्माजी को आठ सौ रूपये महीने पर छ. माह के लिये इस प्रचार इकाई का प्रचार-मत्री नियुक्त कर दिया। ब्रिटिश शासन के अंतिम चरण में रेडियों में भाषा-नीति को लेकर कुछ कदम उठाये गये। आल इण्डिया-रेडियों का नाम 'आकाशवाणी' कर दिया गया-- यह परिवर्तन नाम भर का न था, उन दिनों पडित अमरनाथ झा साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष थे, श्री रंगनाथ दिवाकर प्रथम सूचनामत्री थे- झा और दिवाकरजी ने मिलकर तय किया कि हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार को रेडिया में सलाहकार के रूप में नियुक्त किया जाना चाहिये। इस श्रृखला की प्रथम कड़ी बने-सुमित्रानन्दन पंत। इलाहाबाद में पतजी की हिन्दी सलाहकार के रूप में नियुक्ति हुई। सन् १९५० में वर्माजी का पाचवा उपन्यास 'आखिरी दाव' छपा।

आकाशवाणी में भगवतीबाबू १९५७ तक रहे। सात वर्ष तक रेडियो से सम्बद्ध रहने के कारण उन्हें कई साहित्यिक प्रतिभाओं और मित्रों का सान्निध्य मिला। १९५३ से १९५५ तक सूचना और प्रसारण विभाग में डा० केसर के मंत्रित्वकाल में आकाशवाणी, दिल्ली में वे सुगम सगीत के प्रोड्यूसर की हैसियत से कार्य करते रहे। दिल्ली में वर्माजी को पुराने मित्र बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का सान्निध्य भी प्राप्त होता रहा। मैथिलीशरण गुप्त और श्री रामधारी सिंह 'दिनकर' भी राज्यसभा के सदस्य के रूप में दिल्ली में ही थे। १९५५ में वर्माजी साहित्य के प्रोड्यूसर की हैसियत से लखनऊ वापस आ गये। रेडियो की नौकरी साहित्य-सृजन में बाधक बन रही थी और पुस्तकों की रायल्टी अब ठीक-ठाक मिलने लगी थी। अतः वर्माजी ने १९५७ में आकाशवाणी से त्याग-पत्र दे दिया। लखनऊ रेडियो स्टेशन

१- वर्मा (एक स्वर) कुसुम वार्ष्णेय पृ० ३

पर इलाचंद्र जोशी की नियुक्ति हो गई। रेडियो की नौकरी से इस्तीफा देने के बाद १९५७ से १९७३ तक का समय वर्माजी के साहित्यिक लेखन के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहा। इस अवधि में उन्होंने 'भूले-बिसरे चित्र' (१९५९), 'सीधी-सच्ची बातें' (१९६८) और 'प्रश्न और मरीचिका' (१९७३) जैसे वृहत उपन्यास पूरे किये। जीवन के अन्तिम दशक में वर्माजी ने कई मनोरजक कहानियाँ लिखी। आकाशवाणी की नौकरी के दौरान कुछ कविताओं के अतिरिक्त 'कर्ण', 'द्रोपदी' आदि काव्य-नाटक भी लिखे। कविता में एक आत्मकथात्मक प्रबंध भी लिखना प्रारंभ किया। लेखन की जिस उत्कट लालसा को वे आर्थिक कठिनाइयों के कारण पूरा नहीं कर पाये थे, उसे वे पूरा कर लेना चाहते थे। १९६१ में 'भूले-बिसरे-चित्र' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ। सन् १९५४ में 'अपने खिलौने' उपन्यास की रचना की। वर्माजी का कथाकार वाला एक और रूप है-- छोटी कहानी को वृहत् रूप देने का। 'वह फिर नहीं आई' उपन्यास तथा 'पैसा तुम्हें खा गया' नाटक इस क्षमता के परिचायक हैं। उपर्युक्त उपन्यास तथा नाटक पहले कहानी रूप में ही थे। इसमें वर्माजी ने विषय और भाव-परिवर्तन न करके रुप-विधान परिवर्तित किया है। 'भूले-बिसरे चित्र' उपन्यास के बाद 'वह फिर नहीं आई' उपन्यास लिखा जिसका उनकी कमजोर कृतियों में शुमार किया जाता है। १९६२ में प्रकाशित उपन्यास 'सामर्थ्य और सीमा' पूर्णरुपेण नियतिवाद का पाठ पढ़ता है। वर्माजी नियति पर बहुत विश्वास करते थे, जीवन के विकास में परिस्थितियों का योगदान उनके जीवन का अनुभूत सत्य था-- "मैं नियतिवादी हूँ और मेरे नियतिवादी होने के सुस्पष्ट कारण भी हैं। मैं जो कुछ हूँ, परिस्थितियों ने मुझे यह बनाया है। और यह परिस्थितियाँ मेरे हाथ में नहीं थी। एक मध्यवर्गीय परिवार में मेरा जन्म हुआ जिसकी निजी मान्यताएँ थीं, परम्पराएँ थीं और उसके अपने निजी संस्कार थे। यह परम्पराएँ, मान्यताएँ और सस्कार मेरे अविच्छिन्न अंग हैं। फिर मुझे जन्म से ही कुछ प्रवृत्तियाँ मिली और उन परिस्थितियों में जिनमें मैं बिना अपने प्रयत्न के या अपनी इच्छा के पड़ गया था, मेरी उन प्रवृत्तियों का विकास हुआ, मुझे एक ऐसा अहं मिला जो किसी के आगे झुक न सकता था और उसने मुझे जीवन-भर सघर्षों में रत रक्खा।"[1]

वर्माजी ने अपने जीवन में कठिन आर्थिक समस्याओं का सामना किया था, जीविकोपार्जन के लिए जगह-जगह भटके थे। इसी कारण उनके उपन्यासों में नियतिवाद के प्रति अटूट आस्था किसी न किसी रूप में विद्यमान है। एक समीक्षक ने तो यहाँ तक कह डाला है कि-- "भगवती बाबू भाग्यवादी हैं, बल्कि भाग्यवादियों में भाग्यवादी हैं। . . नियतिवादी होना भगवती बाबू की नियति है। कौन जाने वही सही हों।"[2] इसी दशक में 'थके पॉव', 'रेखा', 'सीधी सच्ची बातें' और 'सबहिं नचावत राम गोसाई'- जैसे उपन्यासों का सृजन हुआ। इस शृखला का अन्तिम महत्वपूर्ण उपन्यास 'प्रश्न और मरीचिका' १९७३ में प्रकाशित हुआ। जीवन के अन्तिम और आठवें दशक में भी वर्माजी लेखन के क्षेत्र में अत्यन्त सक्रिय रहे हैं। सृजनात्मक स्तर पर इस अवधि में उनकी कृतियाँ पहले के लेखन के मुकाबले में ज्यादा आश्वस्त नहीं कर पाती हैं। ऐतिहासिक उपन्यास 'युवराज चूँडा' इनकी मृत्यु के पहले प्रकाशित हुआ और 'चाणक्य' मृत्यु के बाद। जीवन की सान्ध्य बेला में इन्होंने आत्मोपहास भाव से आत्मकथापरक उपन्यास 'धुप्पल' लिखा 'कहि न जाय का कहिए' इनके द्वारा लिखी गई आत्मकथा है जिसका प्रकाशन अभी तक नहीं हुआ है।

भगवतीचरण वर्मा जितने सफल उपन्यासकार हैं, उतने ही सक्षम कहानीकार भी हैं। उनमें कहानी गढ़ने की अद्भुत क्षमता है। इनके तीन कहानी-सग्रह बहुत पहले प्रकाशित हुए थे-- 'इन्स्टालमेंट',

---

१- भगवतीचरण वर्मा (एक स्वर) कुसुम वार्ष्णेय पृ० ४

२ वर्मा डॉ० श्रीमती) इन्दु शुक्ला पृ० ४२

द्वारा आजीविका की समस्या हल होने के कारण इन्होंने इधर-उधर छिट-पुट काम किये। भगवतीबाबू बम्बई में प्रेस का काम जमाना चाहते थे उसी समय देश के आजाद होने पर लखनऊ से एसोशिएटेड जनर्ल्स के तत्वावधान में हिन्दी के 'नवजीवन' नामक दैनिक-पत्र का सम्पादन-कार्य वर्माजी को सौपा गया और इस प्रकार वे बम्बई छोड़कर लखनऊ आ गये। इस नियुक्ति के पीछे इनके चचेरे भाई श्री ओंकारनाथ वर्मा और श्री ज्ञानस्वरूप भटनागर का हाथ था जो इसी सस्था में काम करते थे। उस समय एसोशिएटेड जनर्ल्स के सर्वेसर्वा श्री फीरोज गाधी थे और दिल्ली में श्री रफी अहमद किदवई इसके प्रमुख थे। एसोशिएटेड जनर्ल्स का सूत्रपात पडित जवाहरलाल नेहरू ने किया था और इस संगठन से निकलने वाले पत्र मुख्यत· काग्रेस (इडियन नेशनल काग्रेस) की नीतियों के पोषक थे। उस समय उत्तर प्रदेश की काग्रेस दो खेमों में बटी थी जिनमें एक का नेतृत्व उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री गोविन्द बल्लभ पत कर रहे थे और दूसरे का दिल्ली से श्री रफी अहमद किदवई- इन दोनों नेताओं में अदरुनी मतभेद थे परिणामस्वरूप उत्तर प्रदेश में पत द्वारा सचालित नीतियों को नवजीवन का समर्थन प्राप्त हुआ जो रफी अहमद के विपरीत सिद्ध हुआ। इसी कारण एक वर्ष के अन्दर ही उन्होंने नवजीवन के सम्पादक-पद से इस्तीफा दे दिया-- ऐसा लगता है उनकी घुमक्कड़ी और साहसी प्रवृत्ति जीवन में आये प्रत्येक मोड़ पर ठहरकर निरीक्षण करती थी उसके बाद वहाँ बसेरा करने का निश्चय करती थी। अपनी रुचि के प्रतिकूल काम इन्होंने कभी नहीं किया।

इस समय तक वर्माजी उपन्यासकार के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे-- इसबात का अनुभव करते हुए वर्माजी लिखते हैं-- "सन् १९४८ में 'नवजीवन' के प्रधान सम्पादक की हैसियत से मैं बम्बई से अपने प्रदेश की राजधानी लखनऊ वापस लौटा और तब मैंने देखा कि हिन्दी साहित्य का संसार यह भूल चुका है कि मैं कवि हूँ। केवल उपन्यासकार के रूप में लोग मुझे जानते हैं।"[1] नवजीवन से इस्तीफा दे देने पर इनके सामने पुन बम्बई जाने की मजबूरी पैदा हो गयी। गोविन्द बल्लभ पत को इस स्थिति का आभास था। उन दिनों जमींदारी उन्मूलन के सम्बन्ध में भारी प्रचार कार्य हो रहा था। जमींदारी उन्मूलन विधेयक के लिए एक प्रचार इकाई मुख्यमत्री कार्यालय में ही खुल गयी थी। पंतजी ने वर्माजी को आठ सौ रूपये महीने पर छ· माह के लिये इस प्रचार इकाई का प्रचार-मंत्री नियुक्त कर दिया। ब्रिटिश शासन के अतिम चरण में रेडियो में भाषा-नीति को लेकर कुछ कदम उठाये गये। आल इण्डिया-रेडियो का नाम 'आकाशवाणी' कर दिया गया-- यह परिवर्तन नाम भर का न था, उन दिनों पंडित अमरनाथ झा साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष थे, श्री रंगनाथ दिवाकर प्रथम सूचनामंत्री थे- झा और दिवाकरजी ने मिलकर तय किया कि हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार को रेडिया में सलाहकार के रूप में नियुक्त किया जाना चाहिये। इस श्रृखला की प्रथम कड़ी बने-सुमित्रानन्दन पत। इलाहाबाद में पंतजी की हिन्दी सलाहकार के रूप में नियुक्ति हुई। सन् १९५० में वर्माजी का पाचवा उपन्यास 'आखिरी दाव' छपा।

आकाशवाणी में भगवतीबाबू १९५७ तक रहे। सात वर्ष तक रेडियो से सम्बद्ध रहने के कारण उन्हें कई साहित्यिक प्रतिभाओं और मित्रों का सान्निध्य मिला। १९५३ से १९५५ तक सूचना और प्रसारण विभाग में डा० केसर के मंत्रित्वकाल में आकाशवाणी, दिल्ली में वे सुगम सगीत के प्रोड्यूसर की हैसियत से कार्य करते रहे। दिल्ली में वर्माजी को पुराने मित्र बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' का सान्निध्य भी प्राप्त होता रहा। मैथिलीशरण गुप्त और श्री रामधारी सिह 'दिनकर' भी राज्यसभा के सदस्य के रूप में दिल्ली में ही थे। १९५५ में वर्माजी साहित्य के प्रोड्यूसर की हैसियत से लखनऊ वापस आ गये। रेडियो की नौकरी साहित्य-सृजन में बाधक बन रही थी और पुस्तकों की रायल्टी अब ठीक-ठाक मिलने लगी थी। अतः वर्माजी ने १९५७ में आकाशवाणी से त्याग-पत्र दे दिया। लखनऊ रेडियो स्टेशन

१- वर्मा (एक स्वर) कुसुम वार्ष्णेय पृ० ३

पर इलाचद्र जोशी की नियुक्ति हो गई। रेडियो की नौकरी से इस्तीफा देने के बाद १९५७ से १९७३ तक का समय वर्माजी के साहित्यिक लेखन के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण रहा। इस अवधि में उन्होंने 'भूले-बिसरे चित्र' (१९५९), 'सीधी-सच्ची बाते' (१९६८) और 'प्रश्न और मरीचिका' (१९७३) जैसे वृहत उपन्यास पूरे किये। जीवन के अन्तिम दशक में वर्माजी ने कई मनोरजक कहानियाँ लिखी। आकाशवाणी की नौकरी के दौरान कुछ कविताओं के अतिरिक्त 'कर्ण', 'द्रोपदी' आदि काव्य-नाटक भी लिखे। कविता में एक आत्मकथात्मक प्रबंध भी लिखना प्रारभ किया। लेखन की जिस उत्कट लालसा को वे आर्थिक कठिनाइयों के कारण पूरा नहीं कर पाये थे, उसे वे पूरा कर लेना चाहते थे। १९६१ में 'भूले-बिसरे-चित्र' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ। सन् १९५४ में 'अपने खिलौने' उपन्यास की रचना की। वर्माजी का कथाकार वाला एक और रूप है-- छोटी कहानी को वृहत् रूप देने का। 'वह फिर नहीं आई' उपन्यास तथा 'पैसा तुम्हें खा गया' नाटक इस क्षमता के परिचायक हैं। उपर्युक्त उपन्यास तथा नाटक पहले कहानी रूप में ही थे। इसमें वर्माजी ने विषय और भाव-परिवर्तन न करके रुप-विधान परिवर्तित किया है। 'भूले-बिसरे चित्र' उपन्यास के बाद 'वह फिर नहीं आई' उपन्यास लिखा जिसका उनकी कमजोर कृतियों में शुमार किया जाता है। १९६२ में प्रकाशित उपन्यास 'सामर्थ्य और सीमा' पूर्णरुपेण नियतिवाद का पाठ पढ़ता है। वर्माजी नियति पर बहुत विश्वास करते थे, जीवन के विकास में परिस्थितियों का योगदान उनके जीवन का अनुभूत सत्य था-- "मैं नियतिवादी हूँ और मेरे नियतिवादी होने के सुस्पष्ट कारण भी हैं। मैं जो कुछ हूँ, परिस्थितियों ने मुझे यह बनाया है। और यह परिस्थितियाँ मेरे हाथ में नहीं थी। एक मध्यवर्गीय परिवार में मेरा जन्म हुआ जिसकी निजी मान्यताएँ थीं, परम्पराएँ थीं और उसके अपने निजी सस्कार थे। यह परम्पराएँ, मान्यताएँ और सस्कार मेरे अविच्छिन्न अंग हैं। फिर मुझे जन्म से ही कुछ प्रवृत्तियाँ मिली और उन परिस्थितियों में जिनमें मैं बिना अपने प्रयत्न के या अपनी इच्छा के पड़ गया था, मेरी उन प्रवृत्तियों का विकास हुआ, मुझे एक ऐसा अहं मिला जो किसी के आगे झुक न सकता था और उसने मुझे जीवन-भर सघर्षों में रत रक्खा।"[1]

वर्माजी ने अपने जीवन में कठिन आर्थिक समस्याओं का सामना किया था, जीविकोपार्जन के लिए जगह-जगह भटके थे। इसी कारण उनके उपन्यासों में नियतिवाद के प्रति अटूट आस्था किसी न किसी रूप में विद्यमान है। एक समीक्षक ने तो यहाँ तक कह डाला है कि-- "भगवती बाबू भाग्यवादी हैं, बल्कि भाग्यवादियों में भाग्यवादी हैं। . नियतिवादी होना भगवती बाबू की नियति है। कौन जाने वही सही हों।"[2] इसी दशक में 'थके पॉव', 'रेखा', 'सीधी सच्ची बातें' और 'सबहि नचावत राम गोसाई'- जैसे उपन्यासों का सृजन हुआ। इस शृखला का अन्तिम महत्वपूर्ण उपन्यास 'प्रश्न और मरीचिका' १९७३ में प्रकाशित हुआ। जीवन के अन्तिम और आठवें दशक में भी वर्माजी लेखन के क्षेत्र में अत्यन्त सक्रिय रहे हैं। सृजनात्मक स्तर पर इस अवधि में उनकी कृतियाँ पहले के लेखन के मुकाबले में ज्यादा आश्वस्त नहीं कर पाती हैं। ऐतिहासिक उपन्यास 'युवराज चूँडा' इनकी मृत्यु के पहले प्रकाशित हुआ और 'चाणक्य' मृत्यु के बाद। जीवन की सान्ध्य बेला में इन्होंने आत्मोपहास भाव से आत्मकथापरक उपन्यास 'धुप्पल' लिखा 'कहि न जाय का कहिए' इनके द्वारा लिखी गई आत्मकथा है जिसका प्रकाशन अभी तक नहीं हुआ है।

भगवतीचरण वर्मा जितने सफल उपन्यासकार हैं, उतने ही सक्षम कहानीकार भी हैं। उनमें कहानी गढ़ने की अद्भुत क्षमता है। इनके तीन कहानी-संग्रह बहुत पहले प्रकाशित हुए थे– 'इन्स्टालमेंट',

---

१ भगवतीचरण वर्मा (एक स्वर) कुसुम वार्ष्णेय, पृ० ४।

२ वर्मा डॉ० श्रीमती) इन्दु शुक्ला पृ० ४३

'दो बाके' तथा 'राख और चिगारी' - इसके बाद वे उपन्यास ही लिखते रहे। सन् १९७१ में उन्होंने तीनों कहानी सग्रहों की कहानियॉ 'मेरी कहानियाँ' नामक कहानी-सग्रह में प्रकाशित करवाई। एक लम्बे अतराल के बाद कुछ कहानियाँ 'सारिका' (१९७४-७५) में प्रकाशित हुई। इसके अतिरिक्त 'त्याग और ग्रहण' नामक एक कहानी 'कादम्बिनी' (अप्रैल, १९८१) में प्रकाशित हुई। व्यावसायिक कारणों से वर्माजी का 'कहानीकार' पीछे छूट गया था और उपन्यासकार आगे निकल गया था- इस सदर्भ में उनका कहाना है-- 'मैं उपन्यास की विधा में अपने को अधिक सशक्त समर्थ पाता हूँ, कहानी की विधा मे उतना नहीं। लेकिन यह कहकर शायद मैं अर्द्धसत्य का दोषी बन रहा हूॅ क्योंकि कहानी मेरे अदर कला के द्वारा या साहित्य के द्वारा आजीविका उपार्जन का प्रश्न भी शायद है।''[1] एक निबधकार के रूप में उन्हें प्राय कम लोग जानते हैं। परन्तु इनके निबन्धों के माध्यम से ही इनकी सरल, पैनी एव बेलाग लेखनी का परिचय मिलता है। विचारक होने के कारण इनमें विषय के मर्मस्थल को पकड़ने की क्षमता विद्यमान है। 'विचार' पत्र के सम्पादनकाल में लिखे गए उनके सम्पादकीय लेख 'हमारी उलझन' निबध पुस्तिका में सग्रहीत है। 'साहित्य का स्रोत', 'भावना, बुद्धि और कर्म' जैसे गभीर, चिन्तनयुक्त विषयों के साथ इन्होंने 'बाबाबाजी', 'नेताबाली', एव 'साहित्यबाजी' जैसे मनोरजक एवं व्यंग्यपूर्ण निबध लिखकर अपनी बहुमुखी लेखन प्रतिभा का परिचय दिया। 'भावना बुद्धि और कर्म' निबंध के प्रारभ में वर्माजी ने यह स्वीकार किया है-- ''शास्त्रीय ज्ञान की पुस्तकें पढ़ने में मेरा मन नहीं लगता, देर तक सोचने विचारने में मुझे एक उलझन-सी होती है। अध्ययन और चितन-मनन से मै बहुत दूर रहा हूॅ। मैं तो केवल अपने अनुभवों पर स्थित हूॅ''[2] यह सत्य है कि वर्माजी ने गंभीर एव सैद्धान्ति विषयों पर विचार करते समय भी अपने व्यवहारिक ज्ञान और अनुभव को ही अधिक महत्व दिया है। इसी क्रम में इन्होंने 'नेता' की विशेषताओं का उल्लेख किया है-- ''नेतागिरी एक निहायत कलात्मक पेशा है जिसमें उपदेश, गुंडागर्दी और धोखाधड़ी तीनों ही बडी खूबी के साथ शामिल कर लिये गए हैं।''[3]

भगवतीबाबू के साहित्यिक जीवन के पर्यवेक्षण से एक बात स्पष्ट रूप से हमारे सामने आती हे कि उनका कृतित्व स्वान्त सुखाय होने के साथ ही जीविकोपार्जन का साधन भी रहा है। जगह-जगह रहने के कारण वे भिन्न-भिन्न स्वभाव के व्यक्तियों के सम्पर्क में आये। इसी कारण इनकी रचनाओं में निजी अनुभव और नवीन चित्रण शैली के दर्शन होते हैं। वर्माजी की सम्पूर्ण कथा-कृतियों का अध्ययन करने के उपरान्त इनके तीन रूप दिखाई पड़ते हैं-- तार्किक, व्यंग्यकार और कथाकार- पहला रूप उपन्यासों में विशेष रूप से 'चित्रलेखा', और 'सामर्थ्य और सीमा' में दिखाई पड़ता है। व्यंग्यकार रूप के दर्शन 'अपने खिलौने' नामक उपन्यास तथा कहानियों में विशेष रूप से होते हैं। कथाकार तो वे हैं ही क्योंकि उनका मूल उद्देश्य तो कथा कहना ही रहा है। इनके वे ही उपन्यास अधिक लोकप्रिय हुए हैं जिनमें कहानी वाला अश अधिक है।

भगवतीबाबू लगभग आधी शताब्दी तक रचना-कर्म में सक्रिय रहे। एक ओर उनका साहित्य निजी सवेदनाओं और अनुभवों के स्तर पर प्रखर हुआ है और दूसरी ओर ऐतिहासिक उतार-चढ़ावों की चुनौती का रचनात्मक स्तर पर क्षमतापूर्वक मुकाबला करता रहा है। इनते महत्वपूर्ण लेखन के बावजूद वर्माजी का स्वय अपने प्रति बड़ा ही अवज्ञापूर्ण रवैया रहा है। वे अपने सम्पूर्ण लेखन, कृतित्व और उपलब्धियो की सयोगमात्र मानते थे। उनकी नियतिवादी जीवन-दृष्टि का विकृत या परिष्कृत रूप

१- साहित्यकार भगवतीचरण वर्मा -- डॉ० (श्रीमती) इन्दु शुक्ला, पृ० १४।

२ साहित्य के सिद्धान्त तथा रूप भगवतीचरण वर्मा पृ० १०

३- वर्मा डॉ० श्रीमती) इन्दु शुक्ला पृ० २४

धुप्पल है। नियतिवादी दृष्टि से उनके मन में जो अवज्ञावाद 'पनपा', उपजा उसका परिणाम यह हुआ कि जीवनवृत्त लिखने के लिए आधुनिक लेखकों से सम्बन्धित जितनी सामग्री सामान्यतया मिल जाती है, उतनी वर्माजी के बारे में उपलब्ध नहीं है। वे अनावश्यक पत्राचार नहीं करते थे और स्वयं उनके पास जो पत्र आते थे, उन्हें सभालकर रखना भी उनकी दृष्टि में अनावश्यक था। उन्होंने कभी डायरी नहीं लिखी न ही नियमित सस्मरण लिखे। उनका अधिकांश जीवन भौतिक सघर्षों में बीता- आत्मदया से दूर रहने के कारण वे ऐसा कुछ नहीं रखना चाहते थे जो उनकी कठिनाइयो और व्यथाओं को विशेष महत्व देता जान पड़ता। वर्माजी के जीवनीकार के लिए ये कठिन खाइयॉ है। जीवन के अन्तिम दिनों में अपने विषय में इन्होंने दो कृतियाँ लिखकर छोड़ी है- पहली 'धुप्पल' और दूसरी 'कहि न जाय का कहिए' दूसरी आत्मकथा अधूरी है और अभी तक अप्रकाशित है। भगवतीचरण वर्मा नियतिवादी थे। इसके अतिरिक्त इनकी आस्था जीवन के स्वस्थ उपभोग में रही है। मनुष्य की प्राकृतिक और स्वाभाविक प्रवृत्तियों के अस्वाभाविक नियत्रण से असामाजिक तत्वों के उत्पन्न होने का भय रहता है। डा० नगेन्द्र ने उनके इसी दृष्टिकोण को लक्ष्य करते हुए लिखा है-- "भगवतीबाबू आस्तिक प्रवृत्तिवादी है। पीड़ा में उनका विश्वास नहीं। उनकी आस्था स्वस्थ उपभोग में है- अह के निषेध में नहीं, अह के परितोष में है।"[1] वर्माजी में अतिशय बौद्धिकता एव भावुकता का समन्वित रूप देखने को मिलता है-- ये दोनों ही बातें इनमें पराकाष्ठा पर पहुँची हुई थी। इनकी इन दुर्बलताओं से अतरंग मित्र या परिवार के लोग ही भिज्ञ हो पाते थे। अपने विषय में स्वय वर्माजी ने लिखा है-- "तुम में (वर्माजी में) एक तरह की उच्छृंखलता है, एक अजीब सी उद्दण्डता है और इसके साथ-साथ तुममें असयम भी है।"[2] वर्माजी के आलोचकों को प्राय शिकायत रही है कि साहित्यिक कर्म के विषय में इनकी अवधारणा हल्केपन की थी। इस धारणा को मजबूत करने में स्वय इन्हीं का हाथ रहा है। कुछ हद तक इनका वक्तव्य सही भी है। क्योंकि आरंभिक वर्षों में 'एक दिन' और बाद में 'युवराज चूडा' जैसी कृतियॉ भगवतीबाबू ने केवल आर्थिक दृष्टि से लिखी। परन्तु सच्चाई यह है कि लेखक अभिव्यक्ति की अनिवार्यता से प्रेरित हो या शुद्ध व्यवसायिकता से, अतत उसकी क्षमता, कुशलता और प्रतिभा ही विजयी होती है। 'मुगलों के सल्तनत बख़्श दी' 'प्रायश्चित' या 'दो बॉके' जैसी रचनाऍ केवल इनकी खिलदड़ी मुद्रा व्यक्त करती है। उनकी प्रवृत्तियों के अनुसार उनका जीवन मोड़ लेता गया अपनी प्रवृत्तियों के विरुद्ध किसी प्रकार का अवरोध इन्होनें उत्पन्न नहीं होने दिया। ऐसी स्थिति में एक प्रकार की लापरवाही निर्भीकता, उलझनों के प्रति उदासीनता, यथार्थ के प्रति सिनिसिज्म जैसी प्रवृत्तियॉ भगवती बाबू के स्वभाव का अग बन गयी। इन्हें अपने को बोहेमियन मानने का शौक था परन्तु व्यवहार और रहन-सहन में वे बड़े आत्मानुशासित और सुसयत थे। वे स्वय को निहायत उखड़े हुए किस्म का आदमी मानते थे। उनकी अपनी यह कविता जैसे स्वय उन्हीं के विषय में थी--

"हम दीवानों की क्या हस्ती,
हैं आज यहाँ कल वहाँ चलें,
मस्ती का आलम साथ चला
हम धूल उड़ाते जहाँ चले।"।[3]

१- काव्यचिन्तन -- डॉ० नगेन्द्र, पृ० ३५

२ साहित्यकार भगवतीचरण वर्मा -- डॉ० (श्रीमती) इन्दु शुक्ला पृ० २६

३- वर्मा श्रीलाल शुक्ल पृ० ८३

ये सुप्रसिद्ध पंक्तियाँ उस आरंभिक कविता की है, जो १६२८ में उन्होंने लिखी थी। सन् १६४२ में किशोर साहू की एक फिल्म 'राजा' में गीत के रूप में प्रयुक्त होने पर और भी लोकप्रिय हो चली थी।

भगवतीचरण वर्मा का व्यक्तित्व और कृतित्व कई अर्थों में जटिल है। उसके विश्लेषण के प्रयास इन्होंने स्वय किये हैं। परन्तु उनका विश्लेषण भी आवश्यक है। उन्होंने अपने विषय में लिखा है-- 'वैसे हमारा स्वभाव बड़े अक्खड़ किस्म का रहा है, और लोगों की दृष्टि में हम काफ़ी उद्धत और उग्र स्वभाव के हैं, लेकिन जीवन के भयानक सघर्षों में पग-पग पर असफलता तथा हार न मानकर लगातार संघर्ष करने वाली अपनी जीवनी शक्ति ने हमें एक प्रकार से भाग्यवादी या नियतिवादी बना दिया है .. "[१]

इनका सम्पूर्ण साहित्य विशेषत कथा साहित्य नियतिवाद के नाम पर मिलने वाली दृष्टि के कारण महत्वपूर्ण नहीं है। इनकी कृतियों में मौलिकता है, युग-परिवेश को उद्भासित करने का कौशल है। इसके अतिरिक्त- असाधारण पठनीयता के गुण के कारण भी इनका साहित्य लोकप्रिय और प्रासंगिक है।

इस प्रकार वर्माजी के कृति व्यक्तित्व के विश्लेषण से हम उसके निर्माण की वह प्रक्रिया जान सकते हैं जिसमें उनके जीवन संघर्ष की भूमिका है। इस जीवन संघर्ष के द्वारा न केवल उनका जीवन के प्रति दृष्टिकोण तय होता है अपितु उनकी रचनाशीलता में कथ्य, चरित्र या परिस्थिति आदि के निर्माण में भी इस जीवन संघर्ष और उससे प्राप्त अनुभवों की भूमिका है। उनकी रचनाओं में प्राप्त अनुभव लोक के वैविध्य का कारण उनके जीवन के उतार-चढाव भरे प्रसगों में है। वर्माजी एक ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने अपने कथा साहित्य में अपने जीवनानुभवों का भरपूर उपयोग किया है। यही कारण है कि उनके चरित्रों में प्रभावित करने वाली विश्वसनीयता मिलती है।

१- वर्मा श्रीलाल शुक्ल पृ० ५८

भगवतीचरण वर्मा की कथाकृतियाँ

उपन्यास के क्षेत्र में वर्माजी का आगमन 'पतन' के माध्यम से हुआ। इस उपन्यास के प्रकाशन के बाद वर्मा जी को उपन्यासकार के रूप में मान्यता मिली। इसके पूर्व ये कवि रूप में ही जाने जाते थे। 'कौशिक जी' के सम्पर्क से इनकी अभिरुचि गद्य की ओर हुई। इन्होंने १९२२-२३ में 'हिन्दी मनोरजन नामक पत्रिका में कुछ कहानियॉ लिखी, किन्तु आज ये कहानियॉ उपलब्ध नहीं है। वर्माजी ने कुल सत्रह उपन्यासों का सृजन किया-- 'पतन', 'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'आखिरी दॉव', 'अपने खिलौने', 'भूले-बिसरे चित्र', 'वह फिर नहीं आई', 'सामर्थ्य और सीमा', 'थके पॉव', 'रेखा', 'सीधी-सच्ची बातें', 'सबहिं नचावत राम गोसाई', 'प्रश्न और मरीचिका', 'युवराज चूडा', 'चाणक्य' और 'धुप्पल'। यद्यपि वर्माजी ने कहानी की अपेक्षा अधिक उपन्यासों की रचना की है। परन्तु अन्य कहानीकारों की तुलना में कम कहानियॉ लिखने पर भी इनकी कहानियॉ लोकप्रिय है-- यह लोकप्रियता इनके कहानी-लेखन के वैशिष्ट्य का प्रमाण है। प्रकाशित कहानी सग्रह इस प्रकार है– 'इन्स्टालमेंट (१९३५), 'दो बॉके' (१९३६), 'राख और चिगारी' (१९५०), 'मेरी कहानियॉ'(१९७१), 'मोर्चाबन्दी' (१९३६), 'प्रतिनिधि कहानियाँ' (१९८३) इनकी कुछ कहानियाँ 'सारिका' और 'कादम्बिनी' में प्रकाशित हुई।

'पतन' वर्माजी का प्रथम उपन्यास है। इस उपन्यास की कथा सन् १८५१ के कानपुर और लखनऊ से सबधित है। राजा श्यामसिह भरे दरबार में नवाब वाजिद अली शाह को सल्तनत की बिगड़ती हुई दशा के बारे में बताते हैं किन्तु सहृदय नवाब दोषी कर्मचारियों को नौकरी से नहीं निकालते। प्रतापसिंह ज्योतिषी के रूप में लखनऊ पहुॅचकर नवाब को शराब के गिलास में भविष्य दिखलाकर बताता है कि राज्य की जड़ों को खोदने वालों में वजीर अली नकी खॉ प्रमुख हैं। राज खुलने पर वजीर तथा अन्य कर्मचारी प्रतापसिह को जेल में बन्द कर देते हैं। परन्तु प्रतापसिंह किसी तरह जेल से भाग जाता है। 'पतन' की मुख्य कथा प्रतापसिंह, रणधीर सिंह और सुभद्रा से संबंधित है। रणधीर सिह प्रताप सिंह का पोष्य पुत्र है और प्रेम के क्षेत्र में प्रतिद्वन्द्वी भी। विलासी प्रतापसिह रणधीर सिह की प्रेमिका सुभद्रा को अपनी कुत्सित दृष्टि का शिकार बनाता है और षडयन्त्रपूर्वक नवाब की बेगम (गुलशन) बना देता है। रणधीर सिह की भेंट नवाब के महल में प्रताप सिंह और सुभद्रा दोनों से होती है। असलियत जानकर रणधीर प्रतापसिंह पर आक्रमण करता है परन्तु अपनी दैवी शक्ति के सहारे प्रतापसिंह बच जाता है। कुछ समय पश्चात् रणधीर, सुभद्रा को हरम से निकालने में सफल हो जाता है। सूचना मिलने पर प्रताप सिंह उनका पीछा करते हुए गगा किनारे पहुॅचता है। गंगा की धारा में मध्य सघर्ष के दौरान प्रतापसिह अपनी अमानुषिक शक्ति के सहारे नाव पलट देता है और तीनों को जलसमाधि लेनी पड़ती है। इस मुख्य कथा की सहायक बनकर आई है प्रकाशचन्द्र, भवानीशकर और सरस्वती की कथा। विलासी प्रतापसिह प्रकाशचन्द्र की पत्नी सरस्वती का शोषण करता है। पति की अकर्मण्यता से दु खी होकर सरस्वती भवानीशकर से प्रेम करने लगती है। परन्तु भवानीशंकर की पत्नी और उसके परिवार के हस्तक्षेप से मामला सुलझ जाता है। नाव पलटने से सरस्वती की गगा में डूबकर मृत्यु हो जाती है।

'चित्रलेखा' में कथा का आरभ महाप्रभु रत्नाम्बर के शिष्य श्वेताक के प्रश्न 'और पाप' के द्वारा होता है। गुरुदेव अपने शिष्यों की जिज्ञासा का समाधान उपदेश द्वारा न करके उन्हें स्वयं अनुभव कराने के उद्देश्य से संसार-सागर में तैरने के लिए छोड़ देते हैं क्षत्रिय होने के कारण श्वेतांक को एक

समृद्ध और युवा सामंत बीजगुप्त के सान्निध्य में भेजते हैं और विशालदेव को, जो कि ब्राह्मण है- योगी कुमारगिरि के पास भेजकर स्वयं साधना में लीन हो जाते हैं। उपर्युक्त समस्या के समाधान के लिए चित्रलेखा क्रमश दोनों के जीवन में आती है। अठारह वर्ष की आयु में चित्रलेखा विधवा हो गई थी परन्तु शीघ्र ही वह कृष्णादित्य नामक युवक के प्रति आसक्त हो जाती है। उसके ससर्ग से चित्रलेखा गर्भवती हो जाती है। दोनों समाज की उपेक्षा और अपमान का शिकार होते हैं। कृष्णादित्य अपमान न सह पाने के कारण आत्महत्या कर लेता है। कृष्णादित्य का पुत्र भी जन्म लेते ही चित्रलेखा का साथ छोड देता है। दुर्भाग्य से जूझती चित्रलेखा एक नर्तकी का आश्रय लेती है और नृत्य की शिक्षा प्राप्त करके पाटलिपुत्र की सर्वाधिक प्रसिद्ध नर्तकी बन जाती है। उसके पास आने वाले सामतों में एक सामन्त बीजगुप्त है। बीजगुप्त और कृष्णादित्य में पर्याप्य साम्य है अत. चित्रलेखा, बीजगुप्त की ओर आकृष्ट होती है। तब से शास्त्रानुसार विवाहित नहीं होते हुए भी दोनों पति-पत्नी की भाँति पवित्र जीवन व्यतीत करने लगते हैं। अचानक चित्रलेखा के जीवन में कुमारगिरि का आगमन नई हलचल उत्पन्न कर देता हैं। यशोधरा के जन्मोत्सव पर उसके पिता आर्य मृत्युंजय बीजगुप्त के सामने अपनी पुत्री के विवाह का प्रस्ताव रखते हैं। बीजगुप्त, चित्रलेखा से प्रेम होने के कारण इस विवाह-प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर पाता। परन्तु चित्रलेखा और योगी कुमारगिरि उससे विवाह के लिए आग्रह करते हैं। तदुपरांत दीक्षा लेने के लिए चित्रलेखा योगी कुमारगिरि के पास चली जाती है। इन सभी घटनाओं से निराश बीजगुप्त, यशोधरा की ओर आकर्षित होता है। कुमारगिरि इस सूचना का दुरुपयोग करता है और चित्रलेखा, कुमारगिरि के प्रति समर्पित होती है। परन्तु विशालदेव से वास्तविकता ज्ञात होने पर उसे अपने चारित्रिक पतन पर पछतावा होता है और वह अपने महल में लौटती है। श्वेताक और यशोधरा के प्रेम का पता चलने पर बीजगुप्त अपने विवाह को स्थगित कर देता है। अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति श्वेताक को सौंपकर यशोधरा और श्वेतांक का विवाह भी करवा देता है। बीजगुप्त सन्यासी के वेश में देशाटन के लिए प्रस्थान करने का निर्णय लेता है। उसी समय चित्रलेखा क्षमायाचना के लिए उसके पास पहुँचती है। बीजगुप्त चित्रलेखा को स्वीकार कर लेता है और दोनों पवित्र प्रेम के बन्धन में बँधकर भिखारी के रूप में देश-विदेश की यात्रा पर निकल पड़ते हैं। एक वर्ष उपरान्त महाप्रभु रत्नाम्बर शिष्यों के अनुभव के आधार पर श्वेताक की जिज्ञासा का समाधान करते हैं-- 'संसार में पाप कुछ भी नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दूसरा नाम है।''[१]

'तीन वर्ष' उपन्यास में एक निम्न मध्यवर्गीय जीवन से सम्बद्ध युवक की कहानी है, जो अपनी प्रतिभा के सहारे जीवन में ऊँचा उठने के लिए विश्वविद्यालय में अध्ययनार्थ आता है। परन्तु परिस्थितियाँ उसे कहीं और ले जाती है। रमेश का परिचय अजित से विश्वविद्यालय में पहले ही दिन हो जाता है। अजित धनी युवक है और अपनी अमीरी को विधि का विधान मानता है, और इसी ढग से वह रमेश के साथ अपनी मित्रता को लेता है। रमेश, अजित के कारण प्रभा से मिलता है और उससे प्रेम करने लगता है। प्रभा एक धनी परिवार की लड़की है। वह प्रेम को विवाह का आधार नहीं मानती। उसकी दृष्टि से विवाह का आधार है- स्त्री-पुरुष के बीच आर्थिक संबंध। रमेश, अजित के सम्पर्क के कारण धनी तो हो जाता है परन्तु मध्यवर्गीय सस्कारों से मुक्त नहीं हो पाता। उसकी दृष्टि में प्रेम की परिणति है- विवाह। अत प्रभा द्वारा विवाह-प्रस्ताव अस्वीकार कर देने पर वह अपना मानसिक संतुलन खो बैठता है और इसी असंतुलित मानसिक स्थिति में वह अजित के ऊपर गोली चला बैठता है। प्रभा के प्रेम का आवरण हटने पर उसे वास्तविकता का ज्ञान होता है। अत: वह अध्ययन छोड़कर कानपुर चला जाता है और मदिरा के सहारे वर्ग-भेद के प्रति जहर उगलता है। उसे कानपुर जाते समय गाड़ी में ही

---

१ वर्मा पृ० १४०

एक और दोस्त मिलता है- विनोद। उसके साथ रमेश वेश्याओं के यहाँ जाने लगता है। वहाँ उसका परिचय सरोज नाम की एक वेश्या से होता है। सरोज वेश्या होने के बावजूद एक भावुक युवती है और सद्गृहिणी के रूप में जीवन-यापन करना चाहती है। वह रमेश से विवाह करना चाहती है। परन्तु प्रभा के प्रेम से निराश रमेश हर स्त्री को प्रभा की तरह स्वार्थी, बेवफा और पैसे की गुलाम समझता है। वह सरोज की भावनाओं की उपेक्षा करता है। उसकी उपेक्षा से सरोज घुल-घुलकर रोगिणी हो जाती है- और अपने प्राण त्यागकर चार लाख की सम्पत्ति रमेश के नाम छोड़ जाती है। उसके नि.स्वार्थ त्याग से रमेश की आँख खुलती है। सरोज की सम्पत्ति का स्वामी होकर रमेश पुन प्रयाग लौटता है। धनी रमेश के सामने प्रभा विवाह का प्रस्ताव रखती है। तब रमेश अमीरों के तथाकथित सभ्य समाज पर व्यग्य करता हुआ प्रभा की 'वेश्यावृत्ति' की ओर सकेत करता है और उसके साथ विवाह करने से इंकार कर देता है।

'टेढ़े-मेढ़ रास्ते' नामक उपन्यास के प० रामनाथ तिवारी जमींदार हैं और साथ ही ब्रिटिश शासन के हिमायती। इनकी दृष्टि में ब्रिटिश शासन का विनाश जमींदारों का विनाश है। पडितजी के तीन पुत्र हैं और तीनों ही अपने पिता के प्रबल विरोधी हैं। बड़ा पुत्र दयानाथ काग्रेस पार्टी का सदस्य है और उमानाथ व प्रभानाथ क्रमश कम्युनिस्ट पार्टी एव क्रान्तिकारी दल के सदस्य हैं। पिता की अहम्मन्यता तीनों पुत्रों को विरासत में मिली है- इसी कारण तीनों अपने पिता के विचारों से विद्रोह करते हुए अपने लिए पृथक-पृथक रास्तों का चयन करते हैं। काग्रेसी होने के कारण दयानाथ को तिवारी जी रियासत के उत्तराधिकारी पद से वचित करके घर से निकाल देते हैं। परन्तु दयानाथ अपने पथ पर पूर्ण निष्ठा से आगे बढ़ता है। धीरे-धीरे उसे कांग्रेस पार्टी की दुर्बलताओं का पता चलता है। उसकी अहम्मन्यता उसके पैरों की बेड़ी बन जाती है। परिणाम स्वरूप वह चुनाव में पराजित होता है। पराजय से निराश दया अपने पिता का द्वार खटखटाता है किन्तु स्वाभिमानी रामनाथ कुल की मर्यादा के हित में उसकी सहायता नहीं करते। पंडितजी का दूसरा पुत्र उमानाथ जर्मनी से शिक्षा प्राप्त करके लौटता है। वह भारत में नई आर्थिक क्रान्ति का सूत्रपात करना चाहता है- समाजवादी विचारधारा का हिमायती तथा पूजीवाद, ब्रिटिश साम्राज्यवाद का विरोधी। गैर जिम्मेदारी और अनुभवहीनता के कारण वह ब्रिटिश शासन की निगाहों में चढ़ जाता है। उसके नाम से वारट निकलता हैं अत. विदेश भागने के लिए धन मागने पिता के पास पहुँचता है। रामनाथ उसे आर्थिक सहायता देने से इकार कर देते हैं। धनाभाव से पीड़ित उमानाथ अपनी पत्नी महालक्ष्मी के गहनो की सहायता से विदेश भाग जाता है। रामनाथ का तीसरा और सबसे छोटा पुत्र है- प्रभानाथ। कलकत्ते में उसकी भेंट आकस्मिक रूप से क्रान्तिकारी दल की सदस्या वीणा से होती है उसी के माध्यम से वह क्रान्तिकारी दल का सदस्य बनता है। कालान्तर में धनाभाव के कारण क्रान्तिकारी आन्दोलन विफल होने लगता है। मनमोहन मरते समय प्रभा से वचन लेता है कि वह क्रान्ति के पथ से हट जायेगा। प्रभानाथ को सोचने का अवसर भी नहीं मिलता और वह डकैती के केस में गिरफ्तार हो जाता है। चाचा श्यामनाथ की ममता उसे कमजोर बनाती है और वह मुखबिर बनने के लिए तैयार हो जाता है। परन्तु उसके पिता उसकी ऑखें खोल देते हैं। अन्त में वीणा की मदद से वह जहर खाकर आत्महत्या कर लेता है। विश्वम्भर दयाल की हत्या करने के बाद वीणा भी आत्महत्या कर लेती है। प० रामनाथ के तीनों पुत्र कार्य करने की अपार शक्ति होने के बावजूद विफल होते हैं और वह स्वय इस लड़ाई में इतना टूट जाते हैं कि उमानाथ के बच्चों से सहारा मॉगते हैं।

'आखिरी दॉव' नामक उपन्यास का नायक रामेश्वर अपनी पैतृक सम्पत्ति जुए में हार जाता है। मात्र पॉच सौ रूपये लेकर वह बम्बई आ जाता है उपन्यास की नायिका चमेली सास और पति के अत्याचारों से ऊबकर गहने और नगद रूपया लेकर रतनू नामक युवक के साथ भागकर बम्बई

चली आती है। बम्बई आकर रतनू उसकी सम्पत्ति खा-पीकर समाप्त कर देता है और चमेली का सौदा एक अय्याश सेठ से तय करता है। चमेली विरोध करते हुए भागती है। किन्तु पुलिस कांस्टेबल के चुगल में फंस जाती है। उसी समय रामेश्वर उसकी पति होने का नाटक रचकर उसकी रक्षा करता है। बेसहारा चमेली, रामेश्वर के साथ रहने लगती है। रामेश्वर अपने विधुर जीवन का समस्त प्यार चमेली पर उड़ेल देता है। दोनों पति-पत्नी की तरह रहने लगते हैं। चमेली घर-गृहस्थी चलाने के लिए भूलेश्वर में एक पान की दूकान खोलती है। सेठ शिवकुमार, जो फिल्म व्यवसायी है, चमेली की ओर आकृष्ट होता है। परन्तु चमेली उसे फटकार देती है। रामेश्वर अधिक पैसा कमाना चाहता है और इसी चक्कर में अपने मालिक के रूपये लेकर सट्टा खेलता है। सट्टे में वह रूपये हार जाता है, रामेश्वर को बचाने के लिए चमेली सेठ शिवकुमार की शरण में चली जाती है लेकिन वहाँ से निकल नहीं पाती। प्रसिद्ध अभिनेत्री होने के बावजूद वह अपना सतीत्व खो बैठती है। रामेश्वर भी दूध के धंधे की आड़ में शराब और जुए के अवैध धंधे से पैसा कमाना शुरु कर देता है। रामेश्वर और चमेली एक-दूसरे से दूर रहते हैं परन्तु आपस में प्रेम करते हैं। सेठ शिवकुमार चमेली के माध्यम से उद्योगपति शीलल प्रसाद को फँसाकर अपने व्यवसाय को आगे बढ़ाना चाहता है। जब रामेश्वर को यह पता चलता है तो वह शीतल प्रसाद को आतंकित कर चमेली को अपने घर ले आता है। इस घटना के बाद शीतल प्रसाद रामेश्वर के पीछे पड़ जाता है और उसके जुए के अड्डो की जानकारी पुलिस को दे देता है। रामेश्वर को बचाने के प्रयास में चमेली शीतल प्रसाद की हत्या कर देती है। रामेश्वर के अड्डे में पुलिस पहुँचती है और चमेली आत्महत्या कर लेती है। चमेली को दम तोड़ता देख रामेश्र हतप्रभ रह जाता है। अत में पुलिस के समक्ष आत्मसमर्पण करता हुआ कहता है -- **"ले चलिए, सार्जेण्ट साहब- आज मैं जिन्दगी का आखिरी दाँव हार चुका हूँ, ले चलिए।"**[१]

'अपने खिलौने' नामक उपन्यास के जयदेव भारती जो यशनगर राज्य के दीवान रह चुके हैं-- केन्द्रीय सरकार में सेक्रेटरी हैं। जयदेव भारती की पुत्री है- मीना- युवा और सुन्दरी। शहर के प्रसिद्ध पूजीपति लाला पंचमलाल का पुत्र अशोक गुप्त, मीना से प्रेम करता है। उसकी एक बुआ है- अन्नपूर्णा वह पचास लाख की लागत वाली मिल की मालकिन है और युवावस्था में ही विधवा होने के कारण अपने भाई के पास ही रहती है। यशनगर के राजकुमार वीरेश्वर प्रताप सिंह भारत आते हैं। ये फ्रासीसी दूतावास में भारतीय राजदूत के प्रथम सेक्रेटरी है। यहाँ पर युवराज- मीना, अन्नपूर्णा और कैरा कोमल सभी को प्रेमपाश में बाध लेते हैं। रामप्रकाश, ज्ञानेश्वरी भारती का भतीजा है औरँ सगीत में रुचि रखने के कारण बुआ से अधिक फूफा का मुँहलगा है। उसके लिए ही जयदेव भारती 'कला-भारती' नामक सांस्कृतिक सस्था खोलते हैं। ज्ञानप्रकाश कला-भारती में पॉच सौ रूपये महीने की नौकरी पा जाता है। वीरेश्वर प्रताप के चित्रों की प्रदर्शनी लगती है, उसका उद्घाटन गृहमत्री करते हैं। अशोक गुप्ता कला-भारती के लिए साजो-समान खरीदते समय लम्बा मुनाफा कमाते हैं। इस सस्था की और शाखायें खोलने का निर्णय लिया जाता है। अत मीना, अन्नपूर्णा बंसल, रामप्रकाश और दिलवर किशन 'जख्मी' लखनऊ पहुँचते हैं। वहीं मीना की भेंट रामकृष्ण सैदा से होती है। हीरोइन बनाने का लालच देकर वह मीना को बम्बई चलने के लिए राजी कर लेता है। मीना सैदा और रामास्वामी चेट्टियार जैसे धूर्तो के जाल में फँस जाती है। अत में वीरेश्वर प्रताप की सहायता से सभी उन लोगों के चंगुल से मुक्त होते हैं। ठीक उसी समय बम्बई में वीरेश्वर प्रताप की फ्रासीसी प्रेमिका और मंगेतर लिली उपस्थित होती है। युवराज के प्रेम के खिलवाड़ का अत होता है-- मीना और अन्नपूर्णा पुन अपने पूर्व प्रेमियों- अशोक और रामप्रकाश- के पास खड़ी हो जाती है।

१- आखिरी दाँव वर्मा पृ० १९४

'भूले-बिसरे चित्र' में एक परिवार की चार पीढ़ियों की कहानी है। मुशी शिवलाल सामान्य अर्जीनवीस है जो चाटुकारिता और तिकड़मों के बल पर अपने बेटे ज्वाला प्रसाद को नायब तहसीलदार बनवा देते हैं। विधुर होने के कारण शिवालल छोटे भाई राधेलाल के परिवार के साथ संयुक्त रूप से रहते हैं। राधेलाल काइयॉ आदमी है, ज्वाला के नायब तहसीलदार बनते ही उत्साहित हो उठते हैं। छिनकी घर की नौकरानी है कुछ अपनी स्वामिभक्ति और कुछ अवैध सबध के कारण परिवार की अभिन्न सदस्या बन जाती है। छिनकी ज्वाला की नवविवाहिता पत्नी को अफसरी का महत्व बताते हुए पति के साथ जाने की सलाह देती है। राधेलाल की पत्नी का विरोध भी छिनकी के आग्रह को टाल नहीं पाता। इस प्रकार यमुना और ज्वाला के घाटमपुर प्रस्थान के साथ ही संयुक्त परिवार की कड़ी प्रथम बार अलग होती है। कुछ दिन बाद शिवलाल भी छिनकी के साथ घाटमपुर पहुॅच जाते हैं लेकिन राधेलाल का सपरिवार घाटमपुर-आगमन कलह का कारण बनता है। राधेलाल, शिवलाल के साथ विभिन्न योजनायें बनाकर ज्वाला को जमीन-जायदाद इकट्ठा करने के लिए प्रेरित करते हैं। वह अपने पिता और चाचा के जाल-फरेब को पसंद नहीं करता, अत' विरोध करता है। कुछ ही दिनों में शिवलाल मर जाते हैं और राधेलाल का परिवार ज्वाला का आर्थिक शोषण करता है। अत में वह उनके परिवार को वापस भेजने में सफल हो जाता है। इसी दौरान ज्वाला का सम्पर्क महाजन प्रभुदयाल की विधवा जैदेई से होता है। जमीन-जायदाद के कारण प्रभुदयाल का झगड़ा गजराज सिंह और बरजोर सिह से होला है। इन दोनों के साथ ही प्रभुदयाल भी अपनी जान से हाथ धो बैठता है। ज्वाला के हस्तक्षेप से विधवा जैदेई की सम्पत्ति की सुरक्षा होती है। अत. दोनों में घनिष्ठता बढ़ती जाती है। ज्वाला प्रसाद का पुत्र गंगा, जैदेई के पास रहकर ही पलता, बढ़ता है। गंगा अपनी योग्यता, ज्वाला की खुशामद और लक्ष्मीचन्द की सिफारिश के समन्वित प्रभाव से डिप्टी कलेक्टर बन जाता है। परन्तु सुरा और सुन्दरी के जाल में गगा फँसता चला जाता है। दुर्व्यसनों के कारण वह अपने पारिवारिक उत्तरदायित्व को पूरा नहीं कर पाता। अत्यधिक मदिरापान के कारण उसे यक्ष्मा रोग हो जाता है। चारों ओर ये असफलताएँ और हताशा उसे मृत्यु के द्वारा तक पहुँचा देती है। गगा प्रसाद का पुत्र है- नवलकिशोर। वह रायबहादुर कामतानाथ की पुत्री ऊषा से प्रेम करता है। उस पर ज्ञानप्रकाश की प्रेरणा और अन्तिम समय में की गई पिता की स्वीकारोक्ति का इतना प्रभाव पड़ता है कि वह इंग्लैंड जाकर आई०सी०एस० बनने की अपेक्षा स्वतत्रता संग्राम में भाग लेकर जेल जाना पसंद करता है। अत' नवल ऊषा के साथ विवाह करने से इंकार कर देता है। नवल की बहन विद्या ससुराल में पति और ससुर की लालची प्रवृत्ति से तग आकर घर छोड़ देती है। मायके आकर वह अध्यापिका बनती है। नवल के जेल जाने पर ज्वाला और भीखू- स्वतंत्रता सग्राम के सेनानियों का स्वागल करते हैं और नये युग के प्रारम्भ के साथ ही उपन्यास का अत हो जाता है।

'वह फिर नहीं आई' नामक उपन्यास में रावलपिण्डी के राजा खुशीराम के पुत्र जीवनराम और उसकी पत्नी श्यामला की कहानी है। बटवारे में ये दोनों अपने समस्त धन-वैभव से हाथ धो बैठते हैं । जीवनराम के बचपन का साथी शहबाज जीवनराम को शरण देता है। परन्तु जीवनराम को दंगों के बो.ॅ से सही-सलामत निकालने के बदले रानी श्यामला को बधक रख लेता है। जीवनराम २० हजार रूपये देकर ही श्यामला को छुड़ा सकता था। रानी श्यामला को रावलपिण्डी में छोड़कर जीवनराम रूपया कमाने के लिए भारत आ जाता है। परन्तु ऐशोआराम में पले जीवनराम के लिए २० हजार रूपया कमाना बहुत मुश्किल काम था। भारत में वह एक लखपति रिश्तेदार के यहॉ नौकरी कर लेता है। किन्तु श्यामला के मोह से व्यथित होकर वह बीस हजार रूपये का गबन करता है और रूपया लेकर श्यामला को छुड़ाने पहुँचता है छ' महीने तक जीवनराम की प्रतीक्षा करने के बाद और शहबाज की से प्रभावित होकर श्यामला एक दिन शहबाज की हो जाती है जीवनराम के वहाँ पहुँचने

पर श्यामला अपनी कहानी सुनाती है। जीवनराम को धक्का तो लगता है परन्तु श्यामला से असीम प्रेम होने के कारण वह उसे लेकर बम्बई आता है। लेकिन गबन के कारण वे दोनों इधर-उधर भटकते रहते हैं। इसी बीच श्यामला का परिचय कानपुर के प्रसिद्ध व्यापारी ज्ञानचन्द से होता है। श्यामला उसे अपने पति का परिचय एक रिश्तेदार के रूप में देती है। वह ज्ञानचद के साथ आकर रहने लगती है और ज्ञानचद, जीवनराम को अपने दफ्तर में सहायक के रूप में नियुक्त कर लेते हैं। स्वय श्यामला के साथ घूमने निकल जाते हैं। पहले गबन किये रूपयों को चुकाने के लिए जीवनराम दोबारा गबन करता है ज्ञानचद के यहाँ। पहले तो उज्ञानचद उसे पुलिस को पकड़वा देते हैं परन्तु बाद में श्यामला के खुशामद करने पर उसे छुड़वा भी देते हैं। जीवनराम को बज यह बात पता चलती है तो वह इस भीख को लेने से इकार कर देता है और रूपये का इंतजाम करने के लिए चला जाता है। कुछ दिन बाद वह खाली हाथ थका हुआ लौटता है और अंत में श्यामला को ज्ञानचद के सहारे छोड़कर चिरनिद्रा में सो जाता है। श्यामला, जीवनराम की मृत्यु के आघात से अर्धविक्षिप्त हो जाती है। परन्तु ज्ञानचन्द की आत्मीयता से पुन भोग विलास की ओर आकृष्ट होती है और अपने शरीर का व्यापार करने लगती है। वह रूपया अदा करके जीवनराम के कर्ज से मुक्त होना चाहती है। एक दिन बहुमूल्य आभूषणों से लदी बीस हजार रूपया लेकर ज्ञानचद के पास पहुँचती है। जीवनराम की मौत उसके मन में समाज के प्रति तीव्र आक्रोश भर देती है और वह लोगों की जिन्दगी नष्ट करके समाज से बदला लेना चाहती है। श्यामला, जीवनराम की ममता को भुला नहीं पाती। श्यामला की भावनाओं को समझने के कारण ज्ञानचंद दु खी होते हैं और श्यामला के लिए कुछ रूपये उस समय के लिए सुरक्षित रख देते हैं जब वह वृद्धा हो जायेगी।

'सामर्थ्य और सीमा' नामक उपन्यास का प्रारभ हिमालय की तराई में घने जंगलों के बीच बने हुए एक छोटे से स्टेशन सुमना के चित्रण से होता है। उत्तर प्रदेश के योजना-विकास मत्री जोखनलाल इसी सुमनपुर के पास रोहिणी नदी पर बाँध बनाने की योजना बनाते हैं। इस योजना के कार्यान्वयन के लिए भारत के विभिन्न क्षेत्रों से प्रसिद्ध विशेषज्ञों को केन्द्रीय सरकार की सहायता से आमन्त्रित किया जाता है। भारत के चोटी के पूजीपति रतनचन्द मकोला की सहायता से जोखनलाल यशनगर को एक व्यापारिक केन्द्र बनाना चाहते हैं। वासुदेव चितामणि देवलकर विश्वविख्यात इंजीनियर हैं। रिपब्लिक के सम्पादक ज्ञानेश्वर राव प्रधानमत्री के सलाहकार हैं। प० शिवानन्द शर्मा इसलिए बुलाये जाते हैं क्योंकि वे साहित्यकार होने के साथ जोखनलाल के राजनीतिक गुरु हैं और एलबर्ट किशन मसूर सुमनपुर योजना का प्लान बनाने आते हैं। सुमनपुर स्टेशन से जाते हुए इन लोगों की कार खराब हो जाती है और यशनगर की रानी मानकुमारी उन्हें अपनी कार से सकुशल सुमनपुर पहुँचा देती है। रानी मानकुमारी अतीव सुदरी है। उनके आकर्षक व्यक्तित्व से जोखनलाल के अतिरिक्त सभी प्रभावित होते हैं। इनके पति शमशेर बहादुर सिह सुमनपुर के औद्योगिक विकास की योजना बनाते हैं। परन्तु देश के स्वतंत्र होने के साथ ही उत्तर प्रदेश में जमींदारी उन्मूलन हो जाता है और कुछ समय पश्चात् विदेश में आल्पस पहाड़ के खड्ड में मोटर सहित गिरने से उनकी मृत्यु हो जाती है। पति कीमृत्यु के बाद रानी मानकुमारी विदेश से यशनगर लौट आती हैं। उनके दीवान खुशवत सिह राय उनकी सारी अचल सम्पत्ति राज्य सरकार को सौंपकर दिल्ली चले जाते हैं राज्यसभा के सदस्य के रूप में। रानीजी देश में आकर सरकार की कठोर नीतियों का शिकार बनती है। सुमनपुर के सामर्थ्य-मदोन्मत्त अतिथि रानी मानकुमारी के समक्ष आते ही अपना गर्व भूल जाते हैं और प्रणयनिवेदन करने लगते हैं। रानी भी उनकी बातों से प्रभावित हुए बिना नहीं रहती किन्तु नियति का विधान कुछ और ही होता है। प्रकृति इन शक्तिशाली व्यक्तियों के दर्प को बहुत अधिक समय तक नहीं बने रहने देती सभी रोहिणी के जल प्लावन में विलुप्त हो जाते हैं इजीनियर देवलकर जिस रोहिणी पर

बॉध बनाना चाहते थे वह पहले तो बाहर से सूखकर सिमट जाती हे और बाद में उस समय हिमालय के एक कच्चे पहाड़ को चीरकर फूट निकलती है। जब ये सभी शक्तिशाली पुरुष दभ में चूर होकर आपस में शत्रुता ठान लेते हैं। रानी मानकुमारी, नाहर सिह और उनका पुत्र रघुराज सिह भी इस विनाश लीला से बच नहीं पाते और इसके साथ ही गुम्मैन ठाकुरों का वश सदैव के लिए विनष्ट हो जाता है।

'थके पॉव' नामक उपन्यास में कथानक का प्रारभ पचास वर्ष तक सघर्ष करते हुए केशव के थके हारे जीवन से होता है। अतीत की घटनाए एक के बाद एक करके उभरती है। केशव के प्रारभिक जीवन की कहानी- जब उसने बी०ए० पास किया था और घर में खुशी की लहर दौड़ गई थी परन्तु उसकी बहिन सुधा का विवाह तय होने पर दहेज की समस्या सारी खुशी समाप्त कर देती है। उसके भावी-सुखों की कल्पना तिरोहित हो जाती है। वह समझ जाता है कि एक क्लर्क के घर जन्म लेने वाले के भाग्य में क्लर्की बदी है। केशवचन्द्र द्वारा नौकरी की तलाश से कथानक में दूसरा मोड़ उपस्थित होना है। बड़ी कठिनाई से उसे साठ रूपये महीने की नौकरी मिल पाती है और उसमें पूरे परिवार का खर्च चलने लगता है। उसके भाई रमेश और सुरेश नौकरी पाने के बाद हाथ झाडकर अलग हो जाते हैं और स्वय केशव गृहस्थी के जाल में जकड़ता जाता है। उसका बडा बेटा मोहन पढ़ने में तेज था। एम०ए० करने के बाद उसने वकालत पढ़ी। परन्तु सीधा-साधा होने के कारण उसे सफलता नहीं मिली। मोहन को असिस्टेण्ट मैनेजर की नौकरी करनी पड़ी जो एक तरह की क्लर्की थी। बाद में उसकी वह नौकरी भी छूट जाती है और वह ट्यूशन पढ़ाने लगता है। केशव का दूसरा बेटा किशन बम्बई चला जाता है- परिवार की सारी जिम्मेदारियों की परवाह न करते हुए। मोहन अपने पिता का हाथ बॅटाने क बदले राजरोग को आमन्त्रित कर लेता है और उसका भाई किशन गुलछर्रे उड़ाता रहता है। मोहन की पत्नी सुशीला अपने गहने बेचकर पति का इलाज करवाती है। परन्तु स्वस्थ होने के बाद भी वह नौकरी पर नहीं जा पाता। इन समस्याओं के कारण माया अविवाहित रह जाती है। केशवचन्द्र उसका विवाह दुहाजू से करना चाहते हैं परन्तु माया के विद्रोह के कारण ऐसा नहीं हो पाता। वह अपने भाई किशन के पास बम्बई चली जाती है फिल्मो में काम करने के लिए। सुशीला नौकरी करने लगती है। आर्थिक विवशता की स्थिति में केशवचन्द्र एक सेठ से घूस ले लेते है लेकिन उनकी मानसिक शान्ति छिन जाती है। घूस के रूपये वह अनाथालय में दे देना चाहते हैं तभी बेटे-बेटी के पास से डेढ़ हजार रूपये की रजिस्ट्री आ जाती है। परन्तु वह इस सीमा तक टूट चुके होते हैं कि उसे पाकर भी उसे प्रसन्नता नहीं होती।

'रेखा' वर्माजी का एक नायिका प्रधान उपन्यास है। रेखा दिल्ली विश्वविद्यालय में दर्शन शास्त्र की छात्रा है। अतीव सुन्दरी होने के साथ-साथ प्रतिभाशाली भी। शोध-कार्य के सिलसिले में उसका सम्पर्क विभागाध्यक्ष प्रो० प्रभाशकर से होता है। धीरे-धीरे इन दोनों के सबंध प्रगाढ़ हो जाते हैं। बड़े दिन के छुट्टियों में रेखा अपने घर चली जाती है- प्रभाशकर को अपने घर आने का निमत्रण देकर। प्रभाशंकर जबलपुर जाते हैं और रेखा के साथ वहॉ के रमणीक स्थानो की सैर करते हैं। इन दोनों की निकटता में जो कमी रह गयी थी उसे प्रभाशकर की माता की बीमारी में रेखा की निस्पृह सेवा और नैनीताल का साहचर्य पूरी कर देता है। रेखा एम०ए० में अच्छे अकों मे प्रथम श्रेणी प्राप्त करके विश्वविद्यालय मे नये रिकार्ड कायम करती है और दोनों उसी दिन परिणय-सूत्र में बॅध जाते हैं। ह्रास के मुख में पड़े प्रोफेसर और युवा रेखा भावावेश में विवाह तो कर लेते हैं परन्तु एक वर्ष बाद उन दोनों के बीच दूरियॉ बढ़ने लगती है पहले तो आत्मा की भूख उसे शरीर की भूख के विषय में सोचने नहीं देती थी परन्तु रामशंकर का स्पर्श शरीर की भूख को जगा देता है रामशंकर और देवकी की अवैध संतान है विवाह के बाद प्रोफेसर और देवकी के सबंध टूट जाते हैं परन्तु जब

को सहारा देते है जनार्दन सिंह।
डायरेक्टर अंजनी कुमार के प्रति
लता घर लौट आती है और अंज
कारण आत्महत्या कर लेता है।
साथ हो जाता है। परन्तु विवाह
और रूपाशर्मा का पुत्र-हरिलोचन
विवाह की स्वीकृति दे देते हैं। उद
है। उनकी विदेश-उड़ान के स

'युवराज चूण्डा' में मे
परिहास में कही गई बात से ह
कर देते हैं और मारवाड़ की
राजकुमारी गुणवती का पुत्र
धर्मयुद्ध करते हुए वीरगति को प्र
शासन सभालते हैं। मारवाड़
मुँहलगे सरदारों को लेकर मेवाड़
है। गुणवती के तीर्थयात्रा से लौटने
को छोडकर भीलों के प्रदेश राज्य
करने लगती है और चूण्डा उस
शिकजा कसता जाता है। वह
सिहाजी को राज्य का उत्तराधिकार
हैं। गोली अमिया इसके षडयंत्रों
अपनी वीरता सूझ-बूझ और अंचल
मारे जाते हैं और अचली भी चूण्डा
प्रदेश को लौट जाते हैं।

'धुप्पल' नामक उपन्यास
आसपास के जीवन के बारे में
आत्मकथा 'कहि न जाय का कहिए'
इनके मित्र थे अत. उनसे अपनी
विषय में इन्होंने लिखा है। मुख्य
की नौकरी, रेडियो में हिन्दी सलाहकार
पुरस्कार मिलने, पद्मविभूषण की
तक की घटनाओं का इसमें वर्णन

'चाणक्य' नामक उपन्यास
होता है। नालन्दा विश्वविद्यालय
विष्णुगुप्त भी मगध पहुँचते हैं
अस्वीकार कर देते हैं तो नद गुप्त
धर्मरक्षित के साथ नालदा पहुँच
निशानेबाजी से मुग्ध आचार्य

जाने लगता है तो न चाहते हुए देवकी को दिल्ली
जाती है। रेखा बहुत से पुरुषों के सम्पर्क में आती
रह जाता है। परन्तु वह यह सोचकर गर्भपात करा
नाम पर कलक होगा। इस घटना के बाद रेखा में
भिन्न परिस्थितियों में निरंजन, शशिकांत, यशवत
बनती है। निरजन कपूर का 'सिगरेट केस' उसके
के अवैध सबधों के विषय में जान जाते हैं। रेखा
[illegible] कर्म करने को व्याकुल कर देता
[illegible] रेखा आत्मिक रूप से भी जुड़ जाती
[illegible] चाहते हैं। रेखा के विरोध करने
[illegible] उन्हें लकवा मार जाता है। रेखा
[illegible] है। योगेन्द्र उसके सामने ओसलो
[illegible] निश्चिन्त होना चाहती है परन्तु
योगेन्द्र [illegible] पलने चला जाता है और प्रोफेसर
रेखा को [illegible]सिक रूप से विक्षिप्त बना देता है।

[illegible] पात्र जगत प्रकाश उत्तर प्रदेश के एक छोटे से
समाज से संबधित है और अपनी बड़ी बहिन
[illegible]ता है। उसकी इच्छा महान अर्थशास्त्री बनने की
के क्षेत्र में डुबो देता है। उसका मित्र कमलाकात
उसका परिचय अन्य उच्चवर्गीय सदस्यों से होता
[illegible]ी है और अपने साथ अनेक स्थानों का भ्रमण
[illegible]दि जगहों की यात्रा करते हुए जगत के सामने
विवाह यमुना से तय होता है, जो उसकी बहन
से प्रेम करता है। इसी कारण वह बंसगोपाल की
[illegible]स्टर बसगोपाल और रूपलाल की मक्कारी और
और रुपलाल, यमुना के साथ विवाह कर लेता है।
कम्युनिष्ट होने के आरोप में गिरफ्तार कर लिया
[illegible]से छूटकर वह अपने गाँव महोना आता है परन्तु
[illegible]हाँ भी उसे विश्वविद्यालयों के अधिकारियों की
वहाँ से निराश होकर वह कानपुर पहुँचता है।
चुका था। द्वितीय महायुद्ध के समय वह फौज में
और जगत फिर इलाहाबाद लौटता है। बसगोपाल
[illegible] सुषमा उसे अपमानित करते हुए विवाह करने
असफल होने पर भी किसी प्रकार की विकृति का
है अत [illegible] और घर नौकर को दे
[illegible] ना है।

एक [illegible] उपन्यास है। यह चार भागों में
[illegible] की सम्पत्ति अर्जित
[illegible] परन्तु घसीराम का पोता राधे

पूजीपति बनकर पूरे प्रदेश की राजनीति को अपने इशारे पर चलाता है। लेकिन उसके जैसे व्यक्ति भी अपने बुने जाल में फॅस जाता है। दूसरा शीर्षक है 'भाग्य'। यह भाग्य की विडम्बना है कि नाहर सिंह जैसे कुख्यात डाकू का पोता होते हुए भी जबर सिंह ताल्लुकेदार गंभीर सिह से चुनाव जीत जाता है और उनका दामाद बनकर उच्चवंशीय कुलीन ठाकुर बन जाता है और एक दिन गृहमत्री बन बैठता है। तीसरे शीर्षक 'भावना' में ब्राह्मण परिवार की कथा है। पडित रामसमुझ के प्रताप से उनका पोता रामलोचन गृहमत्री के घर में प्रवेश पाकर एक बड़े शहर का कोतवाल बन जाता है उसके मन में किसी प्रकार का भय नहीं है, अपने कार्यों से सबको चौका देने की इच्छा है। तीनों कक्षाओं के ये व्यक्ति चौथे भाग में एक साथ उपस्थित दिखाई पड़ते हैं। बुद्धि-राधेश्याम और भाग्य-जबरसिह आपसी साठ-गाठ से अपना उल्लू सीधा करते हैं और भावना-रामलोचन को अपने मिशन में शामिल करना चाहते हैं। परन्तु ऐसा हो नहीं पाता, जबरसिह और राधेश्याम-रामलोचन की सच्ची भावना से अपमानित होते हैं। रामलोचन शहर कोतवाल के पद से इस्तीफा देकर जबरसिह के विरुद्ध चुनाव में खड़ा होता है। जबरसिह की पत्नी धनवत कुॅवर - जो रामलोचन की मुॅहबोली बुआ है- उसे रूपयों से सहायता करती है और रामलोचन चुनाव में जबरसिह को परास्त करके विधानसभा में विरोध-पक्ष का महत्वपूर्ण सदस्य बन जाता है। जबरसिह कौंसिल के मेम्बर बना दिये जाते हैं। जटाशकर के मुख्यमत्री बनते ही राधेश्याम जबरसिह को छोड़कर उनकी सेवा में लग जाते हैं। जटाशंकर कृषि-अनुसंधानशाला का काम राधेश्याम के हाथ से छीनना चाहते हैं। राधेश्याम की गिरफ्तारी की बात फैल चुकने के कारण अमरीकी उद्योगपति मिस्टर मैसीज ट्रैक्टर-फैक्टरी के मामले को उलझा देते हैं।

'प्रश्न और मरीचिका' में कथा का प्रारभ उदयराज के अपने पिता के पास दिल्ली पहुॅचने से होता है। इससे पहले वह बम्बई में रहकर अध्ययन कर रहा था। वहॉ उसके पिता के दोस्त रामकुमार गावड़िया रहते हैं, जो एक सफल उद्योगपति हैं। उनके पुत्र शिवकुमार से उसकी मित्रता है। उन्हीं के माध्यम से उसका परिचय केसरबाई से होता है। केसरबाई रामकुमार की रखैल है परन्तु उसे पसन्द नहीं करती। उदयराज, जयराज उपाध्याय का इटालियन पत्नी से उत्पन्न पुत्र है। उदय की माँ मारिया गियोवानी पिता से कलह के कारण उसे छोडकर चली गई थी। उसके बाद से वह बम्बई के बोर्डिंग हाउस में रहकर पढ़ा था क्योंकि उसके पिता ने अपनी शादी ब्राह्मण जाति में कर ली थी। उसके पिता वाणिज्य विभाग में ज्वाइट सेक्रेटरी हैं अत उसके दिल्ली पहुॅचने पर परिचित लोग उसे अपने से जोड़ने का प्रयत्न करते हैं।

वह शिवलोचन शर्मा जैसे नेता के प्राइवेट सेक्रेटरी के पद पर नियुक्त हो जाता है। शर्माजी की पत्नी रूपा शर्मा अपने पति के पद का पूरा लाभ उठाती है। वहॉ रहकर उसे रूपाशर्मा की असलियत पता चलती है- उदय के मित्र शिवकुमार के साथ होटल में रात बिताना, उदय के साथ शराब पीना और शिवकुमार के ५० हजार रूपये चुरा लेना- उसकी चरित्रहीनता की ओर संकेत करती है। उदय की भेंट मेलाराम के होटल के पीछे रहने वाली मिर्जा बाकर की पत्नी आयशा बेगम और बेटी सुरैया से होती है। उपद्रवियों से त्रस्त होकर दोनों माँ-बेटी शर्माजी के यहॉ शरण लेती हैं। बाद में शेख मुस्तफा कामिल उन्हें अपने यहॉ पनाह देते हैं। उदय और सुरैया में क्रमशः भय, करुणा और दया भावना के कारण प्रेम हो जाता है। ये दोनों विवाह करना चाहते हैं परन्तु धार्मिक कट्टरता के कारण विवाह हो नहीं पाता। उसके बाद उदय दिल्ली के मार्निंग स्टार के सवाददाता के रूप में अमेरिका चला जाता है। वहॉ प्रधानमत्री नेहरू को गाली देने पर एक अमरीकी पत्रकार को पीटने के कारण वह भारत लौट आता है। उदय का विवाह प्रमिला मदान से तय हो जाता है। मेलाराम और रूपा शर्मा मिलकर मेला-रुश होटल खोलते हैं जिसकी मजीत कौर है प्रमिला के भाई प्रेम मदान और मजीत के बीच अवैध संबंध हैं प्रेम की पत्नी रेवा मदान को इन सम्बन्धों की जानकारी है अत में गर्भवती मजीत

को सहारा देते हैं जनार्दन सिंह। उदय की छोटी बहन लता जिंक एण्ड कापर कॉरपोरेशन के मैनेजिंग डायरेक्टर अजनी कुमार के प्रति आकर्षित हो जाती है। दोनों इंग्लैण्ड में सिविल मैरिज कर लेते हैं। लता घर लौट आती है और अजनी कुमार कानूनी गिरफ्त में आ जाता है। अंत में मानसिक तनाव के कारण आत्महत्या कर लेता है। रामकुमार की रखैल केसरबाई का रागात्मक जुड़ाव मुहम्मद शफी के साथ हो जाता है। परन्तु विवाह से पहले ही केसर का भाई यशवत, शफी की हत्या कर देता है। लता और रूपाशर्मा का पुत्र-हरिलोचन शर्मा एक-दूसरे के सम्पर्क में आते हैं और दोनों परिवार इन दोनों के विवाह की स्वीकृति दे देते हैं। उदय की माँ मारिया गियोबानी अपने बेटे उदय से भारत आकर मिलती है। उनकी विदेश-उड़ान के साथ ही उपन्यास समाप्त हो जाता है।

'युवराज चूण्डा' में मेवाड़ और मारवाड़ के दो राजवशों की कथा है, कथा का आरंभ राणा की परिहास में कही गई बात से होता है। मारवाड़ से आया नारियल युवराज चूण्डा अपने लिए अस्वीकार कर देते हैं और मारवाड़ की राजकुमारी को अपनी माता के रूप में स्वीकार कर लेते हैं। मारवाड़ की राजकुमारी गुणवती का पुत्र मुकुलजी मेवाड़ का उत्तराधिकारी नियुक्त होता है, और राणा लाखा धर्मयुद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त होते हैं। युवराज चूण्डा, मुकुलजी के सरक्षक के रूप में मेवाड़ का शासन संभालते हैं। मारवाड़ के शासक राव रणमल अपने पुत्र जोधा की देख-रेख में शासन छोड़कर मुँहलगे सरदारों को लेकर मेवाड़ आ जाते हैं। गोली अमिया भी उनके साथ आती है जो उनकी रखैल है। गुणवती के तीर्थयात्रा से लौटने के बाद रणमल अपना षडयंत्र शुरु कर देते हैं। युवराज चूण्डा मेवाड़ को छोडकर भीलों के प्रदेश रान्धा में चले जाते हैं। भीलों के सरदार की लड़की अँचली चूण्डा से प्रेम करने लगती है और चूण्डा उस प्रदेश के निर्माण-कार्य में लग जाते है। यहाँ मेवाड़ में रणमल का शिकजा कसता जाता है। वह अपने ही पौत्र मुकुल की हत्या का षडयत्र रचते हैं और बेटे के पुत्र सिहाजी को राज्य का उत्तराधिकारी बनाना चाहते हैं। युवराज चूण्डा के भाई रघुदेव की हत्या करा देते हैं। गोली अमिया इसके षडयत्रों का पर्दाफाश गुणवती से मरते समय कर जाती है। युवराज चूण्डा अपनी वीरता सूझ-बूझ और अचली की सहायता से रणमल के षडयत्रों को विफल कर देते हैं। रणमल मारे जाते हैं और अचली भी चूण्डाजी की रक्षा करते हुए वीरगति को प्राप्त होती है। चूण्डा पुन अपने प्रदेश को लौट जाते हैं।

'धुप्पल' नामक उपन्यास वस्तुत वर्माजी की आत्मकथा है। इसमें इन्होंने सन् १९४९-५० के आसपास के जीवन के बारे में लिखा है। प्रारम्भिक जीवन का बहुत कम उल्लेख है। अप्रकाशित आत्मकथा 'कहि न जाय का कहिए' में सन् ५० के पहले के जीवन का वर्णन है। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' इनके मित्र थे अतः उनसे अपनी मित्रता, सरला के साथ उनके विवाह और उनकी मृत्यु- इन सबके विषय में इन्होंने लिखा है। मुख्यतः इसमें बम्बई प्रवास, देविकारानी से सम्पर्क, लखनऊ आगमन, प्रेस की नौकरी, रेडियो में हिन्दी सलाहकार के पद पर नियुक्ति, अपना प्लाट खरीदने, साहित्य अकादमी पुरस्कार मिलने, पद्मविभूषण की उपाधि प्राप्त होने, मकान बनवाने से लेकर राज्य सभा सदस्य बनने तक की घटनाओं का इसमें वर्णन है।

'चाणक्य' नामक उपन्यास का प्रारम्भ मगध-नरेश महापद्म नंद के 'दान-पर्व' के आयोजन से होता है। नालन्दा विश्वविद्यालय के उपकुलपति आचार्य धर्मरक्षित के साथ तक्षशिला के आचार्य विष्णुगुप्त भी मगध पहुँचते हैं। पाटलिपुत्र में जब विष्णुगुप्त पाँच सौ स्वर्ण मुद्राओं को कारण सहित अस्वीकार कर देते हैं तो नद गुस्से से पागल होकर आचार्य का अपमान कर बैठता है। विष्णुगुप्त आचार्य धर्मरक्षित के साथ नालंदा पहुँचते हैं। वहाँ विष्णुगुप्त की भेंट चन्द्रगुप्त से होती है। उसकी अचूक निशानेबाजी से मुग्ध आचार्य उसे अपना शिष्य बना लेते हैं रानी मुरा से संकट की सूचना मिलने पर

चन्द्रगुप्त और आचार्य विष्णुगुप्त तक्षशिला चले जाते हैं और चन्द्रगुप्त को सिकदर के साथ मगध में मार्ग-निर्देशन के लिए भेज देते है। मार्ग में चन्द्रगुप्त छम्ब की राजकुमारी पुष्पावती से विवाह करता है जो अपूर्व सुदरी होने के साथ ही उसकी वाग्दता भी थी। नद यह समाचार मिलने पर बौखला उठता है और चन्द्रगुप्त के विनाश की प्रतिज्ञा करता है। चन्द्रगुप्त को समाप्त करने के लिए निकले नद के दो पुत्र श्वेतकमल और नीलकमल। परन्तु ये दोनों कश्मीर में राजा अवन्तिदेव की पुत्रियों से विवाह करके आमोद-प्रमोद में डूब जाते हैं। चन्द्रगुप्त इन्हें बंदी बनाकर मगध की सीमा तक छोड़ देता है अब चन्द्रगुप्त मालव की राजधानी उज्जयिनी को अपना गढ़ बना लेता है। पाटलिपुत्र में राज-काज सँभाले हुए था महामत्री राक्षस और नन्द के पुत्रों के मध्य उत्तराधिकार के लिए संघर्ष चल रहा था। वे अपना सलाहकार बनाते हैं शकटार को। चाणक्य 'चचरीक' के रूप मे पाटलिपुत्र में रहकर वहाँ की गतिविधियों का अध्ययन करता है। नद के ज्येष्ठपुत्र पद्मकमल का विवाह नेपाल की राजकुमारी मधूलिका से हो गया। यह व्यभिचारणी स्त्री थी अत पद्मकमल ने अपना विवाह कामरूप नरेश की पुत्री से करने का निश्चय किया। राजकुमार चक्रकमल और उसके अन्य भाई पर मधूलिका का पूरा अधिकार था। मधूलिका चंचरीक से मिलकर अपनी सारी योजना बताती है। वह पद्मकमल को मृत्यु के कगार तक पहुँचा देती है राजकुमार उसकी हत्या करने के बाद परमगति को प्राप्त होता है। बसतपचमी के उत्सव-पर्व पर विष्णुगुप्त चाणक्य पाटलिपुत्र पर आक्रमण कर देता है। नंद को बदी बनाकर वह राजभवन पर अधिकार कर लेता है। और अपनी खुली शिखा बाँधने के लिए उसने नदवश की हत्या अविचलित भाव से करा दी। चाणक्य मधूलिका की दासी वीथिका से विवाह कर लेता है। चन्द्रगुप्त को सम्राट बनाकर चाणक्य, वीथिका के साथ काशी और प्रयाग को अपना निवास स्थान बनाता है। इसी समय वह 'अर्थशास्त्र' और 'कामसूत्र' जैसे ग्रन्थों का सृजन करता है।

कहानियाँ :-

'प्रेजेण्ट्स' नामक कहानी शशिबाला नाम की एक महिला की है जो गर्ल्स-स्कूल मे प्रधानाध्यापिका है। अधेड़ अवस्था में बन-सँवरकर आकर्षक दिखने वाली शशिबाला की मित्रता परमेश्वरी बाबू से हो जाती है। घनिष्ठता होने पर परमेश्वरी बाबू की रातें भी उसी के यहाँ बीतने लगती है। एक दिन शशिबाला की अनुपस्थिति में सुबह-सुबह वह उस कमरे की प्रत्येक वस्तु पर नाम की चिटें देखते है। पूछने पर शशिबाला इस रहस्य का उद्घाटन करती है- उसके जीवन में कई पुरुष आये और भ्रमवश वह उन्हें भावी पति के रूप में देखती रही। लेकिन प्रत्येक पुरुष उन्हें प्रेजेण्ट्स देकर चला गया। धीरे-धीरे शशिबाला भी इस भोग-विलास की अभ्यस्त हो जाती है। प्रेजेण्ट्स की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती जाती है। परमेश्वरी बाबू उसके सारे प्रेजेण्ट्स खरीदकर उसे अतिम प्रेजेण्ट्स देना चाहते हैं ताकि वह इन स्मृति चिन्हों की जलन से बच सके और वह कान्ट्रेक्ट साइन करके वहाँ से लौट आते हैं।

'अर्थ-पिशाच' वर्माजी की एक विचित्र सी कहानी है। कहानी एक ऐसे करोडपति की है जो अपनी सारी जिन्दगी धन एकत्र करता रहता है। उसके पास बेशुमार दौलत है। यह दौलत उसने गरीबों का शोषण करके और लोगों को धोखा देकर इकट्ठी की थी। डाक्टर उसके पास हमेशा एक छाया खड़ी देखता है। वृद्ध करोड़पति जिन्दगी चाहता है और बदले में डाक्टर को आधी सम्पत्ति देने को कहता है। सताये हुए लोग मरने के बाद भी छाया के रूप में उसके सामने आते हैं। वह शैतान सबको भगा देता है। जीवन की भीख मागते हुए उसकी मृत्यु हो जाती है और वह करोड़पति सर्प के रूप में आलमारी में प्रविष्ट हो जाता है जहाँ उसकी सम्पत्ति रखी हुई थी।

'वरना हम भी आदमी थे काम के' कहानी के मियाँ राहत पुलिस कांस्टेबल हैं और कविता

करने के बेहद शौकीन । वह कविता को अपने जीवन में उतार लेते हैं। लेकिन उनकी कोई भी कविता प्रकाशित नहीं हो पाती। आर्थिक समस्याओं से जूझते मियॉ राहत सडक के चौराहे पर सवारियों को दिशा-निर्देश देते हुए कविताएँ लिख लिया करते थे। एक बार वह एक महिला कांग्रेसी कार्यकर्ता की कार से टकराते हैं परन्तु उसका चालान नहीं करते। उसी महिला को गिरफ्तार करने के लिए उन्हें जाना पड़ता है। उन्हें सदमा लगता है और वह नौकरी से त्यागपत्र दे देते हैं। उनकी पत्नी चप्पलों से उनकी पिटाई करती है। अतः लेखक नौकरी छोड देने पर उन्हें अपने यहॉ चौकीदारी पर रख लेता है।

'बेकारी का अभिशाप' कैदी ललित मोहन की कहानी है। देश की स्वतंत्रता के लिए सघर्ष करते हुए काग्रेसी नेताओं की भेंट जेल मे इस कैदी से होती है। इसे चोरी के अपराध में जेल भेज दिया गया था। कैदी ललित मोहन के पिता अच्छी नौकरी में थे। उन्होंने अपने पुत्रों की शिक्षा में अधिक से अधिक व्यय किया था। परन्तु चारों पुत्र बेकारी का शिकार हो जाते हैं। बड़ा भाई राममोहन कानपुर में मिल में नौकर था। पिता की मृत्यु पर बिना दरख्वास्त चले आने पर उसे नौकरी से निकाल दिया जाता है। उसे तपेदिक हो जाता है। दूसरा भाई श्याममोहन बेकारी के कारण रेल से कटकर आत्महत्या कर लेता है। श्याममोहन की विधवा पत्नी और एक बच्चा तथा बड़े भाई की बीमारी, उसकी पत्नी, दो बच्चे और इनकी मॉ-- एक बड़ी जिम्मेदारी थी। तीसरे भाई कृष्णमोहन घर की हालत और बेकारी के कारण पागल हो जाते हैं। सबसे छोटा ललितमोहन एक रिश्तेदार के यहॉ विवाह में जाता है और साथ ही नौकरी का निवेदन भी करता है। असफल होने पर वह उनकी लड़की की शादी में आये चढावे के गहने लेकर फरार हो जाता है। जेवर बेचते समय पकडे जाने पर जेल भेज दिया जाता है।

'कुँवर साहब मर गए' नामक कहानी भोगी-विलासी रईस कुँवर कमल नारायण की है। जिस दिन काग्रेसी कार्यकर्त्ता अपना जुलूस सिविल लाइन से निकालने का फैसला करते हैं उसी दिन कुवर साहब की शराब खत्म हो जाती है। वह उसे लाने के लिए जाते हैं और जुलूस के बीच फॅस जाते हैं। सड़क के चौराहे पर जुलूस के ऊपर लाठीचार्ज होता है, वह कार से उतरकर कप्तान को निहत्थे लोगों पर लाठी चार्ज करने से मना करते हैं। नया कप्तान उन्हें पहचानता नहीं था अत उपेक्षा से उत्तर देता है। इस पर कुपित होकर कुॅवर साहब भी काग्रेसियों की तरह 'महात्मागांधी का जय' बोलने लगते हैं। कप्तान उन्हें गिरफ्तार कर लेता है। परन्तु यह पता चलने पर कि- काग्रेसी शराब की दुकान पर धरना देने जा रहे थे- वह अपनी गलती का अहसास करते हैं और भोग-विलास में डूब जाते हैं। दूसरे दिन समाचार-पत्रों में सारी खबर छपती है। लोग उनके पास देश-भक्ति का मार्ग छोड़ने का कारण पूछने जाते हैं परन्तु वह उन्हें यह कहकर लौटा देते हैं कि -- 'कुॅवर साहब मर गए'।

'एक अनुभव' नामक कहानी पृथ्वीनाथ नामक एक रईस व्यक्ति का अनुभव है। ये स्वच्छन्दता की दृष्टि से होटल में ठहरा करते थे। एक बार पृथ्वीनाथ पजाब के किसी होटल में ठहरते हैं। वहॉ मैनेजर की कुर्सी पर एक महिला विराजमान थी। रात्रि में इन्हें आसपास के कमरों से प्रेमालाप सुनाई देता है। कुछ देर तक वह अपना समय काटने का प्रयास करते हैं। विवश होकर अंत में वे एक महिला को अपने कमरे में बुला लेते हैं परन्तु उसकी निर्लज्जता देखकर उनका मन वितृष्णा से भर उठता है और वे उससे इस पेशे को अपनाने का कारण पूछते हैं। वह औरत परिस्थितियों से विवश होकर पेट भरने के लिए वेश्यावृत्ति को अपनाती है। पृथ्वीनाथ उसे सौ रूपया देकर एक महीने के लिए पेशा छोड़ देने का आग्रह करते हैं। वह पहले तो इकार करती है परन्तु बाद में रूपये ले लेती है और ऑख में आसू लिए हुए उसके कमरे से बाहर निकल जाती है।

'विक्टोरिया क्रॉस' नामक कहानी विक्टोरिया क्रॉस प्राप्त सुखराम की है। सुखराम अपनी पत्नी की पिटाई से परेशान होकर नदी में डूबने जा रहे थे परन्तु सेना के अफसरों ने उन्हें सेना में भर्ती

कर लिया। छ. महीने कवायद सिखाने के बाद उन्हें जहाज में भेज दिया गया। गोलाबारी शुरु होने पर इनकी हालत खराब हो गई। अत. इनकी बौखलाहट से घबराकर लोगों ने इन्हें बाध दिया। तीन दिन तक बंधे रहने के बाद ये रस्ती तुड़ाकर पीछे की ओर भागे। भयानक गोलाबारी के बीच भागते हुए सुखरामम को खरोंच भी नहीं आती है। अपनी जिन्दगी बचाने के लोभ में सुखराम भागते हुए कर्नल साहब के खेमे के पास आकर 'गोली' कहते हुए बेहोश हो जाते हैं। कर्नल जो दूरबीन से सब देख रहा था- ने समझा कि एम्यूनिशन खत्म होने की सूचना देने के लिए सुखराम ने जान की बाजी लगा दी है। सुखराम को उनकी वीरता के लिए विक्टोरिया क्रॉस प्रदान किया जाता है। परन्तु अपनी भीरु प्रवृति के कारण वह अभी तक अपनी पत्नी के हाथों पीटे जाते हैं।

'एक विचित्र चक्कर है' नामक कहानी देवेन्द्र और कमला की है। ये दोनों बचपन से एक-दूसरे को जानते हैं। देवेन्द्र एक बड़े जमींदार का पुत्र था परन्तु अब वैभव, स्मृति में ही अवशिष्ट रह गया था। उसे निर्धनता ही पैतृक सम्पत्ति के रूप में मिली थी। कुछ दिनों बाद कमला का विवाह हो जाता है। कमला प्रसन्न थी और देवेन्द्र भी कुछ वर्षों बाद कमला वैधव्य-भार से लदी हुई अपने पिता के घर आ जाती है। देवेन्द्र कविताएँ लिखा करता था और कमला को सुनाता भी था। कविताओं में देवेन्द्र का प्रेम प्रतिफलित होता है परन्तु कमला का कर्तव्यबोध उसे रोकता है। दोनों हमेशा के लिए न मिलने का सकल्प लेकर अलग हो जाते है। मरते समय कमला चार लाख रूपये देवेन्द्र के नाम कर जाती है। निर्धन देवेन्द्र अचानक धनी हो जाता है। प्रेमिका की उपेक्षा करके वह विवाह कर लेता है। साथ ही मद्यपान और भोग-विलास उसके जीवन का लक्ष्य बन जाते हैं।

'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' में एक अजीबोगरीब 'हीरोजी' मुगलों की कहानी सुनाते हैं-- एक बार शहशाह शाहजहाँ की लड़की जल जाती हैं। उसका घाव किसी प्रकार ठीक नहीं हो रहा था। लेप लगाने पर उसे जलन होती थी और वह लेप धो डालती थी। एक चतुर अंग्रेज को जब इस बात का पता चला तो उसने शहजादी को केवल बेसलीन लगाकर ठीक कर दिया। और इसके बदले पुरस्कार में एक तम्बू के नीचे आने वाली जमीन माँगी। बादशाह की स्वीकृति के बाद उस अंग्रेज ने रबर का तम्बू बनवाया और उस तम्बू को खींचते-खींचते अंग्रेज दिल्ली तक ले आये। वचन को निभाते हुए मुगलों ने दिल्ली छोड दी और कोई विरोध नहीं किया। इस प्रकार विलासी मुगलों की प्रभुसत्ता चतुर अग्रेजों ने अपहृत कर ली।

'बाहर-भीतर' नामक कहानी में महिला-विद्यालय के बोर्डिंग-हाउस में मेट्रन के कमरे में चार देवियॉ ताश खेल रही थी सुशीला देवी, भाग्यवती देवी, कमला देवी और मानिनी देवी। उसी समय निर्मला उन्हें अपने विवाह तय होने की सूचना देती है। उसका विवाह रमेश, आई०सी०एस० से तय हुआ था। ये चारों देवियॉ उसे बधाई देने के स्थान पर उसकी भर्त्सना करती हैं। निर्मला उन्हें बुरा-भला कहते हुए कमरे से निकल जाती है। उसके जाते ही ताश की गोष्ठी खत्म हो जाती है। ये चारों परित्यक्तायें अपने जीवन से दु.खी थी जिसे वे किसी के सामने व्यक्त नहीं कर पाती थी। भाग्यवती देवी और सुशीला देवी एक-दूसरे के सामने इस सत्य को स्वीकार करती हैं कि- विवाह करना बुरा नहीं है।

'प्रायश्चित' कहानी कबरी बिल्ली की है जो अनुभवहीन रामू की बहू की भूलों का नाजायज फायदा उठाया करती थी। मौका मिलते ही कबरी घी-दूध पर जुट जाती थी। रामू की बहू को सास की झिड़कियाँ मिलती थी और पति को मिलता था रुखा-सूखा भोजन। एक दिन योजनाबद्ध तरीके से बहू ने उसे खींचकर पाटा मारा। बिल्ली चारो खाने चित्त- न हिली, न डुली, सबने समझा कि बिल्ली मर गई। बिल्ली की हत्या से बहू को बचाने के लिए पंडित को बुलाया गया। बहू को घोर कुम्भीपाक नरक से बचाने का सारा दायित्व पंडित अपने ऊपर ले लेता है। पंडित और रामू की माँ के बीच मोल-भाव होते-होते जो दक्षिणा ठहरती है वह इस प्रकार है 11 तोले सोने की बिल्ली दस मन गेहूँ, एक मन

चावल, एक मन दाल, मन भर तिल, पॉच मन जौ और पाच मन चना, चार पसेरी घी और मन भर नमक इत्यादि। इसके अतिरिक्त इक्कीस दिन के पाठ के इक्कीस रूपये तथा इक्कीस दिन तक पॉच-पॉच ब्राह्मणों को दोनों समय भोजन। रामू की मॉ यह सब करने को विवश हो जाती है। उसी समय महरी हॉफते हुए कबरी बिल्ली के उठकर भाग जाने की सूचना देती हे।

'उत्तरदायित्व' आधुनिका मिस शीला की कहानी है। वह एक धनी बैरिस्टर पिता की पुत्री है। दुर्भाग्यवश गरीब जगदीश का प्रेम शीला से हो जाता है। वह अपना सर्वस्व लुटाकर भी उसको प्रसन्न रखना चाहता है। किन्तु शीला जगदीश के साथ मात्र खेल कर रही थी, प्रेम नहीं। जगदीश क्षणिक आवेग के क्षणों को भ्रमवश प्रेम समझ बैठता है। और शीला के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखता है। शीला विवाह से इंकार कर देती है। प्रेम को एक पवित्र बधन मानने वाला जगदीश आत्महत्या कर लेता है उसका मित्र 'आत्महत्या की घटना' के दो महीने बाद शीला के विवाह की खबर सुनता है। वह उससे मिलने जाता है और जगदीश की आत्महत्या के लिए उसे उत्तरदायी ठहराता है परन्तु शीला स्वय को उत्तरदायी नहीं मानती।

'परिचयहीन यात्री' कहानी में इटर क्लास में अपने मित्र के साथ सफर करते हुए लेखक की भेंट लम्बा घूघट लिए एक महिला से होती है। डिब्बे के सभी यात्री उसका मुख देखने का प्रयास कर रहे थे। तभी उसके पति आकर उसके पास बैठ जाते है और सभी की उत्सुक दृष्टियों को देखते हुए उस परिचयहीन यात्री का परिचय कराते हैं। घूघट हटने पर उसकी कुरुप मुखाकृति देखकर लोग मुँह फेर लेते हैं। परन्तु उसका पति अपनी पत्नी के मन में छिपे सौन्दर्य को ही देखता है। उसने कुरुपता को निर्लक्ष्य करके उसकी आत्मा से अपना सम्बन्ध जोड़ लिया था। उस स्त्री का हृदय अपने पति के लिए समर्पित था। वह अपने पति के लिए बड़े-से-बड़ा त्याग करने को प्रस्तुत थी। गाड़ी रुकने के साथ ही बात अधूरी छोड़कर सभी उतर जाते हैं।

'बॉय एक पेग और' कहानी विश्वकान्त और माधवी की है। विश्वकान्त एक धनी पिता का पुत्र है। अनिद्य सुन्दरी माधवी से उसका प्रेम हो जाता है। उन दोनों का विवाह भी तय हो गया। विश्वकात के पिता ने माधवी की आखों में न जाने क्या देखा कि विश्वकांत का विवाह उसके साथ करने से इकार कर दिया। परन्तु विश्वकात अपने निश्चय पर अडिग था। इसी बीच उसे तार द्वारा पिता की अस्वस्थता और व्यापार में घाटा आने की सूचना मिलती है। विश्वकात तो प्रेम के पागलपन में सब भूला रहता है किन्तु माधवी उसे जबर्दस्ती पिता के पास भेज देती है। उसके पिता ने उसे गलत तार दिया था। उसके दोस्त निर्मल के पिता की सम्पत्ति नीलाम हो रही थी और उसके पिता जायदाद खरीद रहे थे। वहॉ से लौटकर उसे पता चलता है कि व्यापार में घाटे की सूचना से माधवी ने निर्मल से विवाह कर लिया था। विश्वकात प्रेम में धोखा मिलने के बाद मदिरापान में अपने को डुबो देता है और माधवी कंगाली में घुट-घुट कर पाच वर्ष बाद दम तोड़ देती है।

'इन्स्टालमेंट' कहानी अवध के छोटे-मोटे ताल्लुकेदार हरसहाय के पुत्र चौधरी विश्वम्भर सहाय की है। यह अपने पिता से मत वैभिन्न होने के कारण प्रयाग में अलग रहते थे। एक दिन एक मित्र के यहॉ से लौटने पर उन्हें कोई सवारी नहीं मिलती। निराश होकर वह एक तांगे पर बैठ जाते हैं। उस इक्के, घोड़े और इक्का मालिक की हालत बहुत खस्ता थी। कुछ दूर जाने पर उन्हें अपनी दो सहपाठिनें तागे पर जाती दिखाई पड़ती हैं। वह उनसे बचने की कोशिश करते हैं। किन्तु वे दोनों उसे फटीचर इक्के पर बैठा देख खिलखिलाकर हॅस पड़ती हैं। प्रभा और कमला की हंसी से उसके नसम्मान को ठेस पहुँचती है। और वह आर्थिक स्थिति की ओर ध्यान न देते हुए केवल इन दोनों को दिखाने के लिए 'इन्स्टालमेंट बेसिस' पर कार खरीद लेते हैं वह कार पर घूमते हैं परन्तु ये दोनों सहपाठिनें फिर उन्हें दिखाई नहीं देती

'दो पहलू' कहानी के दो पहलू हैं-- रामेश्वर और बूढ़ा भिखारी। रामेश्वर अपने अध्ययन काल में प्रथम श्रेणी प्राप्त करता है। वह कान्ता से प्रेम करता है। उसके पिता उसे आई०सी०एस बनाने के लिए विदेश भेजना चाहते हैं। वह घूमने के लिए निकलता है, रास्ते में उसे आजादी के दीवानों का जुलूस मिलता है। रामेश्वर को जुलूस में गोली लग जाती है और वह अपने प्राणत्याग देता है। दूसरी ओर साठ साल का बूढ़ा और कोढ़ी भिखारी- अपनी भूख मिटाने के लिए कुत्तों से संघर्ष करता है। माघमेला में महंत का हाथी बिगड़ जाता है तो वह भिखारी स्त्रियों और बच्चों को धक्का देते हुए भागता है और अपनी जान बचा लेता है।

'मेज की तस्वीर' कहानी रामनारायण की है। रामनारायण छात्र जीवन में ही मनोरमा से प्रेम करने लगता है। दोनों विवाह नहीं करने का निश्चय करते हैं। परन्तु मनोरमा एक लखपति आदमी से विवाह कर लेती है। रामनारायण दु:खी होता है परन्तु उसका प्रेम ज्यों का त्यों बना रहता है। वह भी विवाह कर लेता है। उसकी पत्नी बहुत सीधी है। उसने कभी रामनारायण की मेज पर रखी मनोरमा की तस्वीर को लेकर विरोध नहीं किया। रामनारायण मनोरमा से मिलना चाहता है परन्तु आर्थिक विवशता उसे ऐसा नहीं करने देती।

'विवशता' नामक कहानी लीला और रमेश के प्रेम को लेकर लिखी गई है। ये दोनों पहले एक-दूसरे से प्रेम करते थे। परन्तु लीला का विवाह एक अन्य व्यक्ति रामकिशोर से हो जाता है। और रमेश भी कुछ दिनों बाद विवाह कर लेता है। पाँच वर्ष बाद वह लीला के घर पहुँचता है ।इस बीच लीला बहुत कमजोर हो चुकी होती है। बाबू रामकिशोर एक बिगड़े हुए रईस थे। उन्होंने रमेश का दिल खोलकर स्वागत किया। एक दिन जब रमेश घूमने गया था, रामकिशोर गिरफ्तार हो जाते हैं। लीला विवशता के कारण रमेश की अटैची से दो सौ रूपये निकालकर रामकिशोर को डिग्री से मुक्त करा देती है। स्टेशन में वह रमेश के सामने अपना अपराध स्वीकार कर लेती है और रमेश से क्षमा मांगती है।

'कायरता' कहानी का रामेश्वर तीस वर्ष पहले अपने भाई के साथ हँसी-खुशी जीवन व्यतीत कर रहा था। भाई की मृत्यु के उपरान्त भावज उसे घर से निकाल देती है। उसके भाई के कोई सतान नहीं थी। अतः रामेश्वर कलकत्ते की एक गंदी कोठरी में इस आशा से अपनी जिन्दगी व्यतीत करता है कि एक दिन सारी सम्पत्ति उसे मिलेगी। परन्तु उसकी भावज अपनी मृत्यु से पहले अपने भतीजे को गोद लेकर अपना उत्तराधिकारी बना जाती है। रामेश्वर और उसके बेटे मुकदमा लड़ते हैं। परन्तु परमानन्द जज को पचास हजार देकर फैसला अपने पक्ष में करा लेता है। रामेश्वर उसे गोली मारना चाहता है परन्तु अपनी कायरता के कारण ऐसा कर नहीं पाता।

'काश मैं कहा सकता' निरुपमा नामक एक ऐसी स्त्री की कहानी है जो मजबूरी के कारण अपना शरीर बेचती है। उसके पति कांग्रेसियों के जुलूस में हिन्दुस्तानी कलेक्टर की बर्बरता का शिकार होकर जान से हाथ धो बैठते हैं। नये कलेक्टर रामनाथ के यहाँ वह ट्यूशन पढ़ाती है। परन्तु वह उस गिरे हुए चरित्र की औरत से अपने बच्चों को शिक्षा दिलवाना उचित नहीं समझते। निरुपमा एक अध्यापिका है परन्तु उसका परिवार बड़ा था। अतः उसे गृहस्थी चलाने में परेशानी अनुभव होती है। एक दिन रामनाथ उसे एक तरुण युवक के साथ रेस्तरों से निकलते हुए देखकर घृणा से मुँह बिचका लेते हैं परन्तु ट्यूशन नहीं दिलवाते।

'रेल में' एक अधेड़ व्यापारी सज्जन की कहानी है जिनसे लेखक की भेंट रेल-यात्रा के दौरान होती है। इन्होंने तीन विवाह किये थे। तीसरी पत्नी की आयु इनकी बेटी के समान थी। ये वृद्ध महोदय हीन भावना के कारण अपनी सुंदरी और युवा पत्नी से किसी का बोलना भी पसद नहीं करते थे परन्तु उनकी पत्नी सबसे हसती बोलती है पति की संदेहास्पद दृष्टि भी उसे रोक पाने में असमर्थ होती है

'कुँवर साहब का कुत्ता' कहानी के कुँवर साहब विलायती कुत्ते पालने के बेहद शौकीन थे। एक-एक हजार रूपये खर्च करके वह विदेशों से कुत्ता मंगवाते थे। उन कुत्तों के भोजन, देख-रेख और बीमारी पर अंधाधुध खर्च होता था। परन्तु मनुष्य की भावनाओं की उनकी दृष्टि में कोई कीमत नहीं थी। एक दिन धोबी क़ा गधा उनके एक कुत्ते को मार डालता है। सारी मनुष्यता ताक में रखकर वह उस गधे के माथे पर गोली मरवा देते हैं धोबी का परिवार रोता-बिलखता रह जाता है। यह गधा उनकी जीविका का साधन था अत. उस रोज उसके घर खाना नहीं बनता और कुँवर साहब डेढ़ हजार रूपये भेजकर दूसरा कुत्ता मगवा लेते हैं।

'तिज़ारत का नया तरीका' नामक कहानी में खुशवत राय को जब अपने पिता की मृत्यु की सूचना मिलती हे तो वह खुश होते हैं। उन्हें लगता है कि सम्पत्ति एक गलत आदमी के हाथ से सही आदमी के हाथ में आ गयी। कर्ज चुकाकर वे बची हुई रकम से व्यापार करने की सोचते हैं। वह विदेशी फर्म की एजेन्सी लेते हैं, यूनिवर्सिटी कैम्पस में रेस्ट्रा खोलते है, जाली सिक्के चलाते हैं। लेकिन अपने ऐश, आराम और काहिली के कारण हर जगह असफल होते हैं। अत में वह सेठ को जूते मारकर पैसा कमाने की सोचते हैं। जूता मारने पर उन्हें जेल जाना पड़ता है। परन्तु उनका उत्साह कम नहीं होता। वह सोचते है कि अपनी इज्जत बचाने के लिए सेठ कभी न कभी रूपये अवश्य देगा

'अनशन' की कहानी मस्तराम पाण्डेय की है। परीक्षा में अपना प्रश्नपत्र खराब होने पर वह परीक्षक के इष्टदेव को प्रसन्न करने के लिए व्रत रखते है। व्रत के दिन फलाहार में ढाई सेर मखाने की खीर, आधा सेर मलाई खाते हैं। उसे पचाने के लिए वह आधा घंटे तक रसोई में पैर फैलाकर बैठे रहते हैं और गर्मी के कारण अल्फ्रेड पार्क के एक नाले में जाकर सो जाते हैं। मुशी ने उन्हें मृत समझा और थाने में जाकर सूचना दे दी। थानेदार ने क्रान्तिकारी समझकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया। जेल में खराब भोजन मिलने पर वह अनशन करते हैं और दूध मिलने पर गटागट पी जाते हैं। अत में सारी तहकीकात के बाद उन्हें छोड़ दिया जाता है।

'लाला तिकड़मी लाल' नामक कहानी में लाला तिकड़मी लाल सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार को पुरस्कार देकर प्रसिद्धि प्राप्त करना चाहते थे। ठाकुर नामकभावन सिंह की प्रसिद्धि और खातिरदारी देखकर उन्हें यह युक्ति सूझी थी। कवि फटीशजी उनके कंजूस स्वभाव को भली-भाँति जानते थे। उन्हें यह सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ, यहाँ लालाजी पुरस्कार के लिए आई पुस्तकों को बेचकर छ. सौ रूपया खड़ा कर लेते हैं। तिकड़म-पुरस्कार की राशि पाँच सौ रूपये थी। टेवजी को पुरस्कार मिलता है परन्तु लालाजी उन्हें रूपये नहीं देना चाहते। अत· फटीशजी मच पर एक हाथ में चप्पल लिये हुए आते हैं और उनकी सारी पोल खोल देते हैं। उस दिन लाला तिकड़मीलाल जेल जाने से बड़ी मुश्किल से बच पाते हैं।

'नाजिर मुशी' नामक कहानी के नाजिर मुशी गरीब होते हुए भी बडे मिलनसार, हसमुख और हाजिर-जवाब व्यक्ति थे, प्रत्येक समाज में उनका यथोचित सम्मान था। एक बार शादी में वर और कन्यापक्ष में मनमुटाव हो जाता है। ये अपनी युक्ति के बल पर समझौता करा देते हैं। किन्तु समय बदलने के साथ ही उनका सम्मान घटता जाता है। पच्चीस वर्ष बाद जब लेखक उसी परिवार की एक शादी में जाता है तो वहाँ उनका तिरस्कार देखकर बहुत दु·खी होता है। वे सिर्फ खाली समय में ऊबते हुए लोगों के मनोरजन का साधन थे। उनके जैसा जिन्दादिल आदमी भी धन के सामने अपनी आत्मा को दबा चुका था।

'पराजय अथवा मृत्यु' की भुवनेश्वरी देवी किशोरावस्था से ही इस भ्रामक धारणा को शिकार हो गयी थी त्याग और बलिदान की भावना के कारण ही स्त्री पुरुषों की गुलाम बनी हुई है उनके पुरुष-विरोधी लेख प्राय· पत्र पत्रिकाओं में छपते थे एक दिन एक युवक अपनी बहन के एडमीशन के

लिए आता है। वह वहाँ रखी पत्रिका में प्रकाशित इनका लेख 'पुरुष पशु है' पढ़ता है - युवक रमेश इनके विचारों से सहमत नहीं होता। एक दिन पार्क में रात्रि के समय वह भुवनेश्वरी देवी और उनकी मित्र की गुण्डों से रक्षा करता है। उसके बाद उसका और भुवनेश्वरी का सम्पर्क बढता जाता है। वह इनसे विवाह करना चाहता है। परन्तु ये अपने पुरुष-विरोधी विचारों की प्रसिद्धि के कारण ऐसा नहीं कर पाती और दु:खी होकर आत्महत्या कर लेती है, मरते समय उनके मुँह से 'रमेश' का ही नाम निकलता है।

'दो बाके' में लखनऊ में वेश्याओं के मुहल्लों मे रहने वाले शोहदों की झूठी शान का वर्णन है। एक दिन दो बांकों में ठन जाती है और दोनों के बीच द्वन्द्व युद्ध की घोषणा हो जाती है। दोनों लड़ने के लिए तैयार- परन्तु लडना नहीं चाहते। अत में बिना लड़े दोनों सुलह कर लेते हैं। एक देहाती जो लम्बा-चौड़ा लट्ठ लिये इनकी कुश्ती देखने आया था, कहता है- 'मुलास्वाग खूब भर्यों। परन्तु दोनों बाके खून का घूट पीकर रह जाते है, क्योंकि बाके देहातियों से नहीं लड़ सकते। उनके शार्गिद अपने उस्ताद की मौजूदगी में हाथ कैसे उठा सकते हैं।

'छह आने का टिकट' कहानी के रामखेलावन नारायण प्रसाद सिंह अपनी कविताए पत्रिका-सम्पादक किशोरजी के पास भेजते रहते हैं। परन्तु किशोरजी उन कविताओं को अपनी पत्रिका में स्थान नहीं दे पाते। अत एक दिन वे स्वय अपनी रचनाए लेकर किशोर जी के कार्यालय में उपस्थित हो जाते हैं। बिन बुलाये मेहमान रामखेलावन बिना संकोच किशोरजी के यहाँ नाश्ता करते, भोजन करते, उनके ट्राम के टिकट पर कलकत्ते की सैर करते। एक दिन लालचवश रात्रि के ग्यारह बजे तक बस का उपयोग करने के विचार से वे एक ऐसी बस में बैटे जो किशोरजी के निवास की ओर लौटती ही नहीं थी। अत उन्हें नौ मील पैदल चलना पड़ता है। पुलिस वाले उन्हें शराबी समझकर थाने ले जाते है। पता चलने पर वे किशोरजी के यहाँ फोन करते हैं। अब किशोरजी रामखेलावन से साफ-साफ जाने के लिए कहते हैं। लेकिन रामखेलावन नहीं लौटते, क्योंकि वह अपने मामा के ससुर के बहनोई के साथ- जो टिकट कलेक्टर है- बिना टिकट कलकत्ता आये थे और उन्हीं के साथ वापस लौटना था।

'रहस्य और रहस्योद्घाटन' नामक कहानी में 'शनिवार क्लब' में शाम के समय एकत्रित हुए चार मित्र शराब पीने और रमी खेलने के साथ ही अपना वार्तालाप आध्यात्मिक और पारभौतिक बातों की ओर मोड़ देते हैं। मि० भोलानाथ और लोकनाथ मिश्र अपने-अपने जीवन की- क्रमश. सोने की माला खोने और मिलने की तथा सट्टे के खुलने वाले भाव बताने वाले युवक की कहानी सुनाते हैं। डाक्टर महेश्वरनाथ पारभौतिक विद्या का विश्लेषण करने के बाद भी इस विद्या को सरल नहीं मानते, इसलिए वह अपने जीवन में घटित ऐसी ही रहस्यमय घटना सुनाते हैं। अत में बेयरा इन सभी बातों के मूल तत्व का रहस्योद्घाटन करता है।

'पटा-बनेठी' में रमेश की पत्नी और महामाया नामक दो स्त्रियों का चित्रण है। रमेश की पत्नी तो अपने पति की तानाशाही को आंसू बहाती हुई सह लेती है। परन्तु उनके मुँहबोले भतीजे की भावी पत्नी महामाया बहुत तेज स्वभाव की है। वह पटा-बनेठी अर्थात् लाठी चलाने का प्रदर्शन करने वाली लड़की है। अत वह उनके भतीजे से बात प्रारम्भ करते ही लाठी हाथ में पकड़ लेती है। रमेश का भतीजा विवाह प्रस्ताव अस्वीकार कर देता है- अपने सघर्षमय दाम्पत्यजीवन की कल्पना करके।

'पियारी' कहानी की पियारी एक ऐसी स्त्री है जो पैसा नहीं होने पर भी बन सवर कर रहना पसद करती हैं उसका पति बैंक में चपरासी है। पियारी अपने पति नारायण के दफ्तर जाने के बाद आवार क़िस्म के लोगों के साथ अपना समय व्यतीत करती है सीधा-साधा नारायण अपनी पत्नी की गहने कपड़े की लालसा पूरी करने के लिए बैंक से गबन करता है और जेल जाता है पियारी पति के

लिए रोती है परन्तु अपनी दुश्चरित्रता छोड़ नहीं पाती। पचीस साल बाद कुष्ठ रोग होने पर उसे अपने कुकर्म का अहसास होता है और अपने पति की प्रतीक्षा करते-करते एक दिन वह मर जाती है।

'दो रातें' नामक कहानी में जीवन की भेंट दिल्ली से कलकत्ता जाते समय एक सुदर युवती से होती है। जीवनकृष्ण एक रचनाकार है और युवती उसकी प्रशसिका। रेल के एकात डिब्बे में जीवन के साथ बितायी गई निश्छल प्रेम की दो रातें उसके जीवन की अमूल्य निधि बन जाती है। वह कलकत्ते में जीवन से पीछा न करने की प्रार्थना करती है और चली जाती है। एक दिन जीवन कलकत्ते के वेश्यालय में जाता है और वहाँ उसकी मुलाकात उसी सुंदर युवती से होती है। जीवन को वहाँ देखकर उसका मन टूट जाता है। वह जीवन का चित्र फाड़ देती है, और एक वेश्या के रूप में जीवन का स्वागत करती है। जीवन उसकी पागलपनवाली हसी का सामना न कर पाने के कारण भागता है।

'बतंगड़' कहानी के मिस्टर रघुपति सहाय एक इंजीनियर है और उनका मानना है कि एक बात दस आदमियों में कहने-सुनने के बाद इतनी बदल जाती है कि उसका असली रूप हास्यास्पद हो जाता है। रघुपति सहाय अपनी बात की पुष्टि के लिए एक बात कहते हैं-- 'कल लाला रामनाथ के यहाँ दावत थी, बड़े जश्न रहे, यही बात विभिन्न मोड़ लेते हुए इस वाक्य से समाप्त होती है- 'कल लाला रामनाथ की बीबी तमाम गहना-नगदी लेकर उनके सेक्रेटरी भूषण के साथ भाग गई'। बात समाप्त करने वाला व्यक्ति अजित प्रसाद जब रामनाथ से इस बात की पुष्टि करना चाहता है तो रामनाथ उस पर मानहानि का दावा ठोंक देते हैं। मित्रों की गवाही से अजित प्रसाद बच पाते हैं।

'खिलावन का नरक' कहानी का खिलावन अपनी नवविवाहिता पत्नी सुखिया और परिवार के अन्य सदस्यों को छोड़कर बम्बई चला जाता है। वह वहाँ पैसा कमाना चाहता है ताकि उसका परिवार सुख से रह सके। तीन वर्ष बाद जब खिलावन अपने गाँव लौटता है तो उसके पास टिकट तक के लिए पैसे नहीं होते। वह बड़े उत्साह से घर आता है और सोचता है कि घर में सभी लोग उसके आने से बहुत खुश होंगे। रास्ते में बारिश से बचने के लिए वह एक खण्डहरनुमा मदिर में शरण लेता है। वहाँ वह अपनी पत्नी सुखिया और जिलेदार का वार्तालाप सुनता है। सुखिया की चारित्रिक गिरावट उसे दु खी कर देती है और वह घर न जाकर पुन' बम्बई के नारकीय जीवन में लौट जाता है।

'आवारे' में उत्तर प्रदेश के विभिन्न नगरों से पाँच युवक बम्बई आते हैं- भविष्य की सुदर कल्पनाएं लेकर। लेकिन शीघ्र ही इनका मोह फिल्म लाइन से भंग हो जाता है। ये पांचों युवक छोटे-मोटे काम करके अपनी जीविका चलाते हैं। शिवशंकर पाण्डे अपनी भावी गवार और बदशक्ल पत्नी से पीछा छुड़ाने के लिए फिल्म लाइन की किसी सुंदरी को अपनाना चाहता है। वह एक्स्ट्रां का काम करता है। अपना खर्चा पूरा करने के लिए अपने कमरे में दूसरे किरायेदार रख लेता है। जसवंत गला अच्छा होने के बावजूद ट्यूशन से अपना गुजारा करता है। परमेश्वरी दयाल नशे में मैनेजर को मार देते हैं अत नौकरी छूट जाने पर कमीशन एजेन्सी का काम करते हैं। छबीलदास अपनी प्रेमिका सुशीला को लेकर बम्बई आ जाते हैं। उन्हें क्लर्की करनी पड़ती है। पांचवे किरायेदार रामगोपाल, सुशीला को फिल्म लाइन में काम दिलवाकर स्वयं भी घुसने का प्रयत्न करते हैं। अपने रूप और यौवन के कारण सुशीला को काम मिल जाता है। परन्तु छबीलदास और रामगोपाल बम्बई में आवारे की जिन्दगी गुजारने के लिए विवश होकर रह जाते हैं।

'राख और चिगारी' गीता नामक नारी की व्यथा कथा है- अपने मरते हुए भाई को परिवार के भरण-पोषण का वचन देकर जीवन का लक्ष्य माँ, भाभी और बच्चों तक ही सीमित कर लेती है। तभी गीता की जिन्दगी में एक युवक आता है यह युवक भावुक है और कवि है उसके प्रेम के में गीता कुछ समय के लिए अपने कठोर को भूला बैठती है अपनी माँ और भाभी से

छिपाकर गीता अपने विवाह की तैयारी करती है। अन्त में उसकी माँ, भाभी आदि भी उसके विवाह को अधिक धूमधाम से करने के लिए पहुंच जाती हैं। उन्हें देखकर गीता अपने कर्तव्य को नकार नहीं पाती। अपने भाई के विश्वास की रक्षा करने के लिए गीता राख की ढेरी के समान प्राणहीन जीवन व्यतीत करने को विवश हो जाती है।

'उन्माद' के चित्रकार मधुसूदन शर्मा का सबंध एक विवाहिता स्त्री नीलिमा से हो जाता है। इस प्रणय की कुचर्चा से घबराकर मधुसूदन अपने परिवार को अपने पास बुला लेता है और नीलिमा से एकान्त में मिलना बद कर देता है। इस व्याघात से नीलिमा का प्रेम और अधिक उद्दाम रूप धारण कर लेता है। मधुसूदन अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बचाने के लिए विदेश चले जाते हैं। किन्तु नीलिमा के आकर्षण के कारण वह पुनः वापस आ जाते हैं। इस बार नीलिमा अपने परिवार के मोह में उनसे न मिलने का संकल्प लेती है किन्तु कुछ वर्षों बाद अपना धैर्य खो बैठती है। वह मधुसूदन के साथ विदेश जाकर नया घर-ससार बसाना चाहती है। नीलिमा के उन्माद से घबराकर मधुसूदन फिर विदेश चले जाते हैं-- शॉक ट्रीटमेंट द्वारा इलाज कराने के लिए।

'क्षमायाचना' के ज्ञानप्रकाश बदलते हुए परिवेश से समझौता करके हाथ सिकोड़कर खर्च करते हैं। किन्तु उसके पिता रविप्रकाश अपनी पुरानी आन-बान और मिथ्याभिमान को छोड़ नहीं पाते। रिटायर्ड होने के बाद महंगाई का जहर धीरे-धीरे उनके ऊपर चढ़ने लगता है। उनकी बहन गगादेवी सपरिवार उनके यहाँ किसी परेशानी को लेकर आती है। उनके मित्र इस समस्या का समाधान कर देते हैं और उन्हें अपना आधा बगला किराये पर उठाने की सलाह देते हैं। रविप्रकाश अपने पुत्र ज्ञानप्रकाश से बम्बई में मात्र दो कमरों का फ्लैट खरीदने पर लड़ चुके थे। परन्तु अब परिस्थितियों से समझौता करके अपने पुत्र से क्षमायाचना करने की सोचते हैं।

'सकट' के रत्नाकर सिह एक ताल्लुकेदार के पुत्र हैं। पत्नी के आग्रह के कारण वह अपने पुत्र का मुडन धूमधाम से करना चाहते हैं। इस आयोजन के लिए रत्नाकर सिह किसी का अहसान नहीं लेना चाहते। भोज और शराब की व्यवस्था उनके भाई पद्माकर सिह और दिवाकर सिह कर देते हैं। परन्तु कवि सम्मेलन में आये कवि अभिशप्तजी की फीस की समस्या उठ खड़ी होती है। उनके भाई पद्माकर सिह अपने फार्म से एक मन टमाटर और एक मन बैंगन तुडवाकर भेजते हैं। परन्तु तब तक भोजन बन चुका होता है। अतः रत्नाकर सिह सब्जी के झाबे सहित कविजी को लखनऊ छोड़ आते हैं। कवि के मित्र उन्हें सब्जी बेचने की सलाह देते हैं। शाम को खाली ठेला के साथ कवि जी के जेब में होते हैं एक सौ पन्द्रह रूपये।

'रगीलेलाल तीर्थयात्री' नामक कहानी के अविनाशचन्द्र इण्डियन फॉरेन सर्विस में एक उच्च पद पर कार्य करने के बाद रिटायर्ड हुए थे। अपने पुत्र की सिफारिश के लिए वह लखनऊ आते हैं। उनका पुत्र जीवनचन्द्र मिरजापुर में एक सरकारी सीमेंट फैक्टरी का जनरल मैनेजर है। मिनिस्टर रामअधार ने उसका ट्रासफर कर दिया था उसकी ईमानदारी के कारण। अविनाशचन्द्र अपने बेटे का ट्रान्सफर कैंसिल कराकर अपने बचपन के मित्र बनवारीलाल से मिलने पहुँचते हैं। एक छोटी सी दुकान का मालिक बनवारी बाईस-तेईस वर्षों में ही लखनऊ का सबसे बड़ा सेठ बन जाता है। उसी के बड़े बेटे किशन के कारण ही रामअधार जीवन का ट्रांसफर करते हैं। बनवारी का चौथा पुत्र रगीलेलाल अपना परिचय तीर्थयात्री के रूप में देता है। साल में महीना-पन्द्रह दिन के लिए जेलयात्रा करने के कारण इसका यह नाम पड़ा। जब भी बनवारी लाल की फर्म में छापा पड़ता था वे अपने इस आवारा पुत्र को आगे कर देते थे।

वसीयत कहानी के आचार्य चूड़ामणि मित्र दर्शनशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान थे ये वाराणसी
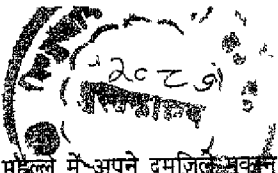
लका मुहल्ले में अपने दुमजिले मकान में रहते थे। स्वय कजूसी में रहकर जोड़ी गई सम्पत्ति क वसीयतनामा [illegible] अपने निष्ठावान मित्र जनार्दन जोशी को सौप जाते हैं। आचार्य के दो विवाहित पुत्र, तीन विवाहित पुत्रियॉ, विधवा पत्नी और नौकर बुधई है। बुधई सदैव आचार्य के पास रहता था। पत्नी जसोदा देवी अपने छोटे पुत्र के पास लखनऊ में रहती थी। आचार्य चूड़ामणि अपनी सम्पत्ति उन्हीं लोगों को दे जाते हैं जिनकी बुराइयो के विषय में उन्होंने टीका-टिप्पणी की थी। मझली लड़की सुशीला और प्रिय शिष्य जनार्दन जोशी को सूखा आर्शीर्वाद दे जाते हैं। जोशीजी को वे अपना प्रिय तोता दे जाते हैं। रास्ते में घर जाते समय तोता उन्हें मूर्ख और स्वय को पडित बताता है। जनार्दन जोशी झुझलाकर तोते को उड़ा देते हैं।

'खानदानी-हरामजादे' कहानी में सजीवन पाण्डे के पिता गोबरधन पाण्डे रेलवे मे पानी पिलाने का काम करते थे। वे अपने पुत्र को खलासी या प्वाइण्टमैन बनाना चाहते थे। परन्तु काग्रेस के अध्यक्ष शोभालाल यादव की सेवा-सुश्रुषा के कारण वह बनता है मिनिस्टर। उसका कहना है कि हरमजदगी तो खानदानी लोगों का गुण होता है। मुस्लिम वक्फ बोर्ड के चेयरमैन शेख मुस्तफा कामिल को भी वह पांच एकड़ भूमि का प्लाट देकर खुश कर लेता है। इस प्रकार मिडिल पास बागों से आम चुराने वाला, अध्यापक को पीटने वाला सजीवन काबिल मिनिस्टर बन जाता है।

'समझौता' कहानी के ब्राच मैनेजर जयकृष्ण शर्मा बड़े चलते-पुर्जे आदमी हैं। उनकी पत्नी रत्नप्रभा अतिशय सुन्दरी किन्तु कठोर मुद्रावाली है। इनके एक पुत्र और पुत्री बसंतप्रभा है। शर्माजी अपनी फर्म को बिगड़ी हुई स्थिति को संभालने के एिल कृषि आयुक्त चन्द्रप्रकाश की स्टेनो अनुराधा सैंजानी को एक बहुमूल्य साड़ी देकर पटाने की योजना बनाते हैं। वह अनुराधा के नाम भावुकता से भरा एक पत्रि लिखकर पैकेट में रख देते हैं। वह पैकेट धोखे से उनकी पत्नी के पास पहुँच जाता है। उसकी पत्नी क्रोधित होकर अपने पिता के पास चली जाती है। जयकृष्ण शर्मा के बहुत मनाने के बाद वह उनसे सशर्त समझौता करती है और इसके बाद ही घर लौटती है।

'सौदा हाथ से निकल गया' कहानी के राय इकबाल शंकर हाशिम कबाड़ी के यहाँ से एक तीन टाग की मेज २५ रूपये में खरीदते हैं। हाशिम ने नवाब झम्मन की बेगम से यह मेज खरीदी थी। हाशिम के अनुसार आबनूस की यह काली मेज नसीरुद्दीन हैदर के खानदान वालों की है। इस मेज का एक पाया अलग था। राय इकबाल शंकर के मित्र जैसुखमीरचन्दानी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के क्यूरियों के व्यापारी हैं, लखनऊ आते हैं। उनसे मेज का जिक्र चलता है। वह बताते हैं कि नेपोलियन की पत्नी जोजेफीन के साथ आस्ट्रेलिया से एक बढ़ई एलबर्ट गुथर आया था। उसने एक ही डिजाइन की तीन मेजें बनाई थी। उनमें एक अमेरिका के करोड़पति मिस्टर विण्डहम के पास, दूसरी मारसाई के म्यूजियम में, तीसरी का पता नहीं चल रहा है। जैसुख को लगता है कि यह वही मेज है जो अवध के नवाब नसीरुद्दीन हैदर के पास थी। राय साहब की पत्नी रद्धो बीबी खाना बनाते समय उस मेज का टूटा पाया जला देती है। घर आकर खाना खाने के बाद जब उन्हें यह बात पता चलती है तो दोनों सिर पकड़ लेते हैं। मेज के उसी टूटे पाये में बढ़ई का नाम खुदा होता है। इस प्रकार एक तगड़ा सौदा उनके हाथ से निकल जाता है।

'गनेसीलाल का रामराज' कहानी का गनेसीलाल अपनी चालाकी के बल पर मामूली सवाददाता से विधायक बन जाता है। उसे विश्वास है कि वह शीघ्र ही मंत्री बन जायेगा। गनेसीलाल ख़्वाजा साहब की हवेली का ताला तोड़कर उसमें अधिकार कर लेते हैं और इक्का-तांगा यूनियन का दफ्तर खोल लेते हैं जब त्यागी जी —— —— वर्ष बाद लखनऊ लौटते हैं तो [illegible] पत्र बंद हो चुका होता है और गनेसीलाल का पत्र 'रामराज' निकलने वाला होता है उसे [illegible] नियुक्त करने वाले

त्यागीजी जब रामराजी सरकार द्वारा रेल का किराया बढाये जाने की बात उठाते हैं। तो गनेसीलाल उत्तर देते हैं कि देहाती आदमी भी शहरों की यात्रायें क्यों करने लगा है। गनेसीलाल गोमती किनारे छतरमजिल के पास अपना आश्रम 'पर्णकुटी' बनाकर उसी में रहते है।

'दिल का दौरा' कहानी के गौरमोहन ज्ञानी परिवहन विभाग में सचिव है, प्रत्येक काम में पूर्ण दक्ष। अपने अंगूठा छाप मत्री का पूरा विश्वास उन्हें प्राप्त है। रोज शाम को दो घंटे भगवान की पूजा करना उनका नियम है। कालिदास, भारवि, भवभूति, वाल्मीकि और तुलसी की काव्य-रचनाओं का गहन अध्ययन ज्ञानीजी ने किया था। एक सफल और धार्मिक व्यक्ति होते हुए भी वह चरित्रहीन थे। रात्रि सात-आठ बजे के बाद शराब पीना और उसके बाद किसी स्त्री के सतीत्व से खेलना-ज्ञानीजी का नित्य कर्म है। अपने चपरासी की नवविवाहिता पत्नी दुर्गा पर उनकी नीयत खराब हो जाती है। किन्तु दुर्गा साक्षात् चण्डी बनकर उनका काम तमाम करना चाहती है। ज्ञानीजी की प्रार्थना पर उन्हें छोड़ देती है। ज्ञानीजी का मन पश्चाताप से भर उठता है। दूसरे दिन दुर्गा अपने बूढे पति को छोड़कर जागेश्वर के साथ चली जाती है और ज्ञानीजी को दिल का दौरा पडता है।

'जबरा मारे रोने न दे' कहानी में पत्रकार जयेन्द्र जौहरी प्रेस क्लब में ब्रिबरी के मालिक सीताराम द्वारा भेजी गई शराब पीते हैं। वे कड़ाके की सर्दी से बचने के लिए सिपाही बुन्दू खॉ और रामाधार को भी पिला देते हैं। जयेन्द्र दस रूपये का नोट देकर बुन्दू खॉ से सिगरेट मगाते हैं। दुकानदार को जगाने के कारण उससे झगडा हो जाता है। इसी समय प्रसिद्ध पत्र-सम्पादक पाठकजी उधर से गुजरते है और झगड़ा देखकर पुलिस कास्टेबल को धमकाते है। पुलिस वाले पाठकजी को जेल में बद करते हैं। उनके जेल में बन्द होने की चर्चा से पुलिस अफसरों को डांट पडती है। पुलिस वाले पाठकजी के यहॉ चोरी करा देते हैं। चोर गिरफ्तार होते हैं और सामान की बरामदगी में केवल एक पुराना घिसा हुआ लोटा बरामद होता है।

'गुन न हिरानो गुन गाहक हिरानो है' कहानी में सदाशिवसेने और रत्नकुमार नामक दो व्यक्तियों का वर्णन है। ये दोनों अपनी बुद्धिमानी और चतुराई के बल पर बहुत आगे जाते हैं। मराठी युवक सदाशिवसेने ग्वालियर के राजा की प्रशंसा सुनकर रोजी-रोटी कमाने वहॉ पहुँचता है। राजा से भेंट न कर पाने के कारण वह सामतों की निंदा करते हुए एक पत्र लिखता है- कि शासन में ऊपर से नीचे तक पोल ही पोल है। राजा उत्तर देता है कि तू भी उसी पोल में घुस जा। इसके बाद सदाशिव सेने अपनी चतुरता से रियासत का सूबेदार बन बैठता है। अग्रेज रेजीमेण्ट से उसकी प्रशंसा सुनकर राजा उसे स्वय बुलाते हैं और सारी कहानी सुनकर प्रशसा के रूप में उसका सत्कार करते हैं।

रत्नकुमार एक करोड़पति व्यापारी का पुत्र है। वह केवल हाईस्कूल पास है और अपने व्यक्तित्व से नये मुख्यमत्री को प्रभावित कर लेता है। किन्तु जब मुख्यमत्री को पार्टी के मंत्री से रत्नकुमार की वास्तविकता पता चलती है तो वह उससे मिलना एकदम बद करते है। वह स्वय रत्नकुमार की असलियत नहीं भाप पाते और अपनी बुद्धि से कार्य न करके दूसरों की सलाह पर ही सब निर्णय लेते हैं।

'मोर्चाबन्दी' कहानी के लाल सजीवनसिंह जमींदार के बेटे हैं। वह जमींदारी उन्मलन के बाद अपनी बिगड़ी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए अपने बड़े बगले के चारों ओर की जमीन को एक हाउसिंग सोसाइटी में परिवर्तित कर देते हैं। बाबू चिरजीलाल इस कालोनी के मुखिया हैं। वह अपने पुत्र के विवाह की मगनी के अवसर पर सत्यनारायण की कथा का आयोजन करते हैं। कथा के अंत का सामूहिक गायन सजीवन सिंह की सहन शक्ति के बाहर हो जाता है वह इन कर्कश ध्वनियों से बचने के लिए मेहरुन्निसा के रिकार्ड सुनने लगते हैं कथा समाप्ति पर प्रसाद देने गये और

चन्द्रिका महाराज को असलियत पता चलता है। इस अपमान का बदला लेने के लिए वे एक मंदिर का जीर्णोद्धार करते हैं और एक सप्ताह के अखण्ड कीर्तन का आयोजन करते हैं। इस प्रकार दोनों दलों में मोर्चाबन्दी हो जाती है।

'त्याग और ग्रहण' कहानी के पंडित मधुसूदन मिश्र ब्राह्मण वर्ग के अगुआ थे। अपना टूटा-फूटा मकान छोड़कर उन्होंने पांच मंजिली इमारत बनवा ली थी- लिफ्ट से सुसज्जित पांचवी मंजिल में रहकर वे नगर के दृश्य का आनन्द लिया करते थे। मिश्रजी चुनाव लड़ते हैं और उनके खिलाफ खड़े होते हैं रामखिलावन यादव। सवर्ण पूंजीपति मधुसूदन मिश्र, रामखिलावन यादव को खरीदने की कोशिश में पिटते-पिटते बच जाते हैं। मतगणना के समय जाते हुए मिश्रजी की लिफ्ट बीच में ही खराब हो जाती है। दो घंटे बाद लिफ्ट सुधरती है। नीचे उतरकर पता चलता है कि वह चुनाव हार गये। रामखिलावन यादव मुख्यमंत्री बनते ही उनकी सम्पति जब्त कर देते हैं। पुराना मकान ठीक नहीं होने तक वह उसी मकान में रह सकते हैं। परन्तु मिश्रजी बैंक में जमा ५० हजार रूपये लेकर अपने उसी पुराने मकान में लौट आते हैं। अपने अनुपम त्याग से साख बढ़ाते हुए मिश्रजी भविष्य में यादव को पदच्युत करके उसकी कुर्सी हथियाने के चक्कर में लग जाते हैं।

इस प्रकार भगवती चरण वर्मा ने बड़ी संख्या में उपन्यास और कहानियाँ लिखी हैं। अनवरत लेखन से उन्हें कथा को अपेक्षित विकास और परिणति देने में कुशलता प्राप्त हुई। उनकी ज्यादातर रचनाओं में सामाजिक यथार्थ का चित्रण दृष्टिगोचर होता है। यह अवश्य है कि उनके लेखक में कथ्य को लोककथा की सी सोच और शिल्प में ढाल लेने की क्षमता है। वर्माजी ने जीवन के आर्थिक पक्ष को सबसे ज्यादा निर्णायक माना है। उनके कथानकों और चरित्र निर्मितियों पर इस आर्थिक पक्ष का प्रभाव सर्वाधिक है। कुछ चरित्र परिस्थितिवश तो कुछ स्वेच्छया एक पटरी से उतरा हुआ जीवन चुन लेते हैं और एक अभिशप्त स्थिति का शिकार होते हैं। वैसे वर्माजी नियति से सर्वाधिक आक्रान्त हैं। 'माया-' की भी उनके यहाँ ठगिनी वाली भूमिका है। जीवन के आदर्शों की उन्हें चिन्ता है किन्तु वे यह भी स्थापित करते हैं कि ये आदर्श एक संघर्षपूर्ण त्याग भरे जीवन द्वारा ही अर्जित किये जा सकते हैं।

इस प्रकार वर्माजी का कथा संसार उनके जीवन के अनुभवों के समान ही वैविध्यपूर्ण और भरा-पूरा है। उनका कलाकार कहीं बहुत सधा हुआ और दृष्टिवान दिखता है तो कहीं सारी चीजों से बेफिक्र और खिलन्दड़ा। यही कारण है कि उनके लेखन के अनेक रंग है और इसीलिए स्तरभेद भी। वर्माजी की कल्पना का आधार भी उनका भोगा हुआ चक्करों से भरा जीवन है किन्तु कहीं-कहीं इस कल्पना ने विशुद्ध कल्पना की छूट भी ली है।

❁

भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास : अन्तर्वस्तु

प्रेमचन्द ने हिन्दी उपन्यास को आधुनिक मनुष्य की महागाथा के रूप में प्रस्तुत किया। यह उनके रचनाकार की यथार्थवादी अन्तर्दृष्टि के कारण ही संभव हुआ। प्रेमचद भारतीय कृषक समाज के यथार्थ के सृष्टा के रूप में सामने आये। निस्सदेह यह जीवन उन्होंने जिया था, उसकी स्थिति, परिस्थिति, गति और बधाव, सुख और दुख को निकट से भोगा भी था। यही उनके रचनाकार की सवेदनशीलता और उर्वरता निर्मित हुई। भगवतीचरण वर्मा शहरी मध्यमवर्ग से सम्बन्धित थे। मध्यवर्ग की इच्छायें, ठहराव और सघर्ष का गहरा ज्ञान उन्हें था, उन्होंने इस वर्ग के अन्तर्विरोधों को, उसकी अपेक्षित सामाजिक, सास्कृतिक प्रक्रिया में देखने का प्रयास किया है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि उनके रचनाकार के अपने कुछ मोह या बधाव थे जो क्रमशः उनकी सीमा बनते गये।

भगवतीचरण वर्मा के साहित्य में नियतिवाद के प्रति आकर्षण दिखाई देता है। यह नियतिवादी दृष्टिकोण उनके निजी अनुभवों का परिणाम है। जिन्दगी के प्रत्येक कदम पर वर्माजी ने सघर्ष किया था। प्रत्येक बाजी में मात खाई थीं। अत अपने अनुभवों के आधार पर इन्होंने 'नियतिवाद' के नवीन सूत्र को खोज निकाला था। वर्माजी का जीवन भावनात्मक रूप से नियतिवाद से प्रभावित था। रचना, रचनाकार से भिन्न नहीं हो सकती। और जीवन के अनुभवों का प्रत्येक व्यक्ति से निजी सरोकार है जो उसके रचना संसार में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से आना स्वाभाविक है। फलस्वरूप इनकी सभी रचनाओं में नियतिवादी जीवनदृष्टि के दर्शन होते हैं। वर्माजी के रचनाकार की पूंजी- जीवन का व्यापक आकलन है। उन्होंने चरित्रों को आर्थिक परिप्रेक्ष्य में जाचा-परखा है और इस प्रकार उनकी मनोवृत्तियों और उनके, कार्यो का आधार प्रस्तुत किया हैं महाजनी सभ्यता के अस्तित्व में आने पर सामाजिक ढाचे में बदलाव आया और व्यक्ति यत्रों के साथ जुडता गया। भौतिकवादी समाज में जीवन मूल्यों का निर्धारण 'अर्थ' के द्वारा होता है- आर्थिक सम्बन्ध ही हमारे समाज में मुख्य निर्णायक है। इन्हीं आर्थिक सम्बन्धों के आधार पर हमारी सभ्यता-सस्कृति विकसित हो रही है। मौकापरस्ती और आर्थिक सम्बन्धों के व्याकरण की अच्छी पहचान रचनाकार की विशिष्टता है। सन् ५० के करीब व्यक्ति ओर परिवेश में परिवर्तन बड़े साफनजर आ रहे थे। इन्होंने सबंधों में आये इस बदलाव को पकड़ने की कोशिश की है। सम्बन्धों में आये ये परिवर्तन सवेदनात्मक परिवर्तनों की ओर सकेत करते हैं। सामाजिक सबधों के माध्यम से रचनाकार उन प्रभावों और विकृतियों को सामने लाता है जो बूर्ज्वा सस्कारों की देन है। इस सदर्भ में उपन्यासकार ने नैतिकता-अनैतिकता के प्रश्न को भी उठाया है। विभाजन की ऐतिहासिक एव सांस्कृतिक दुर्घटना जिससे स्वातत्र्य मूल्यों का मिथ खण्डित हो गया था- रचनाकार स्वयं को मूल्यगत विभ्रम की स्थिति में पा रहे थे। इस भौचक्केपन के अहसास को अभिव्यक्त करने की रचनात्मक शक्ति उनमें नहीं थी। सृजन क्षमताओं के अवरुद्ध हो जाने की वजह से कथाकार अपनी ही रचना-रुढ़ियों के शिकार बन रहे थे, वर्माजी भी इसके अपवाद नहीं थे। इन्हें मानवतावादी अवधारणाओं और मान्यताओं की स्थापना के प्रयास के कारण आदर्श का भी और विविध समस्याओं के सन्दर्भ में यथार्थ का समर्थक माना जा सकता है। आधुनिक महानगरीय जीवन-पद्धति की जटिलताओं का अंकन इनके रचनाकार की निजी पहचान है।

वर्माजी की प्रथम औपन्यासिक कृति 'पतन' है। अत इस उपन्यास में उनकी मूल जीवन-दृष्टि का बीजारोपण मिलता हैं प्रेम-घृणा पाप-पुण्य विश्वास और कर्तव्य विवाह एवं नियति संबंधी विचारों का ने विस्तार से विश्लेषण किया है पतनोन्मुख विलासी राजाओं और उनके सेवकों की

भोगी प्रवृत्ति का उद्घाटन उपन्यास का मूल कथ्य है। उपन्यास के प्रमुख पुरुष-चरित्र विलासी है रणवीर को छोडकर। परन्तु नियतिवश रणवीर सुभद्रा से प्रेम करते हुये भी किसी परिणाम तक नहीं पहुच पाता। उसका गुरु प्रतापसिह अपने पाशविक चरित्र का परिचय देते हुये अपने साथ उसे और सुभद्रा को भी जलसमाधि दिला देता है। उपन्यास के नारी-चरित्र किसी प्रकार की क्रान्ति न करते हुये मात्र पुरुषों की विलासिता के साधन है। लेखकीय दृष्टि में विवाह का एकमात्र लक्ष्य तृष्णा को वशीभूत करना हैं। प्रयोग के तौर पर लिखे गये इस उपन्यास में कथाकार की नियति और पाप-पुण्य सबधी मूलभूत विचारधारा के चिह्न स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। व्यक्तिवादी विचारधारा के निरूपण की दृष्टि से 'चित्रलेखा' का महत्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास का मूल प्रतिपाद्य विषय है- पाप और पुण्य की समस्या- कथाकार ने पाप और पुण्य की कोई निश्चित परिभाषा प्रस्तुत न करके सर्वथा व्यक्तिवादी समाधान प्रस्तुत किया है-- 'संसार में पाप कुछ भी नहीं हे, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दूसरा नाम है। प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष प्रकार की मन प्रवृत्ति लेकर उत्पन्न होता है-- प्रत्येक व्यक्ति इस संसार के रंगमच पर एक अभिनय करने आता है।''[१] बीजगुप्त और कुमारगिरि के माध्यम से उपन्यासकार ने चरित्र के दो भिन्न-भिन्न रूपों का परिचय दिया है। चित्रलेखा दोनो के जीवन में आकर उनके चरित्र के सर्वथा भिन्न पहलुओ का साक्षात्कार कराती है।

बीजगुप्त सामती चरित्र का आदर्श रूप है। उसमें प्रेम, ममता, दया और त्याग आदि उदात्त भावनाए विद्यमान हैं। नर्तकी चित्रलेखा से उसका प्रेम सच्चा है। यही नहीं अपने गुरु-भाई श्वेताक के लिए अपनी समस्त सम्पत्ति का परित्याग और यशोधरा से उसका पाणिग्रहण कराना इत्यादि घटनाए उसकी उदारता का परिचय देती हैं। चित्रलेखा का चरित्र व्यक्तिवादी है। अपने अह की तुष्टि के लिए बीजगुप्त को छोड़कर योगी कुमारगिरि के जीवन में प्रवेश करती है। दोनों के साधन भिन्न थे परन्तु परिस्थिति का चक्र दोनों को एक-दूसरे की साधना भ्रष्ट करने के लिए सामने ला देता है। अनुराग की सजीवता विराग की अकर्मण्यता पर विजय पाती है। चित्रलेखा का अन्तस् कुण्ठाओं और यौन-वर्जनाओं से मुक्त नहीं है और न ही योगी कुमारगिरि का। इस कृति में स्वस्थ भोगवाद का समर्थन करते हुए यह सिद्ध किया गया है कि बिना वासना की संतुष्टि के कोई भी आध्यात्मिक धरातल तक नहीं पहुच सकता। उपन्यास के अत में बीजगुप्त और चित्रलेखा का भिक्षुक बनकर निकल जाना-- प्रकारान्तर से व्यक्तिवादी विचारधारा का अनुमोदन है। बीजगुप्त और चित्रलेखा के कथन स्थान-स्थान पर स्वच्छन्द प्रेम के समर्थन द्वारा व्यक्तिवाद का समर्थन करते दिखायी पड़ते हैं। सामाजिक मान्यताए और व्यक्ति का विरोधाभास योगी को भोगी और भोगी को योगी सिद्ध करता है। विवाह और प्रेम सबधी मान्यताएँ लेखक के दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति करती है। नारी-स्वातंत्र्य की आवाज उठाने वाली चित्रलेखा पुरुष की सबलता को महत्व देती है- उसके अनुसार स्त्री उसी मनुष्य से प्रेम कर सकती है जो उस पर आधिपत्य जमा सके परन्तु इसी उपन्यास में दूसरे स्थान पर चित्रलेखा एक नारी के कई व्यक्तियों के साथ प्रेम को सही ठहराती है। कहीं-कहीं उसके चरित्र में अन्तर्विरोध दिखायी पड़ता है। स्त्री-पुरुष के पारस्परिक संबधों के बारे में वर्माजी का दृष्टिकोण स्वच्छन्द है, परन्तु उसकी सामाजिक दृष्टि लुप्त नहीं हुई है- भौतिक सुखों का यथा-सभव भोग भी दूसरों के लिए कष्टकर नहीं हुआ है। पाप और पुण्य के प्रश्न को आधार मानकर लिखे गये इस उपन्यास के विषय में धर्मवीर भारती लिखते हैं-- 'सच पूछिए तो 'चित्रलेखा' की सारी ऐतिहासिक परिवेश की परिकल्पना परीलोक की कल्पना जैसी है जहाँ राजा है, महल है, नर्तकी है, दरबार है, जाम है, केवल सुविधा के लिए एक ऐतिहासिक काल की कल्पना है, वरना वह सारी कथा कालातीत है, केवल मानव-मन में घटित होती है, पाप और पुण्य के बुनियादी

१- चित्रलेखा वर्मा पृ० १४०

प्रश्न की भित्ति पर। बाहरी कुछ उस मन में घटते वाद-विवाद को प्रभावित नहीं करता। सच तो यह है कि चित्रलेखा अइतिहास है समय और परिवेश के बदलावों से सर्वथा मुक्त।"[1]

'तीन वर्ष' में कथाकार अर्थ से जुड़ी सामाजिक और नैतिक विकृतियों का साक्षात्कार कराता है। अलग-अलग वर्गों से आये दो युवकों की मानसिकता परस्पर मेल नहीं खाती है। मध्यवर्गीय परिवार से सबधित रमेश वर्गीय सस्कारों से बधा भावुक और अनुभवहीन है तो अजित आधुनिक, अनुभवी, व्यावहारिक और अभिजात सस्कारों से युक्त। पूजीवादी सस्कारों में रची-बसी, फैशनपरस्त प्रभा का भावुक रमेश से मेलजोल, रमेश के लिए घातक सिद्ध होता है। रमेश अजित के सम्पर्क से सोसायटी में उठने-बैठने लायक तौर-तरीके तो सीख लेता है परन्तु अपने वर्गीय सस्कारों से मुक्त नहीं हो पाता। प्रभा की ओर से निराश होकर वह वेश्यालय की शरण लेता है। हिन्दी साहित्य में प्रेमचन्द्र और बगला साहित्य मे शरतचन्द्र ने वेश्याओं के चरित्र को ऊपर उठाया है। वर्माजी ने भी उसी परम्परा का अनुसरण कतरे हुए वेश्या सरोज के माध्यम से सामाजिक दृष्टि से गिरि हुई नारियों के चरित्र को श्रेष्ठ सिद्ध किया है। प्रेम और विवाह संबधी लेखकीय दृष्टिकोण व्यवहारिकता को महत्व देता जान पड़ता है। वर्गीय मानसिकता और पैसे की अमोघ शक्ति सम्बन्धों के बनने और बिगड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। समय और परिवेश से आये बदलाव के बाजवूद व्यक्ति के ज़ातीय सस्कार भी अपने स्थान पर महत्वपूर्ण है। रमेश अन्त तक इन सस्कारों की जकड़न से मुक्त नहीं हो पाता वेश्या सरोज का महान त्याग अन्ततोगत्वा रमेश को सही रास्ते पर ले आता है और प्रभा की ओर से विमुख कर देता है- प्रस्तुत उपन्यास में लेखक उच्चवर्गीय समाज में व्याप्त अनैतिकता का चित्रण करते हुए प्रामाणिक नैतिक मूल्यों की स्थापना का प्रयास करता है।

'टेढ़े-मेढ़े' नामक उपन्यास में वर्माजी मध्यवर्गीय जीवन के तनावों का साक्षात्कार कराते हैं और एक बड़ा फलक चुनते हैं। कथाकार ने प० रामनाथ तिवारी के टूटते हुए परिवार के माध्यम से पहली बार सामाजिक और ऐतिहासिक रोमास की परिधि से बाहर निकलकर युग की बदलती हुई राजनैतिक और सामाजिक मान्यताओं को चित्रित करने का प्रयास किया है तथा तिवारीजी के तीनों पुत्रों दयानाथ, उमानाथ और प्रभानाथ के माध्यम से काग्रेस, समाजवाद तथा आतंकवाद के साथ सामत रामनाथ की टकराहट दिखाकर सामंतवाद के टूटते-बिखरते रूप को दिखलाया है। उपन्यास मे राजनीतिक विचारधाराओं का विश्लेषण व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से किया गया है। चुनाव में हार जाने पर काग्रेस का समर्थक, पार्टी के लिए पिता का परित्याग करने वाला दयानाथ कांग्रेस ही छोड़ देता है। समाजवाद की दुहाई देने वाला उमानाथ पुलिस के पीछे लगने पर देश से भागने को तैयार हो जाता है और वह भी उस पत्नी के आभूषणों की सहायता से जिसका निर्मम परित्याग वह हिल्डा नामक विदेशी युवती के लिए कर चुका है, क्रान्तिकारी प्रभानाथ पुलिस द्वारा पकड़ लिये जाने पर चाचा के प्रोत्साहित करने पर मुखबिर बनने को तैयार हो जाता है- यह है चरित्रों के आदर्शवादी मुखौटों के पीछे छिपी उनकी स्वार्थपरता और अहमन्यता का असली रूप। उपन्यास में रामनाथ का चरित्र एक निरकुश व्यक्ति के रूप में सामने आता है।

अपनी अहम्मन्यता और निरंकुश प्रवृत्ति के कारण वे अपने पुत्रों को अपने तरीके से संचालित करना चाहते हैं। परिणामतः परस्पर विरोधी विचारधाराओं में टकराहट पैदा होती है। इस प्रकार पारिवारिक कलह और युग की नवीन चेतना के साथ-साथ लेखक तत्कालीन समाज के वर्गीय तनावों से साक्षात्कार कराता चलाता है- रामनाथ तिवारी और परमेश्वर व झगडू मिश्र का टकराव जमींदार

१ धर्मयुग १८ अक्टूबर १६८१ पृ० ३६

और किसान का टकराव है- दयानाथ और ब्रह्मदत्त के मध्य हुआ तनाव उच्च और निम्नवर्ग के बीच उत्पन्न तनावों का द्योतक है। उपन्यास में नारी-चरित्र के परस्पर दो विरोधी रूप दिखाई पड़ते हैं- राजेश्वरी और महालक्ष्मी का चरित्र भारतीय सस्कृति के परम्परागत नारी आदर्शों से युक्त है। परन्तु वीणा और प्रतिभा नारी के भोग्या रूप को बहुत पीछे छोड़ देती है। पति के द्वारा ठुकरायी गई महालक्ष्मी पति की नौकरानी बनने को भी तैयार है- वह ससुर की सेवा करती हुई अपने बच्चे के साथ ससुराल में ही प्रसन्न है। सभवत उसके सस्कार ही ऐसे हैं जो उसे घर की दहलीज नहीं लाघने देते दूसरी ओर वीणा अपने प्रेमी के साथ कधे से कधा मिलाकर चलती है। रामनाथ जैसा निरंकुश व्यक्ति भी उसके साहस की सराहना करता है। व्यक्ति-स्वातत्र्य का अनुमोदन करते हुए भी लेखक की व्यक्तिवादी विचारधारा स्वेच्छाचारिता का समर्थन नहीं करती वस्तुत' यह उपन्यास १९३० के आसपास के भारत की राजनैतिक गतिविधियों, सामाजिक और आर्थिक स्थिति का खुलासा करता चलता है।

धन मनुष्य को नियत्रित करने का साधन नहीं है। धन का लोभ मनुष्य को बेगाना बनाकर अपने आप से और समाज से निरन्तर काटता चला जाता है। 'आखिरी दाव उपन्यास में रामेश्वर और चमेली दोनों ही धन की अपरिमित शक्ति के समक्ष पराजित होते हैं। मध्यवर्गीय परिवार की बहू चमेली का जीवन इस वर्ग की असगतियों को उघाड़कर रख देता है। चमेली के पास रतनू के साथ भागने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं बचता। परन्तु रतनू भी चमेली की खरीद-फरोख्त शुरु कर देता है। पूजीवादी समाज में समर्थ खरीदार लोग औरत को खरीदना चाहते हैं चाहे वह सेठ हीरालाल हो या शिवकुमार या शीतल प्रसाद- सभी का चरित्र एक सा ही है। और तो और रामेश्वर और जगमोहन अपनी पत्नियों को बिकते हुए देखते हैं। रामेश्वर का आक्रोश एक दो बार फूट पड़ता है परन्तु बाद में वह भी चुप बैठ जाता है मानो परिस्थितियों से समझौता कर लिया हो। धन का सामाजिक चरित्र ही ऐसा है- इसके कारण ही रामेश्वर और चमेली के सहज स्वस्थ संबंध की समाप्ति हो जाती है - दोनों का समाज को देखने का नजरिया बदल जाता है- रामेश्वर और चमेली का पतन पूजीवादी समाज में मानवता की पराजय है- व्यक्ति की पराजय है। इन दोनों के चरित्र मध्यवर्गीय सस्कारों में रचे-बसे हैं। लेखक का उद्देश्य धन के प्रभुत्व का वर्णन करके उसका समाजवादी या साम्यवादी समाधान प्रस्तुत करने का नहीं है। उसने व्यक्ति विकास के बाधक तत्व के रूप में पैसे को माना है। पैसे की दुनिया में न पाप है न पुण्य, न प्रेम है न भावना। सभी अपने आपको बेच रहे हैं और पैसे वाले सब कुछ खरीद रहे हैं। धन के पिशाच के हाथों रामेश्वर और चमेली भी अपने आप को बेच देते हैं। अत में रामेश्वर शराब के अवैध धंधे में पकड़ा जाता है और चमेली सेठ शीतल प्रसाद की हत्या करने के बाद आत्महत्या कर लेती है- दो भोले-भाले इंसानों का कारुणिक अंत होता है। कथाकार ने व्यक्ति और समाज की समस्याओं को वैयक्तिक विकास की कसौटी पर परखने की चेष्टा की है। सामाजिक बधन वैयक्तिक जीवन में तो पीड़ादायक बनते ही हैं साथ ही व्यक्ति की साहस हीनता का लाभ उठाकर सामाजिक मान्यताएँ व्यक्ति का गला घोंट देती है- रामेश्वर, चमेली, जगमोहन, राधा सभी इसके शिकार हैं। यह उपन्यास युगीन सदर्भों में फिल्मी जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है।

'अपने खिलौने' नामक उपन्यास में वर्माजी ने कुछ ऐसे चरित्रों को प्रस्तुत किया है जिनके कार्य-व्यापार, पूजीवादी समाज की असलियत को परत-दर-परत खोलते चलते हैं। आधुनिक सामाजिक सरचना अपने मूल स्वरूप से पृथक् होकर इतनी विशृखलित हो गई है कि उसमें अनेक प्रकार की विकृतियाँ आ गयी है। समाज का प्रत्येक वर्ग किसी न किसी कुण्ठा से ग्रस्त है। इस उपन्यास के सभी चरित्र अपनी स्वार्थ-सिद्धि करने में और अपनी स्थिति सुरक्षित करने में लगे हैं। रामप्रकाश अपने से दो-तीन वर्ष बड़ी अन्नपूर्णा बसल से विवाह करने को इसलिए तैयार है क्योंकि वह पचास लाख की मालकिन है और उसे यह सुझाव देते हैं उसके फूफाजी जयदेव भारती 'कला भारती' नामक

सास्कृतिक सस्था की आड में अशोक अपने मुनाफे की बात सोचता है कि किस तरह वह अपने सामान की सप्लाई करेगा। फ्रासीसी लड़की लिली से प्रेम करने वाले युवराज अनेक स्त्रियों के प्रेम का केन्द्रबिन्दु है। कैराकोमल तो उनके साथ आकर रहने लगती है उनके पति उन्हें रोक नहीं पाते। बडी कठिनाई और जोड़-तोड़ के बाद उन्हें वापस घर भेजा जाता है। शादी-ब्याह में समाज और सस्कृति का ध्यान रखने वाले युवराज अपनी प्रेमिका लिली के आते ही अपने सारे पिछले प्रेम-व्यापारों को भूलकर भाग खड़े होते हैं। केन्द्रीय सरकार में सेक्रेटरी की पुत्री मीना भारती धन के लोभ में हीरोइन बनने के चक्कर में रामकृष्ण सैदा और चेट्टियार जैसे धूर्तों के जाल में फंस जाती है। ये दोनों चरित्र आधुनिक समाज की असलियत को उघाड़कर रख देते हैं-- 'यह सेक्रेटरी बिकते हैं- उनकी लड़कियां बिकती हैं, बड़े-बडे मिनिस्टर तक बिकते हैं। दुनिया में कौन ऐसा है जो न बिक सके- कीमत चाहिए उसकी। यू रास्कल शैदा- बड़ा तगड़ा सौदा किया। एक लाख में एक सेक्रेटरी की लड़की- ब्रेवो यू रास्कल शैदा।" उपन्यास में मीना, अन्नपूर्णा और युवराज के छिछले प्रेम-व्यापारों का चित्रण भी किया गया है। अर्थ-लिप्सा के साथ ही यौन-अतृप्ति भी आधुनिक समाज की प्रवृत्तियों की परिचायक है। इस उपन्यास में कथाकार आर्थिक उन्माद की खोखली अवस्था और विकृत-सस्कृति के अनेक रूपों को उद्घाटित करता है।

'वह फिर नहीं आई' नामक उपन्यास के सूत्र भी नियतिवादी जीवनदृष्टि की देन है। आधुनिक समाज में परिस्थितियॉ मनुष्य की वैयक्तिकता पर इतनी तीव्रता के साथ हावी होती है कि वह उसके हर परिणाम को स्वीकार करने के लिए विवश है। इस उपन्यास के मुख्य चरित्र है- रानी श्यामला, जीवनराम और ज्ञानचद। श्यामला अपने पति से आत्मिक प्रेम करते हुए भी कई पुरुषों के साथ जुड़ती है। जीवन के प्रत्येक मुकाम पर उस अभागी नारी को छल-कपट का सहारा लेना पड़ता है। परन्तु अपनी नियति से लड़ते हुए वह हारती है और मात्र शरीर का व्यापार करने वाली स्त्री बनकर रह जाती है। पति की मृत्यु से उसमें समाज के प्रति आक्रोश और प्रतिक्रिया का भाव भर जाता है और वह लोगों की जिन्दगी नष्ट करके समाज से बदला लेने का फैसला करती है। श्यामला के पति जीवनराम के चरित्र के सभी पहलू उसकी अकर्मण्यता की ओर संकेत करते हैं। उसका चरित्र उसके जीवन की त्रासदी को उभारता है। अपनी पत्नी से प्रेम करते हुए भी वह उसे बार-बार गिरवी रखकर पैसा लेता है और उसे फिर से प्राप्त करने का मोह उसे जीवन भर आक्रान्त किये रहता है परन्तु अपनी नियति से जूझते हुए वह ऊपर नहीं उठ पाता और मर जाता है। ज्ञानचद की दृष्टि मूलत. अर्थप्रधान है वह उन रईसों का प्रतिनिधित्व करता है जो अपने विवाहित जीवन से अकारण ही असतुष्ट होकर रूप-यौवन के पीछे भागते हैं। श्यामला से प्रेम और सहानुभूति रखते हुए भी इनका चरित्र स्वार्थ और ईर्ष्या-द्वेष आदि मानवीय दुर्बलताओं से परे नहीं है। वर्माजी ने नैतिकता के दोहरे मानदण्ड की खबर लेते हुए उन नैतिक मूल्यों की शक्ति की भी व्याख्या की है जिनकी स्वीकृति के पीछे समाज का डर या कोई बाहरी दबाव नहीं होता है। यही नैतिकता रानी श्यामला में दिखाई देती है जब वह पति की मृत्यु के बाद गबन किया गया रूपया लौटाने आती है। इस प्रकार जटिल से जटिल परिस्थिति में मनुष्य के सहज मानवीय मन का उद्घाटन भी वर्माजी ने किया है।

'भूले बिसरे चित्र' नामक उपन्यास में वर्माजी ने मध्यवर्गीय मानसिकता को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखते हुए इसे ऐसा महाकाव्योचित विस्तार दिया है जिसमें एक साथ कई पीढ़ियों, स्त्री-पुरुष सम्बन्धों, रुढ़ियों और विघटित होते हुए समाज के एक-दूसरे से गुथे हुए रूप और स्वर देखे और सुने जा सकते हैं। उपन्यास का कथानक एक परिवार की चार पीढ़ियों पर केन्द्रित है- मुशी शिवलाल ज्वाला प्रसाद गंगा प्रसाद और नवलकिशोर प्रत्येक पीढ़ी समसामयिक सघर्षों से जूझती है

१- अपने खिलौने वर्मा पृ० १५१

उपन्यास का कथाकाल सन् १८८० से १६३० तक फैला है। पचास वर्ष के समय-फलक पर फैले हुए भारतीय समाज का चित्र और राजनीतिक परिदृश्य प्रस्तुत करने का प्रयास लेखक ने किया है। सयुक्त परिवार प्रथा का विघटन, मध्यवर्ग का उदय, समाज और सस्कृति के विकास की प्रक्रिया में पंजूवाद में सामती तत्वों का मेल तथा राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य आन्दोलन का विकास- इन्हीं चार आधार बिन्दुओं पर उपन्यास का कथानक खड़ा है।

शिवलाल की कथा से उपन्यास का आरभ होता है। मुशी शिवलाल नौकरशाही और सामती सस्कारों के गुण-दोष से रचे-बसे टिपिकल मुशीजी है। सयुक्त परिवार की चेतना जहॉ उन्हें सामतवाद से जोड़ती है वहीं घूसखोरी, चालाकी और स्वार्थजन्य मूल्यहीनता उन्हे नौकरशाही से जोड़ती है। ज्वाला प्रसाद उपन्यास का एक प्रमुख पात्र है। पूरी कथा में वह शुरु से लेकर अत तक, विद्यमान रहता है। उसके संस्कार मध्यवर्गीय परिवार मे पले-बढ़े होने के बावजूद सामती प्रतीत होते हैं। वह सयुक्त परिवार का समर्थक है परन्तु जब उसका परिवार उसकी सुविधाओं में बाधक बनने लगता है तो वह उसे छोड देता है परन्तु वह वह उसे धारणा के रूप में नहीं सुविधा के रूप में तोडता है। वह लाला प्रभूदयाल को नापसंद करते हुए भी उनके साथ खड़ा हो जाता है।- उनका गठबधन नौकरशाही और पूजीपतियों के जोड काप्रतीक है– विघटन और उदय के इस द्वन्द्व में ज्वाला प्रसाद को पूंजीवाद के साथ ही रहना था। प्रभुदयाल का पुत्र लक्ष्मीचंद नयी पूजीवादी व्यवस्था का प्रतिनिधि पात्र है। अत उसके अमानवीय होते जाने की अनिवार्य सभावनाए हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में उद्योग धंधों का विकास होता है, साक्षरता बढती है परन्तु परिवार टूटते जाते हैं। नयी दुनिया के इस नये रूप के प्रति पुरानी पीढ़ी सशकित है। कथा में ठाकुर गजराज सिंह की लड़की के विवाह का प्रसग सामती समाज के कृत्रिम वैभव-प्रदर्शन और उसके दुष्परिणाम को प्रकट करता है। कई गांव रेहन रखकर वे अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करते हैं और टूटते जाते हैं। गजराज सिह और बरजोर सिंह के माध्यम से सामंती समाज की सारी विसगतियॉ उभरकर सामने आ जाती है। गगा प्रसाद प्रतिनिधित्व करता है समाज के उस पुरुष का जो कई स्त्रियों से अनैतिक सबध रखते हुए उनसे विवाह नहीं करते। उसके जीवन के दो प्रेम प्रसग महत्वपूर्ण हैं एक सतों के साथ दूसरा मलका के साथ। संतों के साथ गगाप्रसाद के सम्बन्ध की कुछ सभावनाए बनती थी परन्तु उन दोनों के दूसरी बार मिलने से पहले ही सन्तों अपने पति राधाकिशन की प्रेरणा से मिस्टर दाट्स के साथ प्रेम की कुत्सित नाट्य रचा लेती है। राधाकिशन को रायबहादुर की उपाधि मिलती है और सन्तों को एक नया नाम मिलता है- 'रानी सतवत कुवर'। यहॉ पर पूजीवादी व्यावसायिकता की चरम परिणति दिखायी देती है- स्त्री भी वस्तु की तरह बिकने लगती है- कभी अपनी इच्छा से कभी मजबूरी से और कभी पति के इशारे पर। अदर की कुण्ठा और घुटन के कारण सतों किसी और समाज की हो जाती है। महाजनी सभ्यता के प्रतीक लक्ष्मीचद पैसे से हर कुछ खरीद सकने की सामर्थ्य रखते हैं-- व्यवस्था उनके हाथों बिकी हुई है और उन्हें प्रत्येक गलत काम को सही सिद्ध कर देने की छूट मिली हुई है। उपन्यास के सभी नारी चरित्र सहृदय, सीधे-सादे और पुरुषों के इशारे पर नाचने वाले हैं। मलका, माया और विद्या का चरित्र परम्परागत नारी ढॉचे से कुछ अलग हटकर है। छिनकी चाची का चरित्र क्रान्तिपरक मूल्यों के योग से निर्मित है- शिवलाल की रखैल होते हुये भी वे उसके परिवार के प्रति ईमानदार है। जैदेई का चरित्र भी कुछ ऐसा ही है- ज्वाला की पत्नी और पुत्र के प्रति उसमें अतीव ममता है। इस उपन्यास के नारी चरित्र अपने पति के अवैध सम्बन्धों को आसानी से स्वीकार कर लेते हैं। जमुना पतिपरायण होने के कारण अपने पति के साथ जैदई के सम्बन्धों को आसानी से पचा ले जाती है। जैदेई खुले हाथ की, उदार स्त्री है और मानवीय गुणों से भरपूर है। यमुना उसके वैभव की चमक-दमक पर मोहित है। रुक्मिणी तो यमुना से भी अधिक स्त्री है- वह गगा के अनैतिक के विरोध में कोई आवाज नहीं उठाती है यद्यपि

ये अवैध सबध वैधता को कोई चुनौती नहीं दे पाते और अवैध ही बने रहते हैं। बाहर से स्वस्थ दिखाई देने वाला रुग्ण समाज अदर ही अदर सड़ता जाता है। पत्नियॉ अपने अधिकारों की रक्षा के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाकर स्थिति को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेती हैं। यही कारण है कि अवैध सम्बन्धों के चलते हुए भी उपन्यास मे अन्तर्विरोध बहुत कम उभरते है। लेखक इस उन्मुक्त यौनाचार के विषय में मुखर हुए बिना ही धीरे-धीरे सकेतों से बहुत कुछ कह देता है। कथाकार ने चौथी पीढ़ी के नवल और विद्या में मध्यवर्ग का पूर्ण विकास दिखाया है। ये दोनों निष्क्रिय होकर यथास्थिति को स्वीकार नहीं करते। उनका लक्ष्य है- समाज को बदलना, अपने मार्ग को स्वयं बनाना, ज्ञानप्रकाश के चरित्र के रूप में लेखक ने पूरी कथा को एक नयी चेतना से जोड़ा है- विद्या को घर से निकालने पर वह उसके ससुर को खूब खरी-खोटी सुनाता है मानो वह पूरे परिवार या सामाजिक-व्यवस्था के विरुद्ध उभरता हुआ एक नाराज स्वर है। वह समझता है कि समाज को बदलने के लिए रुढ़ मान्यताओं को बदलना आवश्यक है। भीखू का चरित्र एक स्निग्ध आत्मीयता की आच लिये हुए है। वह परिवार के विश्वासपात्र और हितैषी नौकर का प्रतिनिधित्व करता है। नवल का चरित्र मध्यवर्ग की बदलती हुई मानसिकता का द्योतक है- सघर्ष उसकी इच्छा का वरण जान पड़ता है। इसके लिए वह अपने सुखों का त्याग करने में सकोच नहीं करता। विद्या के माध्यम से लेखक ने स्वालम्बिनी बनने के लिए सघर्ष करती हुई एक नयी नारी की पहचान करायी है। पति के घर से निकाली जाने पर विद्या एक अध्यापिका बनकर जीवनयापन करती है परन्तु लेखक की आदर्शवादी दृष्टि उसके पुनर्विवाह का समर्थन करती नहीं जान पड़ती। पुरुष और स्त्री में सम्बन्धों की टूटती हुई कड़ियों के क्रम में उभरने वाली परिस्थितियॉ और पात्र मिलकर जो समग्र चित्र निर्मित करते है वह चित्र अन्ततोगत्वा अपनी ही पीड़ा के भीतर से उगने वाले नये नारी व्यक्तित्व की जिजीविषा ध्वनित करता है और उपन्यास को प्रच्छन्न रूप से नये जीवन मूल्य से जोड़ता है। वर्माजी ने सामती और पूजीवादी व्यवस्था की सारी विसगतियों की ओर संकेत करते हुए उपन्यास के अंत में एक नया अर्थ जोड़ने का प्रयत्न किया है-.'दो बूढ़े जिन्होंने युग देखा था, जिन्दगी के अनेक उतार-चढ़ाव देखे थे जिन्होंने। जिनके पास अनुभवों का भण्डार था, विवश थे, निरुत्तर थे। और दूर हजारों, लाखों करोड़ों आदमी जीवन और गति से प्रेरित नवीन उमग और उल्लास लिये हुए एक नवीन दुनिया की रचना करने के लिए चले जा रहे थे।"[1] शिवलाल की कथा से उपन्यास का आरंभ हुआ है और अत में नवल की कथा शुरु हो जाती है, परन्तु उपन्यास का जहॉ अत होता है वहॉ न समस्याओं का समाधान हुआ है और न समस्याओं का अत हुआ है।

रचनाकार के कुछ विश्वास इतने अखण्ड और इतने प्रचण्ड होते हैं कि प्रायः प्रत्येक रचना में उसकी आवृत्ति होती है। वर्माजी का जीवनदर्शन नियतिवादी विश्वासों का पुजीभूत स्वरूप है। नियतिवाद उनकी प्रत्येक कृति का मूल स्वर है। किन्तु 'सामर्थ्य और सीमा' उपन्यास तो नियतिवाद का रचनात्मक प्रतिपादन है। इस उपन्यास का एकमात्र उद्देश्य नियतिवाद का सभी कोणों से सस्थापन है। इसमें मनुष्य के अहकार को उसके सभी प्रतिनिधि रूपों में प्रस्तुत किया गया है, तत्पश्चात् प्रत्येक अहकार का प्रकृति द्वारा विनाश। उपन्यास का पहला वाक्य है- 'मनुष्य का यह दावा है कि वह सक्षम है, समर्थ है, ऐसा प्रतीत होता है कि यह वाक्य सर्वसंहार के लिये लिखा गया है।

प्रतिनिध मण्डल के सदस्यों के अतिरिक्त इस उपन्यास में दो प्रमुख चरित्र है- रानी मानकुमारी और मेजर नाहर सिह। जीवन के प्राप्त अनुभवों से दार्शनिक बने मेजर नाहर सिंह नियतिवाद के प्रवक्ता के रूप में उभरे हैं। रानी मानकुमारी ध्वसोन्मुख सामंती व्यवस्था का प्रतीक-चिन्ह है। अपने खोये हुए वैभव और शक्ति को प्राप्त करने का जी-तोड़ प्रयत्न करते हुए भी वे विवश हैं- नियति,

१- भूले बिसरे चित्र वर्मा पृ० ४४०

सामाजिक विषमताओं के कारण। यद्यपि इस उपन्यास का एकमात्र उद्देश्य है- नियतिवाद का अध समर्थन। परन्तु इस समर्थन में कई अन्तर्विरोध उभरे हैं। नाहर सिह के अतिरिक्त सभी पात्र केवल कर्म में ही विश्वास रखते हैं नियति में नहीं। वस्तुत नियतिवाद, कर्मवाद का पूर्णत नकार है। नाहर सिह मनुष्य की सारी विकास-यात्रा को नकारकर शुभ का उपहास करता है- 'तुम देख नहीं पाते कि मृत्यु तुम्हारे सिर पर मडरा रही है, तुम सब मिटने और मरने के लिए एकत्रित हुए हो, यहॉ पर।'[1] इस प्रकार समस्त नकारात्मक तत्वों को समेटकर वर्माजी का नियतिवाद साकार हुआ है सामर्थ्य और सीमा में।

'थके पाव' नामक उपन्यास में तीन पीढ़ियों की कथा है- इन तीनों पीढ़ियों के व्यक्तियों की समस्याए, नैतिक मूल्य और समस्याओं से संघर्ष करने का ढग, एक सा है। उपन्यास के पात्र रामचन्द्र और उसका पुत्र केशव आर्थिक कठिनाईयों से जूझते हैं। केशव का मन मध्यवर्गीय खोखली मान्यताओं के खिलाफ विद्रोह करता है। परन्तु उनका विरोध सैद्धान्तिक है, सक्रिय रूप धारण नहीं कर पाता। वह अन्तर्विरोधों में जीने वाला व्यक्ति है- उसे ग्राह्य भी स्वीकार है और अग्राह्य भी। परम्परागत सस्कारों की जकड़न से उसे मुक्ति नहीं मिलती। विरोधों से समझौता कर लेना उसकी चारित्रिक विशेषता है। केशव का पुत्र मोहन भी मध्यवर्गीय व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करता है। इन तीनों चरित्रों के माध्यम से मध्यवर्गीय जीवन का वह रूप सामने आता है- जिसमें व्यक्ति आदर्श और यथार्थ की सीमाओं से जूझता रहता है। वह न आदर्श से दूर हो पाता है, न यथार्थ से। कुढ़न और घुटन जीवन का अनिवार्य सत्य बन जाती है। मध्यवर्गीय व्यक्ति को अभावों और विवशताओं से मुक्ति नहीं मिल सकती क्योंकि वे मान्यताएं ही इस वर्ग के सत्य हैं जिनसे अभावों और विवशताओं का जन्म होता है। इस वर्ग के पास विशिष्टता का ढोंग है, सम्पन्नता का दिखावा है, सामाजिकता है, नैतिकता है। मोहन का निर्माण भी उसी ढांचे में हुआ है जिसमें केशव का। उसका चरित्र ऐसा है मानो उसका अपना कोई अस्तित्व ही नहीं। वह मात्र परिस्थितियों का दास है। मोहन का भाई किशन उच्चमध्यवर्ग का प्रतिनिधि है। अपनी महत्वाकाक्षाओं की पूर्ति के लिये वह अपने ही परिवार के अन्य व्यक्तियों की उपेक्षा करता है। उपन्यास के सभी नारी चरित्र परम्परागत भारतीय आदर्शों से युक्त है। माया और सुशीला नारी चेतना की प्रतीक हैं। ये दोनों खोखली मान्यताओं के विरुद्ध आवाज उठती हैं। माया के लिए विवाह का अर्थ है- स्त्री जातिको नरक में ढकेल देना। बदलते हुए युग के साथ सामाजिक गठन में बदलाव आता है और माया विवाह करने से इकार कर देती है- 'मैं जानवर नहीं हूँ कि जिसके साथ चाहा बाध दिया, मैं सम्पत्ति नहीं हूँ जिसे चाहा उसे दे दिया।'[2] मध्यवर्ग नारी के विकास की समस्त सम्भावनाओं को इसलिए कुचल देना चाहता है क्योंकि वह उसे विकसित करने की सामर्थ्य नहीं रखता। संघर्षों से जूझते हुए व्यक्ति अपना एक वर्ग बनाता है और उसकी मानसिकता भी उसी वर्ग के अनुरूप ही होती है। व्यक्ति उससे अलग होकर जी नहीं पाता- यही उपन्यास का मुख्य बिन्दु है। इस प्रकार कथाकार मध्यवर्ग की संस्कृति और मूल्यों से, उसकी विडम्बनाओं और पाखण्ड से साक्षात्कार कराता है। एक परिवार की तीन पीढ़ियों के माध्यम से लेखक ने पूरे युग की मनोवृत्ति पकड़ने का प्रयास किया है।

जीवन मात्र कोरी भावनाओं से नहीं चलता। उपन्यास 'रेखा' के माध्यम से कथाकार ने स्वच्छन्द प्रेम की समस्या को उठाया है- यौनपरक विस्फोटक स्थितियॉ सम्बन्धों को तनावपूर्ण बना देती है। इस उपन्यास का मूल बिन्दु है- प्रेम और अतृप्त काम की समस्या। भावना और वासना का द्वन्द्व रेखा के समस्त व्यक्तित्व को आच्छादित किये रहता है। क्षणिक भावावेश में अपनाये गये पति को वह स्वीकार नहीं कर पाती और शारीरिक अतृप्ति उसे पागल बना देती है। रेखा और प्रभाशकर

१- सामर्थ्य और सीमा वर्मा पृ० १२७

२ थके पांव वर्मा पृ० ६१

पति-पत्नी होते हुए भी एक-दूसरे को शारीरिक रूप से सतुष्ट नहीं कर पाते। प्रेम में दो तत्व प्रधान हे- शरीर और आत्मा। रेखा आत्मा की भूख के सामने शरीर की भूख दबा नहीं पाती। उसका शारीरिक धर्म प्रबल रूप में मुखर हो उठता है। वह भावुकता और वासना के बीच झूलती रहती है। उसका वाह्य मन पति की पूजा करता है परन्तु अन्तर्मन शारीरिक तृप्ति चाहता है। फलस्वरूप उसके आचरण में विसगति उत्पन्न हो जाती है और उसका जीवन हमेशा के लिए असतुलित हो उठता है। शरीर की भूख से पीड़ित रेखा का असतुलित जीवन एक दुर्घटना की तरह है जिसके लिए एक ओर यदि उसका भावुक मन जिम्मेदार है तो दूसरी ओर पुरुष की अक्षम्य कमजोरी भी। लेखक ने 'रेखा' में जीवन का एकपक्षीय चित्रण किया है- आदमी को असमर्थ, मनोरोगी और पतित दिखाना ही साहित्य का यथार्थ नहीं है- वह इसके अतिरिक्त भी और कुछ है उसमें सकल्प है, उत्सर्ग है, उर्ध्वमुखी क्षमता है- साहित्य का उद्देश्य उसकी उस क्षमता का, उसकी अनेकानेक सम्भावनाओं का उद्घाटन करना है न कि मात्र उसके पतित रूप का। यह उपन्यास एक आधुनिक लेकिन असहाय नारी की करूण कहानी है जो अपने अतर के सघर्षों में दुनिया के सब सहारे गवा बैठती है उसका यह वाक्य उसके अन्तस् की व्यथा को उद्घाटित करता है- 'नियति ने मेरे साथ बहुत बड़ा खिलवाड़ किया है लेकिन मैं रेखा हूँ -- रेखा। सब मिट गये लेकिन यह रेखा- मिट मिटकर भी अमिट है।'[1]

'सीधी-सच्ची बातें' नामक उपन्यास १६३६ से १६४८ तक के समय की सशक्त कहानी है। कथाकार तत्कालीन राजनैतिक गतिविधियों का चित्रण तो करता ही है साथ ही व्यक्ति के मानसिक सघर्ष, मोहभग और अन्तर्वेदना के जलते हुए सदर्भों का भी। मध्यवर्गीय परिवार का एक युवक-कुशाग्र बुद्धि और तेजस्वी- अपने अदर वाली नैतिकता, आस्था और विश्वास के साथ अनायास ही उस राजनैतिक हलचल में आ पड़ता है। युवक जगतप्रकाश उपन्यास का प्रमुख चरित्र है। इसके चरित्र के स्पष्टतः दो रूप सामने आते हैं- एक राजनैतिक और सामाजिक रूप दूसरा उसका प्रेमी रूप- जगतप्रकाश अप्रामाणिक विश्व में प्रामाणिक मूल्यों की खोज करता दिखायी देता है। जीवन के कटु अनुभव उसकी भावनाओं को कुंठित करते जाते हैं- न वह पूर्णरुपेण मार्क्सवादी रह पाता है और न ही पूर्णत गाधीवादी। कथाकार सामाजिक और राजनैतिक संदर्भो से विसंगतियों और मूल्यहीनता को उभारता है कथित बड़े लोगों से टूटता-जुड़ता जगतप्रकाश अपनी जड़ों से ही उखड़ जाता है और जिन्दगी ढोने लगता है। उसके जीवने में कई स्त्रियां आती है परन्तु बात किसी परिणाम तक नहीं पहुँचती। एक दिन महात्मागाधी की हत्या की खबर के साथ ही उसकी हृदयगति रुक जाती है। उपन्यास में अन्य कई चरित्र भी उभरे हैं। परवेज और जमील अहमद सीधे और सरल हृदय लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं तो रूपलाल मक्कार और जालसाजी में निपुण लोगों का- व्यवस्था और समर्थ लोगों को अपनी तरफ मिलाकर वह सब कुछ अपने पक्ष में कर लेता है। उसी की वजह से जगत प्रकाश की जिन्दगी तबाह होती है और रूपलाल के कारण ही शिवदुलारी और सुखलाल के जीवन का अंत होता है। शिवदुलारी सामाजिक दृष्टि से पतित होते हुए भी क्रान्तिकारी विचारों वाली भली महिला है। अपने वायदे को निभाने के लिये और बाबूलाल का जीवन बचाने के लिए वह अपने पति को जहर देकर स्वयं भी आत्महत्याकर लेती है त्रिभुवन मेहता और सुषमा का चरित्र अवसरपरस्त, कुटिल और स्वार्थी लोगों का प्रतिनिधित्व करता है। अन्य नारी चरित्रों में अनुराधा संयमी, नीरस, कर्मठ और व्यवहारिक किस्म की दबंग औरत का प्रतिनिधित्व करती है। ग्रामीण परिवेश में पली बढ़ी विधवा अनुराधा में नारी सुलभ चंचलता और कोमलता का अभाव है। पिता से विरासत में मिले खेत की देखभाल करते हुए भाई की परवरिश उसके जीवन का एकमात्र उद्देश्य है। भाई की जिन्दगी में ही उसकी जिन्दगी आत्मसात हो गयी है। यमुना भी ग्रामीण संस्कारों में रची-बसी है परन्तु अनुराधा की सी कर्मठता और

१- रेखा पृ० २७८

परिस्थितियों से जूझने का सामर्थ्य उसमें नहीं है। जगत प्रकाश को पसद करने के बावजूद वह परिवार के दबाव और आर्थिक सकटों के चलते घुटने टेक देती है और रूपलाल जैसे मक्कार व्यक्ति की पत्नी बनती है। कुलसुमकावसजी का चरित्र और मानसिकला जगतप्रकाश से मेल खाती है परन्तु अलग-अलग वर्गों से सम्बद्ध होने के कारण उनका विवाह नहीं होता है और वह कायर और दब्बू किस्म के परन्तु व्यक्तित्वहीन रईस परवेश की पत्नी बनती है। इस प्रकार आर्थिक अभाव सामाजिक सम्बन्धों की जड़ों को खोखला करते जाते हैं। इस उपन्यास मे कथाकार ने जगत प्रकाश के चरित्र के माध्यम से प्रामाणिक मूल्यों की खोज का प्रयास किया है। इस खोज में उसके सामने थी अदर की घूटन आदर्शों के पीछे वैयक्तिक स्वार्थों और कमजोरियों का विकृत चित्र और निराशा। पराजय और हताशा जीवन सदर्भ में यथार्थ का पर्याय बन चुके है- 'जगतप्रकाश अब अपने को नितात टूटा हुआ अनुभव कर रहा था। उसकी सारी आस्थाएँ बिखर चुकी थी, उसके सारे विश्वास मर चुके थे। उसके सामने था केवल सूनापन- उस सूनेपन के सिवा और कुछ नहीं।'[१] वर्माजी ने युगीन राजनैतिक गतिविधियो- त्रिपुरा अधिवेशन, द्वितीय महायुद्ध की विभीषिका, जर्मनी की पराजय, बगाल के अकाल, देश की स्वतत्रता और देश के बटवारे तक की घटनाओ का लेखा-जोखा दिया है। बटवारे ने चीजों और स्थितियों के सदर्भ ही बदल दिये थे- समसामयिक सदर्भों की तल्खी से सम्बन्धों और मूल्यों की अर्थहीनता ही इस उपन्यास की अन्तर्वेदना है। प्रस्तुत कृति वर्तमान राजनैतिक ढाचे के तहत पनप रही मूल्य-भ्रशता -- जीवन मूल्यों की पतनशील त्रासदी का बोध कराती है।

'सबहि नचावत राम गोसाई' नामक उपन्यास स्वातन्त्र्योत्तर भारत के राजनैतिक और सामाजिक जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है। तीन परिवारों का क्रमिक विकास हमारे समाज के विघटन को पूरी सच्चाई के साथ उभारता है। भारतीय जीवन धनपतियों, नेताओं और गुण्डों की मिली-जुली शक्तियों से किस तरह आक्रान्त और बरबाद हो रहा है- यह उपन्यास उस पूरी स्थिति को वर्णित करता है। ब्लैक मार्केटियर राधेश्याम, डाकू का वशज गृहमत्री जबरसिंह और अपने भीतर सत्य की सम्भावना लिये हुए पुलिस अधिकारी रामलोचन- ये उपन्यास के प्रमुख चरित्र हैं। छोटी पूजी फलती-फूलती है, धर्म और समाज का शोषण होता है। धन की शक्ति राजनीति में भी अपनी जड़ें जमा चुकी है परोक्ष रूप से उसका ही शासन चल रहा है। सत्ता और सम्पत्ति का पारस्परिक षडयत्र देश की राजनीति को भ्रष्टाचारजीवी बना रहा है। सभी जाने-पहचाने सभ्य चेहरे अपने भीतर असभ्यता और नीचता की अनेक पर्तें छिपाये हैं- इस प्रकार पूरा का पूरा देश विसगतियों से भरा पड़ा है- नेतागण गाँधीवाद की दुहाई देते है और भोली-भाली जनता का गला घोंट देने में तनिक भी हिचकिचाते नहीं है। नौकरी में भाई-भतीजावाद, इलेक्शन में जातिवाद, भाषणों में समाजवाद और विषम परिस्थितियों मे गाँधीवाद का पल्ला पकड़ लेते हैं- इन भ्रष्ट लोगों ने एक अलग किस्म की सस्कृति को विकसित किया है। ये लोग अवसर के अनुसार स्वय को बदल लेते हैं। इस प्रकार भारतीय सस्कृति से बिलकुल भिन्न संस्कृति फल-फूल रही है। जनकल्याण का मुखौटा पहने हुए भ्रष्टाचार जीवी राजनीति विघटित होते हुए मूल्यों, बनते-बिगड़ते सामाजिक सम्बन्धों और हिन्दू धर्म की तथाकथित मान्यताओं को इस उपन्यास में प्रभावशाली ढग से प्रस्तुत किया गया है।

वर्माजी के अन्य सभी उपन्यासों की ही भाँति 'प्रश्न और मरीचिका' में नियतिवादी विचारधारा के दर्शन होते हैं। इस उपन्यास के सभी चरित्र इसी धारा-क्रम में चलायमान हैं। उदयराज उपध्याय के माध्यम से कथाकार एक पूरे युग-खण्ड से परिचित कराता है। उपन्यास में परोक्ष रूप से आजादी के बाद से लेकर सन् १९६२ तक के भारत का राजनैतिक दस्तोवज प्रस्तुत हुआ है और प्रत्यक्ष रूप से उदयराज उसके परिवार एव इष्ट मित्रों की कथा है' दोनों स्तरों के तल पर दृष्टि

१- सामर्थ्य और सीमा- वर्मा पृ० ४५२

गडाकर जीवन के मूल रहस्य को पहचानने का प्रयास लेखक ने किया हे- और उसकी दृष्टि प्राय यथार्थवादी एव तटस्थ रही है- बदलते हुए परिवेश में चरित्रों के माध्यम से मूल्यों के पुनर्मूल्याकन का प्रयास किया गया है। नवयुग के प्रभातकाल में जीवनमूल्यों में अस्थिरता और लोगों के चरित्र में असाधारण विषमता लक्षित होने लगी थी- 'और इस विनाश एव मृत्यु के बावजूद दुनिया अपना अधापन लिए चल रही है। चुनावों की सरगर्मियां बढ़ती जा रही थीं। दूसरों की निंदा, दूसरों को गाली-गलोज, अपवाद ओर लाछन। यह चुनाव जीतने के लिए निकृष्ट कोटि की नीचता पर उतर आना। और यही चुनाव जीते हुए लोग देश के भाग्य-निर्माता होंगे। यही झूठ, छल-कपट, कमीनेपन ओर ओछेपन से भरे हुए लोग देश पर शासन करेंगे। यह डिमोक्रेसी, यह लोकतन्त्र। यह सब एक व्यग्य सा दिख रहा था मुझे।'[1] नारी चरित्रों में प्रमिला एव लता भारतीय सस्कारों में रची-बसी है तो दूसरी ओर रूपाशर्मा, रेवा एव मजीत पाश्चात्य-सस्कृति के अधानुकरण से प्रभावित। केसरबाई, सेठ गाबड़िया की रखैल होते हुए भी उदात्त भावनाओं से युक्त है। पहले सेठ पिता और बाद में सेठ पुत्र उसे वासना-पूर्ति का साधन बनाते हैं। उनसे तमाम घृणा करते हुए केसरबाई अपना सबध करने की सोचती है परन्तु सामाजिक मान्यताएं उसके अरमानों का गला घोंट देती है। उसका अपना भाई धर्म का मामला उठाकर उसके प्रेमी की हत्या कर देता है। स्त्री-पुरुष अपने-अपने दायरे में सिमटे हुए हैं दोनों सामाजिक दृष्टि से बधे हुए। परन्तु बाहरी जिन्दगी में स्त्रियों की भागेदारी नहीं है- वे घर के दायरे में सिमटी हुई हैं और पुरुष स्वतत्र, कई अनैतिक संबध रखने वाला। चरित्रों के वर्गगत प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर भगवती बाबू प्रेमचन्द के धरातल पर ही चलते हैं। अलग-अलग समाज से सबधित प्रत्येक चरित्र की अपनी अलग-अलग मान्यताए और परम्पराए है-- सोचने के ढग भी अलग-अलग कई बार ऐसा प्रतीत होता हे कि उन्होंने अपने विभिन्न उपन्यासों में से कुछ चरित्र और समस्याए लेकर एक नया उपन्यास लिख डाला है। जिसमें उनकी अनास्था दृढतर होकर प्रकट हुई है। वर्तमान समय में व्यक्ति मनुष्य नहीं रह गया है। आज के जितने भी सघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व है वे सभी सामाजिक मूल्यहीनता और विसगतियों से आच्छादित है -- इन्हीं के कारण आधुनिक जीवन परिवर्तित हो रहा है। कथाकार विघटित होते हुए आधुनिक जीवन को समसामयिक रगत के साथ प्रस्तुत करता है।

'युवराज चूण्डा' उपन्यास मे लेखक मारवाड़ और मेवाड राज्यो के माध्यम से सामती शासन-व्यवस्था को उभारता है। ऐतिहासिक कथा का आवरण लेकर उपन्यासकार देश की उस चारित्रिक विशेषता को उद्घाटित करता है जो न केवल हमारी वर्षों की गुलामी का कारण बनी रही बल्कि आज भी किसी न किसी रूप में हमारी जड़ों में घुन की तरह लगी है- किसी सीमा तक देश में विदेशी सत्ता के प्रवेश के लिये जिम्मेवार भी। व्यक्ति जब अपने आपको देश के ऊपर तरजीह देने लगता है तो नतीजा यही होता है- 'हमारे चरित्रों में घुन लग गया है। धर्म, समाज और देश से कटकर ये क्षत्रिय वैयक्तिक स्वार्थ और मानापमान में डूब गये हैं।'[2] उपन्यास में दो चरित्र उभरते है- राव रणमल और युवराज चूण्डा। राव रणमल के चरित्र के रूप में मध्ययुगीन सामती मूल्यों की विकृतियों से युक्त एक ठेठ राजपूत शासक मूर्तिमान हुआ है। तो युवराज चूण्डा इसके ठीक विपरीत कर्तव्यनिष्ठ, पराक्रमी होने के साथ ही निस्पृह और निस्संग। मध्ययुग के राजपरिवार मे जन्में इस व्यक्ति के चरित्र को इस दृष्टि सें विलक्षण ही कहा जायेगा। अंचली के अपने प्रति कोमल भाव को वे धार्मिक आस्था के रुप में स्वीकार करते हैं। और उसकी मृत्यु के बाद सार्वजनिक रूप से निस्सकोच उसका दाह ओर अस्थि-विसर्जन करते हैं गुणवती का चरित्र सामान्य गुण दोषों से युक्त नारी चरित्र है वस्तुत उसी की कमजोरी का लाभ उठाकर राव रणमल अपने कुचक्र में सफल होते हैं अचली का

चरित्र यद्यपि क्रान्तिपरक मूल्यों से युक्त है और चूण्डाजी के साथ उसके सबध की सभावनाएं भी थी परन्तु लेखक ने उसकी मृत्यु दिखाकर कथा का अत कर दिया है। अमिया ओर रधिया पुरुष की पाशविकता का शिकार है, साथ ही रनिवासीय षडयंत्रों में शामिल भी होती हैं जोधाजी का चरित्र अपने पिता की स्वार्थ-विकृत आत्मकेन्द्रित दृष्टि के ठीक विपरीत है परन्तु यदा-कदा वाचिक विरोध ओर आशंका की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त अपने पिता का कोई सक्रिय विरोध नहीं करता। उपन्यास के सभी नारी-चरित्र पुरुषों के पीछे चलने वाले हैं एकमात्र अचली को छोड़कर। किसी भी प्रकार का विरोध और कोई ठोस कदम वे नहीं उठाती हैं। ऊपरी खोल मध्ययुगीन होने पर भी यह उपन्यास आधुनिक सवेदना से अनायास जुड़ जाता है। युवराज चूण्डा आधुनिक शासक की भांति उस क्षेत्र के आर्थिक और भौतिक विकास की सभावनाओं पर दृष्टि टिका देते हैं। रान्धा को बसाने और व्यवस्थित करने के प्रयास में एक योजना और एक व्यवस्था दिखायी पड़ती है, जो यथार्थवादी और आधुनिक है। अन्तत यह उपन्यास मध्ययुगीन इतिहास के माध्यम से स्वार्थपूरित षडयत्रों और सघर्षों से भरे जीवन का यथार्थ चित्रण करके हमें एक आदर्शवाद की ओर ले जाता है- अपने कथानायक युवराज चूण्डा के साथ।

'धुप्पल' उपन्यास वस्तुत वर्माजी की आत्मकथा है। मध्यवर्ग के एक कायस्थ परिवार में जन्मा कस्बे का बालक अनजानी लहरों में डूबते-उतराते कैसे भगवतीचरण वर्मा बना- उस जीवनसघर्ष को लेखक धुप्पल-सयोगमात्र मानता है। इस उपन्यास में लेखक के जीवन के गतिरोधों के माध्यम से युगीन अन्तर्विरोध मुखरित हुये हैं और इनके जीवन की कथा आधुनिक जीवन की विसगतियों को उद्घाटित करती है। उठा-पटक और भागदौड़ की जिन्दगी में व्यक्ति क्या से क्या बन जाता है- इसकी ही गाथा है धुप्पल। लेखक के जीवन के ताप-तनाव, संकल्प और सघर्ष इन सबके ऊपर सफलता प्राप्त करने में नियतिवादी दृष्टिकोण प्रभावी रहा है।

'चाणक्य' उपन्यास में मगध-साम्राज्य के पतन को चित्रित किया गया है। नंदवश का इतिहास उन विकृतियों और कमियों को सामने लाता है जो वर्ममान युग के भी सत्य हैं और उसे मूल्य-स्तर पर खोखला करते जाते हैं। महापद्मनद और उसके पुत्रों द्वारा प्रजा पर अत्याचार किये जा रहे थे, राजसभा में विष्णुगुप्त द्वारा उसकी कड़ी आलोचना उनके अपमान का कारण बनती है। विष्णुगुप्त का यही अपमान अन्तत उस महाभियान का आरंभ सिद्ध हुआ है -- जिससे एक ओर तो आचार्य विष्णुगुप्त 'चाणक्य' बने और दूसरी ओर मगध साम्राज्य को चन्द्रगुप्त जैसा वास्तविक उत्तराधिकारी प्राप्त हुआ। उपन्यास में चाणक्य पहली बार अपनी समग्रता में चित्रित हुए हैं। चाणक्य के चरित्र के माध्यम से कथाकार अपनी नैतिक मान्यताओं की स्थापना का प्रयास करता है- धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष की व्याख्या द्वारा। निर्बन्ध और मुक्त जीवन के यह नितात सत्य अवयव है। राजमहलों में यौन सबधी नाटक के प्रभाव के कारण कायरता के बीज किस प्रकार गहरे रूप से अपनी जड़ें जमा लेते हैं- इसका ज्वलत उदाहरण नंदवंश है। यौन विकृतियाँ समाज को अपनी लपेट में लेकर अकर्मण्य बना देती है। दासी बीथिका स्त्री के भोग्या रूप के अलावा और किसी रूप से परिचित नहीं कराती-- 'बधन ही नारी की गति है, निर्बन्धता नारी की घुटन और मृत्यु है।"

इस प्रकार वर्माजी की दृष्टि समाज की गति, प्रकृति और परिवर्तन को उसकी प्रक्रिया में पहचानने की रही है। वे व्यक्ति या चरित्र के सामाजिक अन्त सम्बन्धों और परिप्रेक्ष्य का आधार लेकर चले हैं। परिस्थिति या चरित्र के निरुपण के प्रति वे अपनी कुछ मान्यताओं या अनुभवों के प्रति ज्यादा सवेदनशील है। इससे उनके लेखन में गहराई तो आई है किन्तु कुछ छूटा भी है।

❀

१ पृ० ८५

भगवतीचरण वर्मा की कहानियाँ : अन्तर्वस्तु

भगवतीचरण वर्मा अनेक चर्चित और उत्कृष्ट कहानियों के लेखक हैं। उपन्यासों की भाति ही इनकी कहानियों की भी एक बड़ी सख्या है किन्तु उनकी प्रत्येक कहानी 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' या 'दो बाके' जैसी गठी हुई कहानी नहीं है किन्तु उनके किस्सागो का वैविध्य उनकी कहानियों में झलका है। कथा साहित्य में वर्माजी का प्रवेश कहानी-लेखन के माध्यम से हुआ और कहानीकार के रूप में वर्माजी को काफी लोकप्रियता मिली है। परन्तु धीरे-धीरे इनका ध्यान उपन्यास की ओर केन्द्रित हो गया। सत्यता तो यह है कि साहित्य-सृजन के पीछे उनका एक उद्देश्य जीविकोपार्जन भी है और कहानी-सग्रहों की अपेक्षा उपन्यासों का बाजार-मूल्य अधिक है। अत उनके कहानीकार की प्रगति एक लम्बी अवधि के लिये अवरुद्ध हो गयी परन्तु बाद में पत्र-पत्रिकाओं में उन्होंने कई कहानिया लिखी। अपनी अभिव्यक्ति-क्षमता के कारण इन्होंने एक ही विषय पर विभिन्न तरीकों का प्रयोग किया है। मनुष्य के रागात्मक सम्बन्धों को इन्होंने अनेक पहलुओं से देखा और इनकी दृष्टि में सबधों में विघटन का मुख्य कारण है- पैसा। पूजीवादी समाज में सम्बन्धों में स्थायित्व मात्र धन के होने तक ही बना रहता है। रचनाकार अपने युग-परिवेश से अलग हटकर सृजन नहीं कर सकता यही कारण है कि वर्माजी की कहानियों में पूजी के सामर्थ्य और सर्वशक्तिमत्ता के प्रति स्वीकार भाव दिखायी देता है। मनुष्य की विवशता और दयनीयता का बहुत बड़ा कारण है पैसा। जीवन से यह इतनी बुरी तरह चिपटा हुआ है कि मनुष्तया और स्वाभिमान जैसे शब्द अर्थहीन हो गये हैं और स्त्री अपने आपको बेचने के लिये विवश है- 'एक अनुभव', 'खिलावन का नरक' आदि कहानियों मे यही आक्रोश दिखाई देता है।

यद्यपि वर्माजी ने नितात मनोविश्लेषणात्मक कहानियॉ नहीं लिखी परन्तु मानव-मन की विकृतियों और कुण्ठाओं को समझने और उसके विश्लेषण का प्रयास इन्होंने अवश्य किया है। समाज के नैतिकता संबंधी नियम, युग और परिस्थिति के अनुसार बदलते रहते हैं अत अधूरी और सकीर्ण दृष्टि सदा अश्लील होती है। व्यक्ति अपने मानसिक स्तर के अनुसार ही श्लील-अश्लील का निर्धारण करता है। 'दो बाके' कहानी-सग्रह की भूमिका में इन्होंने लिखा है- 'इस विषय में मुझे केवल इतना कहना है कि ससार में 'अश्लीलता' नाम की कोई चीज है भी, इस पर मुझे शक है; रही नैतिकता की बात, वहॉ मनुष्य का निजी दृष्टिकोण है।"[1] वास्तव में इसान की विशाल जिन्दगी नीति-अनीति से कहीं बड़ी होती है। वर्माजी की कई कहानियों की अन्तर्वस्तु इन्हीं नैतिक मानदण्डों से प्रभावित है जैसे- 'काश मैं कह सकता', 'दो रास्ते' कहानियॉ। वर्गीय मानसिकता के विभेद से उत्पन्न टकराव भी इंसान की जिन्दगी को तल्ख बना देते हैं जीवन की यही तल्खी इनकी 'मोर्चाबन्दी' और 'संकट' कहानियों में उभरती है।

'प्रेजेण्ट्स' कहानी इनके पहले कहानी-संग्रह 'इन्स्टालमेण्ट' की पहली कहानी है। पुरुष-वर्ग के भोगी प्रवृत्ति नारी के जीवन को कितना उपहासात्मक बना देती है और उसका जीवन विलास-क्रीड़ा में उलझकर कैसा विद्रूप हो जाता है- यही इस कहानी का प्रतिपाद्य विषय है। इस कहानी की प्रमुख चरित्र शशिबाला अपने जीवन में आये प्रत्येक व्यक्ति को भावी पति के रूप में देखती रही परन्तु प्रत्येक व्यक्ति उसका उपभोग ही करता है और उसे एक प्रेजेण्ट देकर किनारे हट जाता है। शशिबाला एक जटिल चरित्र के रूप में सामने आती हैं। नये-नये पुरुष चुन लेने की उसकी प्रवृत्ति उसे एक पतनोन्मुख

१- दो बाँके वर्मा पृ० ५-६

आधुनिका के रूप में उभारती है जिससे सहानुभूति सभव नहीं किन्तु उसकी पीड़ा से गहरा साक्षात्कार कराता हुआ लेखक उसके प्रति करुणा भी पैदा करता है। परमेश्वरी बाबू के रूप में एक ऐसा चरित्र सामने आता हे जो उसकी कुण्ठा का कारण समझता है और अभिशापित स्मृति-चिह्न से छुटकारा दिलाने के लिए एक कान्ट्रेक्ट साइन कर उन्हें खरीद लेता है। इस प्रकार यह कहानी पुरुषों के अच्छे बुरे दोनों रूपों को उजागर करती है।

'अर्थ पिशाच' मे लोभी व्यक्ति की दुर्दभ संचयवृत्ति का विश्लेषण है। मौत से भी अधिक भयानक जिन्दगी ढोने वाला लोभी व्यक्ति जीना चाहता है जबकि उसकी जिन्दगी के मायने कुछ नहीं है। उस धन-पिशाच के पास सवेदना ओर मनुष्यता नाम की कोई चीज नहीं थी। इस सच्चाई को वह स्वीकारता भी है- 'यह मेरे जीवन का प्रथम सत्य है और साथ ही यह मेरे जीवन का अतिम सत्य होगा-- मै शैतान हूँ शैतान।'[1] जिन्दगी की भीख मागने वाला वह शैतान अपनी सम्पत्ति के ढेर को देखता हुआ प्राण छोड़ देता है। इस कहानी में पौराणिक हिन्दू चिन्तन के द्वारा लेखक आधुनिक पूंजीवादी समाज पर करारा व्यग्य करता है। 'वरना हम भी आदमी थे काम के' कहानी में वर्माजी मिया राहत के रूप में एक ऐसे चरित्र को सामने लाते हैं जो सम्मान का भूखा है, शायर है और लापरवाह है- गरीब होते हुए भी रोजी-रोटी की चिंता से मुक्त एक अलग दुनिया में रहने वाला। भावुक और प्रेमी इस सीमा तक कि केवल एक वार मिली सुंदर युवती की गिरफ्तारी नहीं सहन कर पाता और नौकरी छोड़कर चला आता है। वर्माजी मूलत कवि थे अत उन्होंने कवि की फाकेमस्ती का सही परिचय कराया ह।

'बेकारी का अभिशाप' शीर्षक कहानी में लेखक वर्तमान समाज, राजनीति और उसकी व्यवस्था के सड़े-गले रूप को सामने लाता है- सिद्धान्तो के लिये मर मिटने की बात करने वाले देशभक्त लोगों के पास जुबानी जमाखर्च के अलावा कुछ नहीं है। ललितमोहन और उसके भाई के चरित्र उन लोगों का प्रतिनिधित्व करते है जो आराम, प्रतिष्ठा और झूठे दिखावे की चाह में बरबाद हो जाते हैं और इस चाहत के बदले उन्हे मिलती है भुखमरी। उन चारों भाईयो में से कोई भी भाई रोजगार ढूँढने में समर्थ नहीं होता। भारत में बेरोजगारी से बढ़कर भयावह स्थिति आदमी के लिये शायद ही कोई हो- यह कहानी आधुनिक युग की इसी सच्चाई की ओर इगित करती है। 'कुवर साहब मर गए' शीर्षक कहानी मे बहुत हल्के और मजाकिया लहजे में कहानीकार ने देश के नैतिक पतन के लिये जिम्मेदार विलासी ओर अकर्मण्य सामती वर्ग की कलई खोलकर रख दी है। इस सदर्भ में कुवर कमल नारायण जेसा चरित्र सामने आता है- एय्याश, अकर्मण्य, सवेदनाशून्य और सामाजिक जीवन से कटकर स्वय में डूबे रहने वाला व्यक्ति। स्वार्थी इस सीमा तक कि एक बार गिरफ्तार हो जाने पर अपनी सुविधाओं की पूर्ति और हितों की सुरक्षा के लिये तुरंत अपनी बात से हट जाते है। बंगले के बरामदे में बैठे कुवर साहब की इस स्थिति के द्वारा कहानीकार उनके चरित्र का सही परिचय देता है- 'और उनके सामने पड़ी हुई मेज पर एक व्हाइट हार्स की खुली हुई बोतल, तीन-चार सोडा की बोतलें तथा एक शराब से भरा गिलास रक्खा था, और कुवर साहब की नजर बाग में काम करने वाली जवान मालिन पर थी। हम लोगों को देखते ही वे उठ खडे हुए। उन्होंने आवाज दी- अबे ओ, कलुआ, देख तो इन खद्दरपोशों को किसने बंगले में घुस आने दिया ? इनसे कह दे कि कुँवर साहब मर गए।'[2]

इंसान के सामने सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न है- जिन्दा रहने का और इस पूजीवादी समाज में स्त्री भी शोषितों की पक्ति में खड़ी हो जाती है। 'एक अनुभव' कहानी में एक मजबूर स्त्री द्वारा सवेदनाशून्य स्थिति में शरीर का व्यापार करने की कथा है। लेखक पृथ्वीनाथ के रूप में एक ऐसे चरित्र को सामने

---

१ **इन्स्टालमेण्ट -- भगवतीचरण वर्मा पृ० १६।**

२ **वही पृ० ४४**

लाता है जो भारतीय संस्कारो और नैतिकता को तिलांजलि नहीं दे पाने के कारण बाजार में बिकने वाले नग्न और अश्लील सौन्दर्य को देख नहीं पाता और उसे इस घृणित काम को छोडने के लिए कहता है। एक औरत की बेबसी का मार्मिक चित्रण करते हुए लेखक सामाजिक अन्तर्विरोधो को उभारता है। 'विक्टोरिया क्रॉस' कहानी मे वर्माजी ने न किसी समस्या को उठाया है ओर न ही समाज की विसगतियों को उभारा है अपितु एक मजेदार 'गप' सुनायी है। जिन्दगी में कुछ घटनाए कभी-कभी 'गप' बन जाती है जिसमें व्यक्ति कहाँ का कहाँ पहुँच जाता है। एक साधारण सा भीरू प्रकृति का सिपाही सुखराम विक्टोरिया क्रॉस जैसा सम्मान प्राप्त करता है - बिना किसी पराक्रम के मात्र सयोग के आधार पर। जीवन मे सफलता प्राप्त करने के लिये योग्यता ही महत्व नहीं रखती अपितु परिस्थितियॉ-भाग्य-भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है यही वर्माजी की नियतिवादी जीवन-दृष्टि है। 'एक विचित्र चक्कर' कहानी में लेखक देवेन्द्र और कमला के रूप में दो परस्पर विरोधी चरित्र सामने लाता है। आदर्शवादी कहानी लिखते-लिखते लेखक उसका अत विशुद्ध यथार्थवादी दृष्टि से करता है। कमला मरते वक्त अपनी सारी सम्पत्ति देवेन्द्र के नाम करके उसके जीवन में एक नया पृष्ठ जोडती है। और आदर्शवादी देवेन्द्र लखपति बनते ही प्रेम और सयम से तिलाजलि देकर किसी और रूप में सामने आता है और उसका वह रूप है स्वार्थी और एय्यास व्यक्ति का। 'मुगलों ने सल्तलन बख्श दी' कहानी मुगल बादशाहों की अकर्मण्यता पर करारा व्यग्य है। लेखक अपनी बात को व्याग्यात्मक बनाता है -- शहजादी की बीमारी, वेसनलीन द्वारा उसका इलाज और रबर के तम्बू के द्वारा पूरे देश में कब्जा करने की बात से। कहानीकार की ये सभी अटकलबाजियाँ अग्रेजो की चतुराई ओर तत्कालीन शासकों की काहिली और मूर्खता की कहानी कहती है।

इच्छाओं का आवश्यकता से अधिक दमन कुण्ठा को जन्म देता है- यही मनोवैज्ञानिक सत्य 'बाहर-भीतर' कहानी का कथ्य है। प्रेम की असफलता की पीडित चार देवियॉ अपनी मित्र निर्मला के विवाह की खुशी सहन नहीं कर पाती और उसे हतोत्साहित करती हैं। कहानीकार इन चारों स्त्रियों के माध्यम से नारी की कुण्ठाओं का मनोवैज्ञानिक चित्रण करता हे जिस प्रेम प्राप्ति के लिये उनका अन्तस् लालायित था उसे दूसरों को पाते देख उनका मन ईर्ष्या से भर उठता है। और वे विवाह की बुराई करते हुए पुरुष वर्ग का बहिष्कार करती है। वास्तव में अधूरा मानसिक विकास इन चारों स्त्रियों की दृष्टि को अधूरी और सकीर्ण बनाता है। 'प्रायश्चित' कहानी जनमानस में पैठे धार्मिक-अधविश्वास की ओर किया गया कहानीकार का संकेत हैं। अधूरे ज्ञान के कारण रामू की मॉ के समान अशिक्षित स्त्रियॉ रुढिग्रस्त मान्यताओं को ढोती चली आ रही है और धर्म के नियामक ब्राह्मण समाज की अज्ञानता ओर अधविश्वास का लाभ उठाकर किस प्रकार अपना पेट भरते हैं पडित परमसुख की चारित्रिक विशेषतायें इसका उदाहरण है। पण्डित जी और उनकी पूरी पचायत- सासजी, मिसरानी, किसनू की मॉ और छन्नू की दादी- द्वारा घोर कुम्भीपाक नरक से मुक्ति पाने के लिये की गई व्यवस्था वास्तव में धार्मिक-व्यवस्था पर किया गया व्यग्य है जिसकी असलियत कबरी बिल्ली के उठकर भागने के साथ खुल जाती है। 'उत्तरदायित्व' कहानी आधुनिक भारतीय नारी के पश्चिमी सभ्यता के अधानुकरण के ऊपर व्यग्य है। धनी पिता की बेटी शीला की घनिष्टता जगदीश के जीवन में अभिशाप बनकर आती हे। जगदीश के प्रेम का शीला के लिये कोई मूल्य नहीं होता। अत प्रेम में असफलता मिलने पर हताश जगदीश आत्महत्या कर लेता है परन्तु शीला के ऊपर कोई असर नहीं होता- उसके रहने या न रहने पर। शीला के प्रेम के विषय में मनोगत भाव संकीर्ण किन्तु खतरनाक दृष्टि के परिचायक हैं। एक गरीब युवक के लिये हताशा ही जीवन का पर्याय बन जाता है। जगदीश का दृष्टात उस भयावह स्थिति की पुष्टि करता है 'परिचयहीन यात्री' शीर्षक कहानी में लेखक रेल में मिले सज्जन के चरित्र के रूप में अपनी मान्यताओं को स्पष्ट नहीं कर पाया है एक तरफ आत्मा की सुदरता को महत्व देना दूसरी तरफ शरीर

के सौन्दर्य के प्रति उस सीमा तक जागरुक रहना कि कोई अन्य व्यक्ति उस कुरुपता को देख न पाये। 'बॉय! एक पेग और' कहानी की माधवी अपनी धन-लिप्सु प्रवृत्ति के कारण अपना जीवन तो बरबाद करती ही है साथ ही अपने प्रेमी विश्वकांत को भी अर्धविक्षिप्त बना देती है। माधवी की भूल का प्रायश्चित- आत्महत्या- के रूप में सामने आता है और विश्वकात जीते जी मर जाता है। दो प्रेमी अपनी कमजोरियों और नियतिवश कारुणिक स्थिति में पहुँच जाते हैं। 'इन्स्टालमेण्ट' शीर्षक कहानी में लेखक चौधरी हरसहाय और उनके पुत्र विश्वम्भर सहाय के चरित्र के द्वारा बिगड़े रईसों के झूठे प्रदर्शन, शान-शौकत और रगीन-मिज़ाजी की प्रवृत्ति के ऊपर व्यंग्य करता है। पुत्र, पिता से कुछ कदम आगे बढ़ता है - 'लेकिन जहाँ पिता महुवे ठर्रे की सवा बोतल पी जाते थे, वहॉ पुत्र ह्विस्की के दो पेगों से ही सतुष्ट हो जाया करते थे। न पिता वेश्यागामी थे न पुत्र। केवल, पिता रियासत की कुछ जवान वारिनों और चमारिनों पर दस-पन्द्रह रूपया महीना खर्च कर दिया करते थे, तो पुत्र नगर में 'सोसायटी गर्ल्स' की दावत पर तथा उनको खेल-तमाशे दिखलाने में दस-पन्द्रह रूपया महीना खर्च कर दिया करते थे।''

'दो पहलू' कहानी 'दो बाके', कहानी-संग्रह की पहली कहानी है। लेखक इस कहानी में दो विरोधी परिस्थितियों में जीने वाले कोढ़ी भिखारी और सुदर महत्वाकाक्षी युवक - व्यक्तियों की मानसिकता का विश्लेषण करता है। रामेश्वर- जिसके पैरों पर दुनिया के सारे सुख लोट रहे थे- आजादी के दीवानों के जुलूस में शामिल होकर कल्पना के किसी स्वर्ग को पाने के लिये पुलिस की गोली खाकर अपने प्राण त्याग देता है और दूसरी ओर कोढ़ी और बूढ़ा भिखारी पूड़ी के एक टुकड़े के लिये कुत्तों से संघर्ष करते हुए कल्पना के किसी नरक से बचने के लिये स्त्रियों और बच्चों को धक्का देते हुये बिगड़ैल हाथी से अपनी जान बचाता भाग निकलता है। लेखक इन दो भिन्न चरित्रों के माध्यम से जीवन जीने के तरीके पर एक प्रश्न उठाता है। 'मेज़ की तस्वीर' कहानी में लेखक की दृष्टि आर्थिक चेतना के समाज में घुले-मिले पहलू पर टिकी है। पैसे के कारण ही गरीब रामेश्वर का विवाह मनोरमा से नहीं हो पाता परन्तु रामेश्वर, मनोरमा को भूल नहीं पाता और उसकी तस्वीर मेज़ पर रक्खे रहता है विवाह हो जाने के बाद भी उसकी पत्नी तस्वीर के रखे जाने का कोई विरोध नहीं करती। दोनों स्त्री-चरित्र यथा-स्थिति को स्वीकार कर लेते हैं और कोई विरोध नहीं करते। 'विवशता' कहानी में लीला के रूप में एक ऐसा चरित्र उभरता है जो पति के अनुचित आचरण को सहन करते हुए उसी के साथ अपना संबध बनाये रखने की प्रयास करती है। इस प्रयास में वह अदर ही अदर टूटती जाती है ओर भावनाशून्य स्थिति में पति को जेल जाने से बचाने के लिये अपने प्रेमी रमेश के रूपये तक निकाल लेती है। प्रस्तुत कहानी इस तथ्य की पुष्टि करती है कि हिन्दू नारी के जीवन की सार्थकता पति के लिये त्याग और आत्मसमर्पण में ही है इससे भिन्न उसकी स्थिति को न समाज स्वीकार कर पाता है और न ही लेखक। 'कायरता' शीर्षक कहानी में लेखक एक बूढ़े की करुण कथा के द्वारा सामाजिक विसगतियों को उभारता है। पैसे की सामर्थ्य और सर्वव्यापी सत्ता मानवीय नियति के समक्ष चुनौती बनकर खड़ी हो जाती है व्यक्ति, समाज और कानून तक उसके विरोध की शक्ति नहीं रखते और मौन रह जाते हैं। बूढ़े का भतीजा परमानन्द कानून को खरीदने की ताकत रखता है ओर बूढ़ा निर्धनता के कारण कायरता का शिकार होकर टूटता जाता है।

'काश मैं कह सकता' कहानी पूरी सच्चाई के साथ सामाजिक अन्तर्विरोधों को उभारती है। समाज, निरुपमा जैसी शरीर को बेचने वाली स्त्री की निन्दा तो करता है परन्तु उसे इस गंदगी से निकलने के प्रयास में कोई सहायता नहीं करता। यहॉ तक कि उसे ट्यूशन भी नहीं मिलती जबकि जीवनयापन के लिए और कीचड़ से निकलने के लिये ट्यूटशन निरुपमा की आवश्यकता है। ट्यूशन के

१- इन्स्टालमेंट वर्मा पृ० १२७

बदले उसे मिलती है- घृणा, उपेक्षा, और तिरस्कार। अनमेल विवाह करने वाले पुरुष जिस ईर्ष्या के शिकार होते हैं 'रेल में' कहानी इसी समस्या पर किया गया व्यंग्य है। 'कुँवर साहब का कुत्ता' शीर्षक कहानी में भी अल्सेशियन कुत्ते और मैकू धोबी के गधे के माध्यम से शक्तिशाली व्यक्ति के समक्ष गरीब और विवश व्यक्ति की निरुपायता को उभारा है अपनी सारी कड़वाहट को चुपचाप पी जाना ही गरीबों की नियति है। 'तिजारत का नया तरीका' कहानी में नवयुवकों की काहिली और आरामतलबी की प्रवृत्ति पर व्यग्य किया गया है। खुशबख्त के व्यापार करने के तरीके नायाब थे परन्तु उनका ऐशोआराम हर जगह आड़े आता है। बिना मेहनत किये धनी बनने के प्रयास में खुशबख़्तराय का चरित्र उपहासास्पद बन जाता है। 'अनशन' कहानी में लेखक भोजनभट्ट मस्तराम पाण्डेय की पेटू प्रवृत्ति को रोचक ढग से प्रस्तुत करता है। एक छोटी सी घटना के द्वारा जेल जाने वालों और अनशन करने वालों तथा पाण्डेयजी के मनोरजक व्यक्तित्व द्वारा कहानीकार हास्य की सृष्टि करने में पूर्ण सफल रहा है। साहित्य-जगत में पुरस्कार प्राप्ति किस तरह होती है 'लाला तिकड़मीलाल' कहानी उन धाधलियों पर किया गया व्यग्यात्मक प्रहार है इसके साथ ही व्यग्य है उन पूजीपतियों पर जो पैसे के बल पर सास्कृतिक खरीद फरोख्त करते हैं। पूजीवादी समाज में आर्थिक शक्तियॉ क्षेत्र में गहरे पैठ चुकी है - ठाकुर नामकमावन सिह जैसे व्यक्ति से पुरस्कार पाने के लिये कविगण उनकी खुशामद करते हैं - कोई नामकमावन बावनी सुनाता है कोई नामकमावन वन्दना, लाला तिकड़मिलाल जैसा व्यापारी भी साहित्य-सेवा द्वारा मुनाफा और यश प्राप्ति का इच्छुक है। लेखक फटीशजी के चरित्र के द्वारा तिकड़मीलाल की कलई खोलकर कला के घेरे में धन की घुसपैठ रोकने का प्रयास करता है। ' नाज़िर मुशी' में लेखक मानव-चेतना के आर्थिक-चेतना में रुपान्तरण की कहानी कहता है। अपनी जिन्दादिली और खुशमिजाजी के कारण सम्माननीय नाज़िर मुशी में समय के साथ बदलाव आता जाता है- उनकी आत्मा मर जाती है और धन का पिशाच सारी पाशविकता और कुरुपता के साथ सामने खड़ा हो जाता है - 'हुजूर क्या कहते हैं ? मैं तो आप लोगों का खिदमतगार हूँ। आप लोग बड़े आदमी हैं भला मैं आप लोगों की बराबरी कैसे कर सकता हूँ ?'' वास्तव में नाजिर मुंशी का चरित्र उन सैकड़ों लोगों का प्रतिनिधित्व करता है जिसकी आत्मा धन पिशाच के चंगुल में आकर मर चुकी है।

इच्छाओं का अत्यधिक दमन मनुष्य के स्वस्थ मानसिक विकास में बाधक बनता है साथ ही मनुष्य को कुण्ठाओं का शिकार बना देता है। 'पराजय अथवा मृत्यु' कहानी की प्रमुख चरित्र भुवनेश्वरी देवी भी भ्रामक धारणा का शिकार होकर पुरुषों के प्रति विशिष्ट मानसिकता बना लेती है और पुरुषों के प्रति अपने लेखों में जहर उगलती रहती है। रमेश को पसंद करते हुए भी वह मात्र समाज की निगाह में गिरने के भय से मृत्यु का चयन पसंद करती है। कहानीकार प्रस्तुत कथा के माध्यम से पति-पत्नी के सम्बन्धों का सही अर्थ व्यक्त करने का प्रयास करता है। 'दो बांके' कहानी में लेखक लखनऊ के तथाकथित पहलवानों शोहदों- का व्यंग्यात्मक चित्रण करते हुए नवाबी शहर की तथाकथित दादागिरि का रोचक चित्र प्रस्तुत करता है। दो बांकों के बीच हुआ नाटकीय मल्ल-युद्ध-शेखी बघारते हुए एक-दूसरे से बिना हाथापाई किये समझौते के रूप में समाप्त होता है।

तीसरे कहानी संग्रह 'राख और चिंगारी' में दस कहानियॉ संकलित है। इस सग्रह की पहली कहानी 'छह आने का टिकट' रामखेलावन नारायण प्रसाद सिह के चरित्र के द्वारा मुफ्तखोरी की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करती है। 'रहस्य और रहस्योद्घाटन' कहानी क्लब में बड़े लोगों की सैद्धान्तिक बातों पर किया गया व्यंग्य है जिसे होटल का बेयरा अपनी बात से उद्घाटित करता है। 'पटा-बनेठी' कहानी में शिक्षित और अशिक्षित स्त्रियों के असंतुलित रूप को उभारकर लेखक दो विरोधी नारी चरित्रों को

१- दो बांके वर्मा पृ० ९४

सामने लाता है। महामाया के चरित्र के रूप में आधुनिक युग की प्रगतिशील नारी का असभ्य रूप सामने आता है और रमेश की पत्नी के रूप में ग्रामीण परिवेश में पली-बढ़ी, अन्याय को चुपचाप सह जाने वाली सीधी और दबी हुई नारी सामने आती है। 'पियारी' शीर्षक कहानी में पियारी अन्तर्विरोधी चरित्र वाली नारी के रूप में उभरती है उसकी धन-लिप्सु प्रवृत्ति उसका और उसके पति की जीवन नष्ट कर देती है। 'दो रातें' कहानी में लेखक एक वेश्या के आदर्श-प्रेम-स्वप्न के टूटने पर उसकी अन्तर्व्यथा को उद्घाटित करता है। एक बात कई लोगों द्वारा कही जाने पर कितने बदले हुये रूप में सामने आती है - 'बतगड़' कहानी द्वारा लेखक बात बनाने की प्रवृत्ति को रोचक ढग से प्रस्तुत करता है। 'खिलावन का नरक' कहानी में आधुनिककाल में विकसित होने वाली महानगरीय जीवन-पद्धति की जटिलताओं के अंकन के साथ ही सुखिया और खिलावन के चरित्र के द्वारा रिश्तों में आयी तल्खी और टूटन को उभारा गया है। पति-पत्नी का रिश्ता विश्वास पर आधारित है परन्तु जब विश्वास ही टूट जाये तो जिन्दगी का तल्ख हो उठना स्वाभाविक है- यही तल्खी खिलावन का नरक है। 'आवारे' कहानी घर से भागकर बम्बई आये पांच नवयुवकों की फाकामस्ती और तगहाली का बयान करती है- 'उस एक छोटे-से कमरे में भेड़ों की तरह रहने वाले वे पांचों युवक लेटे थे और सिगरेट पी रहे थे जैसे कुछ हुआ ही नहीं। भावना और चेतना से शून्य। और धीरे-धीरे वह पाचों युवक सो गये सुबह उठकर फिर नित्य की तरह बेकारी गैर-जिम्मेदारी की जिन्दगी बिताने के लिए।'' 'राख और चिगारी' कहानी एक ऐसी नारी की व्यथा-कथा है जो अपने मरते हुए भाई को दिये गये वचन का निर्वाह करने के लिये अपना जीवन न्यौछावर करने का प्रयास करती है। वस्तुत गीता के रूप में एक ऐसा नारी-चरित्र उभरता है जो न तो अपने प्रेमी का परित्याग कर पाती है और न ही परिवार का। प्रेम-और कर्तव्य के बीच झूलती हुई गीता का जीवन राख की ढेरी के समान प्राणहीन हो जाता है। इस सग्रह की अन्तिम कहानी 'उन्माद' में दो विवाहित स्त्री-पुरुषों के इतर प्रेम का उन्मादक चित्रण किया गया है।

'सौदा हाथ से निकल गया' कहानी 'मोर्चाबन्दी' कहानी सग्रह की प्रथम कहानी है। इसमें ऐतिहासिक मेज के एक पाये के जल जाने की घटना का चित्रण रोचक ढंग से किया गया है- एक तरफ था मेज़ के पाये को ईंधन के रूप में प्रयुक्त करके बने शानदार लजीज खाने का आनद और दूसरी तरफ था मेज के सौदे से मिलने वाली पाच हजार की रकम का नुकसान। 'क्षमायाचना' कहानी आज की रोजमर्रा-जिन्दगी की तमाम मुश्किलातों से साक्षात्कार कराती है। समकालीन यथार्थ का पर्याय बन चुके मुनाफ़ाखोरी और ब्लैकमार्केटिंग और उसके जिम्मेदार अधिकारी तमाम भ्रष्टाचारों पर किस तरह परदा डाल देते हैं और मुश्किल मसलों को कैसे सुलझा लेते हैं -- वर्माजी की लेखनी पर्दे के पीछे होने वाले इन व्यापारों को पूरी सच्चाई से उजागर करती है। 'सकट' कहानी ठाकुर रत्नाकर सिंह के उस संकट का बयान करती है जो अपने पुत्र के मुण्डन-सस्कार को धूमधाम से कराने के कारण उनके सामने उत्पन्न हुआ था। उनके भाई द्वारा भेजा गया चावल, गेहूँ, घी, चीनी और रम की बोतलें उनकी झूठी-शान की रक्षा करती है। और वे सब्जी के झाबे बड़ी चतुराई से कवि अभिशप्तजी के गले मढ़कर उनकी विदाई के झंझट से मुक्ति पा लेते हैं। कवि-सम्मेलनों में अपनी कविता की धाक जमाने वाले कवि अभिशप्त द्वारा कैसरबाग की मण्डी में सब्जी बेचने की घटना का रोचक चित्र हास्य की सृष्टि करने में सफल रहा है - रत्नाकर सिंह के संकट की मुक्ति अभिशप्तजी के जीवन का अनूठा कवि-सम्मेलन बनती है। 'रगीलेलाल तीर्थयात्री' कहानी में लेखक सर्वसमर्थ लोगों पर व्यग्य करते है जो येन-केन प्रकारेण व्यवस्था का रुख अपने पक्ष में मोड़ लेने में समर्थ है। बनवारी लाल अपने पुत्रों को अपनी योग्यता के अनुसार 'फिट' करके सरकारी तत्र में अपनी घुसपैठ दूर-दूर तक कर लेता है- यही वर्तमान

१- प्रतिनिधि कहानियाँ वर्मा पृ० ११८

युग की यथार्थ स्थिति है। युग के बदलने के साथ धर्म-कर्म के मापदण्ड भी बदल गये हैं और इन्हीं मापदण्डों की ओर लेखक संकेत करता है - जेल रूपी कृष्णमदिर और रंगीलेलाल तीर्थयात्री के रूप में। 'वसीयत' कहानी वर्तमान युग के 'लोकधर्म' का यथार्थ-चित्रण है- चूड़ामणि की मृत्यु के उपरात सम्पत्ति को लेकर होने वाली उठापटक का कहानी में रोचक चित्रण किया गया है। आलोचना करने वाले पारिवारिक सदस्यों का पैसा मिलते साथ प्रशसा करने लगना इन सभी आचरणों के द्वारा लेखक नजदीकी सम्बन्धों में गहरे पैठ चुकी अर्थ की घुसपैठ को दर्शाता है। परन्तु आचार्य मिश्र जैसे विद्वान मरणासन्न चरित्र द्वारा बुरे व्यक्तियों को धन दिलाकर लेखक एक प्रश्नचिह्न छोड़ देता है सामाजिक यथार्थ पर। सामाजिक यथार्थ का चित्रण करते-करते वर्माजी 'खानदानी हरामजादे' नामक कहानी में यथार्थ-चित्रण की पराकाष्ठा पर पहुँचे दिखायी देते हैं। एक बे-पढालिखा आदमी सिर्फ 'पहुँच' के बल पर डिप्टी-कलेक्टर बन सकता है- यह कहानी वर्तमान युग की इस सच्चाई से अखबार की ताजी खबर के समान रु-ब-रु करती है। एक गुण्डा नेताओं की सेवा-टहल करके ऊचाई की एक-एक सीढ़ियां चढ़ते हुए लोकर सेल्प-गवर्नमेण्ट का अस्थायी मंत्री बन जाता है- उत्थान के रास्ते पर बढ़ते कदम जोड़-तोड़ वाली राजनीति के असली रूप का पर्दाफाश करते हैं। शेख मुस्तफा कमाल, सजीवन पाण्डे आदि चरित्र वर्त्तमान राजनीति की हकीकत को उभारने में सहायक हुये हैं। सजीवन का विरोध करने वाला मुस्तफा कमाल पाच एकड़ भूमि चार आना वर्गफुट के हिसाब से प्राप्त कर प्रसन्न हो जाता है - 'शरीफों के लिए आप फरमाइशी शरीफ हैं और हरामजादों के लिए आप खानदानी हरामजादे हैं।'[1] 'समझौता' कहानी में जयकृष्णशर्मा का चरित्र एक ओर तो सामाजिक और पारिवारिक रिश्तों में आयी गिरावट की ओर संकेत करता है और दूसरी ओर पूरी वस्तुस्थिति को उभारता है- जहाँ पर आधुनिक समाज में जीने वाला प्रत्येक व्यक्ति वह सब करने को विवश है जो वह नहीं करना चाहता। जयकृष्ण आधुनिक समाज में 'सभ्यता के नाम पर चलने वाली दुनियादारी निभाते-निभाते मुश्किल में फस जाता है और अत में हारकर अपनी पत्नी के साथ सशर्त समझौता करता है - 'प्रेजेण्ट्स' और 'कमीशन' की सस्कृति पारिवारिक रिश्तों में अविश्वास भर देती है। 'गनेसीलाल का रामराज' कहानी सामाजिक यथार्थ- तिकड़मबाजी, ब्लैक-मार्केटिग और मुनाफाखोरी- का रोचक चित्र प्रस्तुत करती है। मूल्यों और सिद्धान्तों के लिये जीने वाले व्यक्ति किस तरह कलम घिसते फटेहाल रहते हैं और गनेसीलाल जैसे तिकड़मी व्यक्ति अपनी गोट फिट करते हुए कहाँ के कहाँ पहुँच जाते हैं- वर्तमान युग का विश्लेषण लेखक इन शब्दों में करता है -- ''उतार-चढाव, उखाड़-पछाड़, आपा-धापी, छीनाझपटी- इन शब्दों में आज की दुनिया की परिभाषा की जा सकती है। कहीं भी अमन नहीं, चैन नहीं सुख-शान्ति नहीं।''[2] महात्मा गाधी के सच्चे अनुयायी और रामराज की परिकल्पना करने वाले तगहाली के युग में फल मेवे, मिठाइयों से स्वागत करने वाले-गनेसीलाल का चरित्र सामाजिक अन्तर्विरोधों को उजागर करता है। 'दिल का दौरा' कहानी गौरमोहन ज्ञानी के चरित्र के रूप में सफल, पहुँचे हुए व्यक्तियों की चारित्रिक गिरावट का चित्रण करती है- गिरावट इस हद तक कि अपने नौकर की पत्नी को भी नहीं छोड़ते। रामदीन के रूप में लेखक उन पतियों को बेनकाब करता है जो अपने साहब की हरकतों को समझते हुए भी अपनी युवा नवविवाहिता पत्नी को रात में अकेले उन्हें खुश करने के लिये भेज देते हैं- यह कहानी रिश्तों की मर्यादा का उल्लंघन करने वाले चरित्रों के माध्यम से युगीन यथार्थ को उजागर करती है। 'जबरा मारे रोने न दे' कहानी पुलिस-महकमें में होने वाली हरामजदगी का पर्दाफाश करती है- डंडे का जोर और अपराधियों से साठ-गाठ होने के कारण पत्रकार भी अपनी पूरी ताकत लगा देने के बावजूद जीत नहीं पाता। 'गुन न हिरानो, गुनगाहक हिरानो है' कहानी सदाशिवसेने और रत्नकुमार

१- मोर्चाबन्दी -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ८१।

२- वही, पृ० १००

के दृष्टांत द्वारा गुणी व्यक्तियों के पारखी जौहरियों की कमी का अहसास कराती है। 'मोर्चाबन्दी' इस संग्रह की अंतिम कहानी है। कहानीकार धर्म के नाम पर अपने अहं की तुष्टि करने वाले व्यक्तियों के चरित्र पर व्यंग्यात्मक प्रहार करता है। लालसंजीवन सिंह और चिरजीलाल बंसल के बीच कव्वाली और कीर्तन के माध्यम से अखण्ड युद्ध छिड़ जाता है - दोनों ओर की मोर्चाबंदी साम्प्रदायिक तनाव का रूप ले लेती है - कहानी का अंत अखण्ड कीर्तन और कव्वाली की रिकार्डिंग की शुरुआत से होता है। 'कादम्बिनी' पत्रिका में प्रकाशित वर्माजी की अंतिम कहानी 'त्याग ओर ग्रहण' प्रजातंत्र के नाम पर होने वाले चुनावों की असलियत सामने ला देती है- जाति, पैसा और तिकड़म के बलबूते पर एक पुरोहित का बेटा मिनिस्टर बनता है और अंत में रामखिलावन यादव द्वारा हारकर सड़क पर खड़ा हो जाता है परन्तु चुनावी हथकण्डों का इस्तेमाल करते हुए जबरदस्ती छीने जाने वाली सम्पत्ति का स्वयं दान कर देता है और अगले चुनाव में जीतने के लिए जनता-जनार्दन की सेवा करके अपनी 'फील्ड' तैयार करने में जुट जाता है।

इस प्रकार वर्माजी संबंधों में अर्थ की घुसपैठ और समाज के यथार्थ चित्रण द्वारा पूर्ण सकारात्मक या नकारात्मक चरित्रों कीरचना न करके उसे वस्तुगत परिस्थितियों की संदर्भता में निर्मित करते हैं। वे समाज का यथार्थ चित्रण तो करते हैं परन्तु उनकी दृष्टि नियतिवाद से प्रभावित होने के कारण उतनी यथार्थवादी नहीं बन पायी है। वर्माजी की कहानियों का वैविध्य चकित करता है। कुछ कहानियाँ जैसे- 'मुगलों ने सल्तनत बख़्श दी', 'दो बांके', 'सौदा हाथ से निकल गया', 'इन्स्टालमेंट' आदि में वे अपनी गहरी विनोदी प्रकृति के साथ दिखाई देते हैं। यहाँ वे बड़ी सहजता से व्यंग्य करते हुए स्थितियों या चरित्रों की विडम्बना से साक्षात्कार कराते है। मस्ती और विनोद प्रियता वर्माजी के व्यक्तित्व की धुरी है। जहाँ कहीं कथाकृतिया उनके इन गुणों के अनुरूप विकसित हुई हैं वहाँ उनमें कथ्य की गहराई और कला की धार दिखाई देती है। अन्य कहानियों में वर्माजी अपने किसी न किसी अनुभव पर टिके मूल्य की व्याख्या करते हैं।

❋

भगवतीचरण वर्मा का कथा-शिल्प

प्रत्येक लेखक अपनी लेखकीय शैली के द्वारा पहचाना जाता है- यही उसकी रचनात्मक निजता होती है जो उसकी रचना को अपना बनाती है। लेखकीय शैली उसकी अपनी अन्तर्दृष्टि, अनुभव सम्पन्नता और संवेदनशीलता के द्वारा निर्मित होती है तथा इसी के द्वारा वह अपनी रचना में कथ्य, अनुभूति या सवेदना को उपयुक्त आधार दे पाता है।

शिल्प-तकनीक का तात्पर्य रचना पद्धति है और रचना पद्धति रुढ कलासिद्धान्त या परम्परा नहीं है। रचना की पद्धति युग में आये बदलाव के साथ बदलती रहती है। रचनाकार अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के लिए जो प्रयत्न करता है उसी के द्वारा अनेक कला रुपों का जन्म होता है। शिल्प वह साधन है जिसके द्वारा रचनाकार की अनुभूतियॉ आकार प्राप्त करती है। शिल्प कथा को शरीर तो प्रदान करता है परन्तु वह प्राणवान् तत्व नहीं है। कथा को जीवनन्तता और सजीवता प्रदान करने का कार्य तो रचनाकार की सवेदना या अनुभूतियॉं करती है लेकिन शिल्प के अभाव में कथा किसी रुप या आकार में ढलने में असमर्थ है।

भगवतीचरण वर्मा की कथा-संरचना में कथात्मक या वर्णनात्मक स्फीति दिखायी देती है। उनकी शैली किस्सागो की शैली है इसलिए उसमें सघन मानसिक आवर्तो, सश्लिष्ट बिम्बों और जटिल सकेतों के स्थान पर वर्णनात्मक बहाव है। कथानक को रचने, संवारने, अनुकूल भंगिमा देने तथा उसे रोचक बनाये रखने की अपार क्षमता वर्माजी में है। इन्होंने मानस की गहराइयों में उतरकर आवर्तो को नहीं पकड़ा है अत बारीक भावसत्यों को उभारने वाले बारीक कोण नहीं उभरते, सश्लिष्ट बिम्ब विधान के स्थान पर वर्णन की प्रधानता है- आवर्त, बिम्ब-विधान और प्रतीकात्मकता के उभार के स्थान पर वर्णनात्मक विस्तार है।

भगवतीचरण वर्मा ने पहले-पहल 'चित्रलेखा' के माध्यम से पाप-पुण्य, वासना, प्रेम, व्यक्ति-समाज की स्थिर-स्थापित नैतिक धारणाओं के पुनर्निर्धारण की समस्या को लेकर प्रेमचन्द युग में ही परवर्ती युग के प्रवर्तन का पूर्वाभास दिया है। वर्माजी नियति के चमत्कारों से कथा को रोचक बनाते हैं और नियतिवाद की स्थापना उनका मुख्य उद्देश्य भी है। मनुष्य की 'सामर्थ्य' नियति की 'सीमा' में परिसीमित होने के कारण उन पर सही स्वस्थ्य दृष्टिकोण न अपनाने की आपत्ति की जा सकती है किन्तु शिल्पविधि की दृष्टि से इस प्रकार की आपत्ति उचित नहीं है। यह सही है कि उनके उपन्यासों में कथानकगत रोचकता का मुख्य कारण पूर्व योजना की कृत्रिमता भी है किन्तु उनकी पूर्वयोजना और नियतिवाद की पार्थक्य सीमा को पहचानना कठिन है। कुछ रचनाए इन्होंने दीर्घकाल खण्ड के युग-जीवन के प्रकाशन ध्येय की दृष्टि से लिखी है। 'भूले बिसरे चित्र' में एक परिवार की चार पीढ़ियों के माध्यम से पचास वर्ष से ऊपर के जीवन के सामाजिक इतिहास को कथाबद्ध किया गया है। भारत की राजनैतिक परिस्थितियो की प्रत्येक महत घटना को केन्द्र बनाकर लिखी गई कृतियों में 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते', 'सीधी-सच्ची बातें' तथा 'प्रश्न और मरीचिका' उल्लेखनीय है।

प्रेमचन्द्र की तरह किस्सागोई की परम्परा का अनुसरण करते हुए वर्माजी ने केन्द्रीय विषय के अनुरूप प्रविधियों का चुनाव किया है। इन्होंने अचेतन मन की गहराईयों में डूबकर सूक्ष्म चित्रों का अकन नहीं किया है। इनके अधिकतर उपन्यास घटनाप्रधान है और उसमें जीवन और समाज का स्थूल चित्रण किया गया है प्रयोग के तौर पर लिखे गये 'पतन नामक प्रथम औपन्यासिक कृति में

वर्माजी ने अधिक मात्रा में अतिनाटकीय घटनाओं का समावेश किया है। किंवदन्तियों पर आधारित नवाब की कथा को उपन्यासकार परिपक्व रचना कौशल से प्रस्तुत नहीं कर सका है। उपन्यास के प्रारभ उपक्रमणिका में रणवीर, प्रताप सिंह और प्रकाशचन्द्र के माध्यम से कथा के सभी प्रमुख सूत्रों का सकेत दे दिया गया है। मुख्य कथा की सहायक बनकर आयी है सरस्वती, प्रकाशचन्द्र और भवानीशकर की कथा- इस प्रेम त्रिकोण और सितमआरा की प्रणयकथा के माध्यम से नवाबी युग का रोमानी वातावरण चित्रित हुआ है। युगीन सामाजिक चित्रण मात्र यौन सम्बन्धों और छिछले प्रेम-व्यापारों तक ही सीमित है। नवाब वाजिदअली शाह के राज्य का पतन, अग्रेजो द्वारा उनके राज्य को हड़पने और सुभद्रा के हरम से गायब होने के समय नवाब की स्थिति आदि घटनाओं का वर्णन विशुद्ध कथावाचक शैली में किया गया है। उपन्यास का शीर्षक लेखक के उद्देश्य को स्पष्ट कर देता है- पिता-पुत्र का सबध मानने वालों का एक स्त्री के लिये सघर्ष करना ओर मर जाना पतन की सीमा का द्योतक हे। पहला उपन्यास होने के कारण लेखक की प्रबन्ध कौशल क्षमता और कथा सयोजन कला का विकास नहीं हो पाया है। शराब के गिलास में भविष्य दिखलाना, देवी की मूर्ति द्वारा रणवीर को सुभद्रा से प्रेम न करने की आज्ञा देना, रणवीर का आत्महत्या प्रयास और प्रकाशचन्द्र के आ जाने से उस प्रयास का निष्फल होना, रणवीर का अचानक घूमते हुए नवाब वाजिद अली शाह के हरम में प्रवेश करना और वहाँ सुभद्रा से भेंट, प्रतापसिह का आगमन और सुभद्रा का हरम से भागना, गाड़ी का टूटना, सुभद्रा की खोज में नवाब के घुड़सवारों का निकलना और नाव के पलटने से तीनों की जलसमाधि- ये सभी घटनाए अतिनाटकीय होने के कारण उपन्यास को भी नाटकीय बना देती है।

'चित्रलेखा' धारणा विशेष में समायोजित रचना है। उपन्यास का प्रारंभ 'प्रश्न' को लेकर हुआ है और उसके समाधान के लिए तीन प्रमुख चरित्रों को लेकर कथा गढ़ी गयी है। कथा में स्वाभाविकता लाने के लिए लेखक ने उपक्रमणिका और उपसहार की नियोजना की है। उपन्यास में चित्रलेखा की कथा कुछ इस ढंग से आयी है कि लेखकीय तटस्थता की सिद्धि नहीं हो पाती है। बाईस परिच्छेदों से युक्त इस कृति के आठ परिच्छेदों में चित्रलेखा, बीजगुप्त, कुमारगिरि और नये परिवेश में आये हुए विशाल देव और श्वेतांक के चरित्र, स्वभाव और सामर्थ्य का परिचय मिल जाता है। नवें परिच्छेद में आर्य मृत्युजय और उनकी कन्या यशोधरा की कथा आती है। वास्तव में यह उपन्यास बीजगुप्त, चित्रलेखा और कुमारगिरि तीन प्रमुख चरित्रों की अन्तर्यात्रा है- तीनों की चरित्राभिव्यक्ति एक-दूसरे के माध्यम से होती है। चित्रलेखा अपने प्रेमी बीजगुप्त को छोड़कर कुमारगिरि के पास आकर रहने लगती है और लेखक अपने प्रयोजन के अनुकूल उनकी कुछ-एक पशु-प्रवृत्तियों और कुछ एक मनोविकृतियों को उद्घाटित करता है। परन्तु चित्रलेखा के दौर्बल्य को जान लेने के उसका नायिकात्व समाप्त नहीं हुआ है और कुमारगिरि की चारित्रिक खलता भी मनोवैज्ञानिक आलोक में मानवीय हो गयी है। और कुमारगिरि जैसे चरित्र लेखक की घृणा के शिकार न होकर व्यग्य के पात्र बनते है।

वासनाओं का अस्वाभाविक दमन योगी को पथभ्रष्ट करता है और वासनाओं का स्वाभाविक भोग बीजगुप्त को योगी बनाता है। लेखक का उद्देश्य अपने द्वारा उठाये गये प्रश्न का समाधान करना है अत- बाह्य परिवेश और सामाजिक परिस्थितियाँ उस प्रश्न के आगे दबी हुई है। परन्तु उपन्यास के चरित्रों के माध्यम से पाटलिपुत्र का विलासी वातावरण नंदवंश की अवशिष्ट प्रवृत्ति के रूप में युगीन परिवेश को साकार करता है। उपन्यास का सम्पूर्ण वातावरण आभिजात्यपूर्ण होते हुए भी उसकी कथा का तत्र वस्तुत' लोककथाओं का सा है। यशोधरा की कथा प्रासगिक है बीजगुप्त के चरित्रोद्घाटन के लिये तो इसका महत्व है ही साथ ही कुमारगिरि की कथा भी उससे विकास पाती है

कुमारगिरि, यशोधरा का सहारा लेकर ही चित्रलेखा को छलने में सफल होता है। इस प्रकार घटनाए एक-दूसरे से जुड़कर कार्य-कारण की शृंखला बनाये हुए हैं। बीजगुप्त और चित्रलेखा का जगल में भटककर कुमारगिरि की कुटी में पहुँच जाना, कुमारगिरि का एक राज्य-सभा में आकर दार्शनिक वाद-विवाद में भाग लेना तथा एक गृहस्थ के घर पर विवाह जैसे सामाजिक-कार्य में रुचि लेना आदि घटनाए नाटकीयता पूर्ण है। योगी कुमारगिरि का राजसभा में आत्मशक्ति से सबको प्रभावित कर कल्पनाप्रसूत ईश्वर तथा सत्य का रूप दिखाना बुद्धिग्राह्य नहीं प्रतीत होता। पूरा उपन्यास तर्क-वितर्कों से भरा पड़ा है परन्तु चरित्रों के बुद्धिमत्ता पूर्ण वार्तालाप अस्वाभाविक नहीं लगते चरित्रों का अन्तर्द्वन्द्व उनके अन्तस् भावों की अभिव्यक्ति करने में सहायक हुआ है -- 'चित्रलेखा ने अपने को टटोला- उसने अपने में एक विचित्र प्रकार का परिवर्तन पाया। वह पहले चली थी कुमारगिरि से प्रेम करने उसने अब अनुभव किया कि वह कुमारगिरि से प्रेम न कर सकती थी, न उनकी पूजा कर सकती थी और न उनसे सीख सकती थी। नगर के अशातिमय जीवन से वह घबडा गई थी, निर्जन की शाति में, सात्विकता की आभा में, विश्वास के परदे पर उसने सुख देखा, जीवन के आमोद-प्रमोद से वह ऊब उठी थी, अतिसुख उसके लिए उत्पीड़न हो गया था। कुमारगिरि की कुटी के प्रशात वातावरण में चित्रलेखा ने सुख देखा, तृप्ति देखी।'' इस उपन्यास में लेखक ने पाप-पुण्य जैसे गूढ़ विषय को उठाकर उसे परिभाषित करने का प्रयास किया है। स्वयं अपने दृष्टिकोण की स्थापना करने के कारण उपन्यास का अत आरोपित और दुर्बल प्रतीत होता है। बीजगुप्त और कुमारगिरि के बीच डोलती चित्रलेखा सम्पूर्ण कथा में आकर्षण का केन्द्र है अतः उपन्यास का नामकरण उपयुक्त है।

'तीन वर्ष' नामक उपन्यास का शिल्प भी वर्णनात्मक है। इसके अन्तर्गत वर्माजी ने वर्गीय तनावों को उजागर करते हुए यौन-समस्या को आज की पूंजीवादी विषमता से जोड़ दिया है। अर्थजनित यौन-विकृतियों का विडम्बनापूर्ण चित्र खींचते हुए लेखक प्रेम, विवाह आदि का विश्लेषण करता हुआ इनसे जुड़े प्रश्नों को उठाता है। अलग-अलग वर्गों से संबधित रमेश और अजित का असतुलित मेल टिक नहीं पाता और न ही प्रभा और रमेश का। उपन्यास में सबसे अधिक खटकने वाली बात यह है कि गांव से आया हुआ देहाती युवक रमेश शहरी वातावरण और उच्चवर्गीय सभ्यता में इतनी जल्दी घुल-मिल जाता है जैसे वह सदैव से इसका आदी रहा हो। पश्चात्य सभ्यता में रगी युवती का ऐसे युवक से प्रेम करना जिसकी चोटी टोपी के अन्दर से निकल रही है- विश्वसनीय नहीं प्रतीत होता। आकस्मिक घटनाओं का सहारा लेखक यथासम्भव इसमें भी लेता है। विश्वविद्यालय में तीन वर्ष के अनुभवों पर आधारित उपन्यास का नामकरण 'तीन वर्ष' सार्थक और उपयुक्त है। उपन्यास में कई ऐसे स्थल है जिन्हें छोड़ा जा सकता था या कम किया जा सकता था जैसे- अजित के मित्रों का विस्तृत परिचय, कृष्णमूर्ति के भाषण के पश्चात् विद्यार्थियों का पारस्परिक वाद-विवाद, प्रेम और विवाह के संबध में छात्रों के वार्तालाप तथा अविनाश और अजित द्वारा अपने द्वारा किये गये शिकार के किस्से सुनाता।

'टेढ़े मेढ़े रास्ते' नामक औपन्यासिक कृति भी नाटकीय सयोगों से भरी हुई है। कथ्य, चरित्र या घटना के विकास की पद्धति यहाँ भी वर्णनात्मक है। इस वर्णन में प्रसगानुरूपता तो है ही, चरित्रों या घटनाओं की जटिलता में प्रवेश करने का सामर्थ्य भी। कहीं-कहीं वर्माजी ने साकेतिक कथन का भी कलात्मक उपयोग किया है। यद्यपि घटनाओं का नाटकीय सयोजन कहीं-कहीं अतिरेकपूर्ण भी हुआ है। फिर भी उनके कथ्य में स्वाभाविकता और प्रवाह के साथ-साथ सर्जनात्मक गहराई भी है। वस्तुत वर्माजी के लेखक की कुछ अपनी मुग्धतायें हैं। कुछ संयोगों या चरित्रों को वे अपनी कथाओं में दुहराते भी हैं। 'टेढ़े मेढ़े रास्ते' उपन्यास का आरंभ रामनाथ तिवारी को अचानक दो पत्रों के मिलने के साथ होता हैं उनके बड़े पुत्र दयानाथ का काग्रेस ज्वाइन करना और मझले पुत्र उमानाथ का दो वर्ष बाद

१- चित्रलेखा वर्मा पृ० १०२

विदेश से घर लौटना-दोनों समाचार पाठक की उत्सुकता को जागृह करते हैं। दयानाथ को घर से निष्कासित किये जाने पर पाठक आगे की घटनाओं के प्रतिसचेत हो जाता है। प्रभानाथ की कलकत्ता में अचानक वीणा से भेंट और क्रान्तिकारी दल की ओर प्रभानाथ का झुकाव, वीणा का प्रभानाथ के प्रति आकर्षण और अध्यापिका के रूप में उसका उन्नाव आना पाठक की जिज्ञासा में वृद्धि ही करते हैं। उमानाथ और महालक्ष्मी की भेंट और उनका वार्तालाप भी अपने आप में कम रोचक नहीं है इससे आधुनिक शिक्षित युवक और हिन्दू नारी की विचारधारा पर प्रकाश पड़ता है। पूरे उपन्यास में सबसे रोचक प्रसग है प्रभानाथ की गिरफ्तारी। वीणा का प्रभानाथ को अंगूठी के माध्यम से पोटेशियम-सायनाइड देना, विश्वम्भरदयाल की हत्या करना और स्वय पिस्तौल की गोली से मर जाना- यह पूरा प्रसग पाठक की जिज्ञासा को बढ़ाता है और आगे होने वाली घटना की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा रहती है। उपन्यास क सभी पात्रों का दृष्टिकोण यथार्थवादी है। उनकी अपनी रुचि-अरुचि-आकाक्षाएं भी हैं- कुछ चरित्र वर्गगत है और कुछ स्वतत्र अस्तित्व रखने वाले। इसका कथानक पूर्वनिश्चित है परन्तु शिल्पगत वैशिष्ट्य के कारण इसका आभास नहीं होने पाया है। वर्माजी की उपन्यास कला की खूबी यह है कि जब कथानक का प्रवाह थम जाता है तब वे आकस्मिक घटनाओं का नियोजन कर उसमें तीव्रता ला देते हैं। प्रभानाथ के जीवन में और प्रकारान्तर से उपन्यास के चित्रपट पर एक ऐसी घटना अकस्मात् ही घटती है जिससे उसकी जीवन दिशा निश्चित हो जाती है, यह घटना- वीणा का एकाएक उसके सम्पर्क में आ जाना- इसके द्वारा यह आभास होने लगता है कि अब प्रभानाथ क्रान्ति के रास्ते को अपनायेगा। एक-दो स्थलों पर लेखक ने अनावश्यक विस्तार किया है जैसे- दयानाथ की बैठक में काग्रेस के दस सदस्यों का विस्तृत वर्णन रोचक भले ही हो परन्तु वह है अनावश्यक ही, इलाहाबाद के साहित्यिक परिवेश का चित्रण और मिसेज सिम की बिल्ली की कहानी भी अनावश्यक है। हिल्डा और मारीसन का सिगरेट-केस वाला काण्ड हास्यास्पद और अस्वाभाविक भले ही लगे परन्तु अप्रत्यक्ष रूप से यह काण्ड समाजवाद पर तीखा व्यग्य करता है ।झगडू मिसिर भांग छानते हुए विजया भवानी की जो कथा उमानाथ को सुनाते हैं वह उनकी भग की तरंग का प्रदर्शन भले ही करे परन्तु इससे अधिक उसकी उपयोगिता समझ में नहीं आती। लेखक पात्रों के चरित्र का प्रकाशन घटनाओं के द्वारा करता है जैसे मनमोहन और झगडू मिसिर के चरित्र पर प्रकाश घटनाओं के द्वारा पड़ता है। रामनाथ के तीनों पुत्र वस्तुत. रामनाथ के चरित्र विकास में सहायक हुए हैं उनके द्वारा नामनाथ की अहम्मन्यता प्रकट होती है। एक सम्मिलित परिवार टेढ़े-मेढ़े रास्ते से गुजरता हुआ टूटकर बिखर जाता है- यही उपन्यास और उसके शीर्षक की सार्थकता है।

'आखिरी दाव' भी नाटकीय संयोगों से भरी हुई कथाकृति है। तैंतीस भागों वाले इस उपन्यास के पहले भाग में ही लेखक उपन्यास के प्रमुख चरित्र रामेश्वर के स्वभाव, उसकी अवस्था और व्यक्तित्व का परिचय देने के साथ ही उसकी जुआरी प्रवृत्ति की ओर भी संकेत कर देता है। उपन्यास के दूसरे भाग में लेखक नायिका चमेली से परिचित कराता है और उसके बाद तीसरे भाग में रामेश्वर और चमेली बम्बई नगरी में नाटकीय रूप आ टकराते हैं। उपन्यास के पाचवे और छठे भाग में चमेली का परिचय फिल्मीजगत से जुड़ी राधा और सेठ शिवकुमार से होता है और इस प्रकार लेखक चमेली के भावी जीवन की दिशा का सूत्र पकड़ता है। वस्तुत' लेखक का उद्देश्य फिल्मी जगत की मरीचिका का चित्रण करना ही है। रतनू के साथ भाग आयी चमेली और गांव से अपना सब कुछ गवाकर आये रामेश्वर के चरित्र के माध्यम से लेखक जीवन की विसंगतियों का सजीव चित्रण करता है। जीवन में सुख और शान्ति चाहने वाली चमेली को परिस्थितियां कुछ और बना देती है। शिवकुमार से चार हजार रूपये लेकर वह हमेशा के लिये उसकी बन जाती है- 'अनजाने में चमेली एक भयानक सत्य कह गई शिवकुमार इस पर केवल मुस्करा दिया शायद इससे अधिक बात करने का वह उचित अवसर न

था।''[1] पैसे के लिए एक बार समझौता कर लेने पर चमेली को हमेशा के लिये पूंजी का गुलाम बन जाना पड़ता है और वह ताउम्र इससे उबर नहीं पाती। इसी तरह रामेश्वर के चरित्र का अन्तर्विरोध पूजीवादी शक्तियों के सामने लाचार मनुष्य की कहानी कहता है- 'रामेश्वर ने उस चेक के संबंध में और कोई बात नहीं की। न उसने यह पूछा कि आया चार हजार रूपया पाने में चमेली को कोई कठिनाई तो नहीं हुई और न उसने यह पूछा कि यह चार हजार रूपया चमेली की तनख्वाह से कितना-कितना करके कटेगा। जिस ड्राइंगरूम में वह बैठा था वह काफी सजा था, कीमती सोफासेट, फर्श, पर कीमती कालीन, दरवाजों और खिड़कियों पर कीमती परदे। और रामेश्वर ने यही कब छूपा कि इस सबका दाम किसने दिया ? रामेश्वर के सामने उसका 'कल' था, उके फर्म का मुनीम था और मुनीम के हाथ में चार हजार सौंपकर जेल जाने से बचने की बात थी।'[2] कथानक प्रधान इस उपन्यास में फिल्मी-परिवेश और उसमें चलने वाले दाव-पेंच का चित्र खींचने में लेखक वर्णनात्मक शैली का सहारा लेता है चमेली और रामेश्वर के मनोविज्ञान को कुरेदकर उपन्यासकार उनमें फिल्मी-जीवन अपनाने के लिये द्वन्द्व उत्पन्न करता है। और अन्तत आर्थिक विवशताए उन्हें वह सब कुछ करने को विवश कर देती है जो नहीं होना चाहिए और रामेश्वर अपनी जिन्दगी के आखिरी दाव के रूप में चमेली को हार बैठता है। फिल्म क्षेत्र के आकर्षण के पीछे पैसा है, कुण्ठाओं से ग्रस्त समूह है और हर तरह के समझौते करने को विवश महिलायें है- वैयक्तिक जीवन-सदर्भो के साथ युगीन परिवेश भी उजागर हुआ है।

'अपने खिलौने' एक हास्य-व्यंग्य प्रधान रचना है। कथानक सक्षिप्त होने के बावजूद इसमें अनेकों पात्र और घटनाएं है। उपन्यास के पहले परिच्छेद में लेखक एक परिवार के चार प्रमुख चरित्रों के स्वभाव रग-रूप और पसंद आदि का खाका खींचता है तीसरे परिच्छेद तक सभी प्रमुख चरित्रों का परिचय मिल चुका रहता है। वास्तव में इस उपन्यास में लेखक का उद्देश्य सास्कृतिक सस्था की आड़ में होने वाली जोड़-तोड़ और तथाकथित बुद्धिजीवी समाज में गहरे पैठ चुकी विकृतियों को उभाड़ना है। सभी चरित्र छिछले प्रेम-व्यापार और यौन-विकृतियों का अवशिष्ट रूप-मात्र है। किसी भी पात्र का चरित्र उभर नहीं पाया है। सभी चरित्र टाइप्ड है, ऐसा प्रतीत होता है कि लेखक ने उच्चवर्गीय समाज कें खोखलेपन को दर्शाने के लिए यह उपन्यास लिखा है। संयोग और आकस्मिक घटनाओं की प्रचुरता उपन्यास में नाटकीयता ला देती है। पार्टी में जाने के लिए तैयार मीना का जूता अशोक द्वारा गायब किया जाना और सेण्ट की बाटल में काडलिवर आयल डाल देना, पार्टी में सभी का मीना से दूर-दूर भागना अंत में भेद खुलने पर कथा में एक नया मोड़ आ जाता है- मीना मानसिक रूप से असतुलित हो उठती है। उपन्यास में दूसरा कुतूहलपूर्ण स्थल वह है जब मीना और अन्नपूर्णा फिल्म प्रोड्यूसर और डायरेक्टर जैसे पतित व्यक्तियों के चंगुल में फस जाती है। प्रत्येक क्षण लगता है कि अब क्या होगा ? परन्तु भाग्य और सयोग का सहारा लेकर लेखक ने अपना मार्ग आसान कर लिया है सारे बिखरे हुए सूत्र जुड़ जाते हैं और कथा के सभी चरित्र अपने-अपने ढर्रे पर आ जाते हैं-- यही ससार के अपने-अपने खिलौने हैं। उपन्यास में कला-भारती नामक सास्कृतिक संस्था वह सबंध सूत्र है जिसके माध्यम से पात्र एक-दूसरे से मिलते हैं। सास्कृतिक सस्थाओं का कच्चा-चिट्ठा खोलता हुआ यह छोटा सा सुगठित उपन्यास व्यंग्य के क्षेत्र में सफल प्रयोग है।

'भूले बिसरे चित्र' का कथानक एक नहीं अनेक सूत्रों से आबद्ध है। विशाल युग के महत्वपूर्ण चित्रों को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करने में उपन्यासकार की प्रबंध क्षमता दृष्टिगत होती है। महाकाव्य

---

१ आखिरी दांव भगवतीचरण वर्मा पृ० ७५

२ वही पृ० ७७

का कलेवर समेटे इस उपन्यास में लेखक पारिवारिक और सामाजिक विघटन की पृष्ठभूमि में सासंकृतिक विघटन का उल्लेख करता है - किस प्रकार परिवार के विघटन के साथ समाज और सस्कृति उससे प्रभावित होती गयी। अनेक पात्रों के होने के कारण कथा में कई मोड़ आये हैं। और प्रत्येक बार उसका प्रारभ एक नये इतिवृत्त से हुआ है। उपन्यास का खण्ड-विभाजन बदलते हुए जीवन-मूल्यों के आधार पर हुआ है। इसमें लेखक किसी एक व्यक्ति को नायकत्व न देकर एक समूचे वश को नायकत्व देता है -- नायकविहीन उपन्यास-शिल्प सबधी नवीन प्रयोग है। उपन्यास के प्रारंभ में मैकूलाल महाजन और भूपसिह की कथा कचहरी मे इस्तगासे के द्वारा होने वाली हेरा-फेरी की ओर सकेत करती है साथ ही शिवलाल का चरित्रोद्घाटन भी। मुशी शिवलाल का चरित्र टिपिकल मुंशी के गुण-दोष से निर्मित है। रामसहाय के यहाँ ब्राह्मणों और चमारों वाला काण्ड तथा त्रिवेणी सगम पर छिनकी और मुशी शिवलाल की छुआछूत वाली घटना उस युग की बुनियादी बुराइयों की ओर इंगित करती है। ज्वाला के चारित्रिक पतन को लेखक ने होली के माहौल की अराजकता से जोड़ते हुए व्यंजना के आवरण के माध्यम से व्यक्त किया है-- 'गावो की पगडण्डियाँ होली मनाने वालों की भीड़ से भरी थीं, और यह भीड फाग गा रही थी, गालियाँ बक रही थी। गंदे-गदे स्वांग निकल रहे थे, चारों ओर एक भयानक नैतिक अराजकता दिख रही थी उन्हें, मानों दुनिया का असंयम बांध तोड़कर उमड़ पड़ा हो।'[1] दूसरे खण्ड का आरभ शिवलाल के कल्पवास से होता है और उनकी मड़ैया में छिनकी और राधेलाल की पत्नी का टकराव भावी पारिवारिक विघटन का हल्का सा सकेत दे देता है। इस पूरे खण्ड में स्थान-स्थान पर मुंशी राधेलाल के परिवार द्वारा ज्वाला के आर्थिक शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने वाली छिनकी ही है। इस उपन्यास के तीसरे खण्ड का प्रारंभ, अपरिचित चरित्रों एवं नितांत नये इतिवृत्त से ही नहीं, नये युग की पृष्ठभूमि से होता है। नौ वर्ष का बालक गंगा कैसे और किन परिस्थितियों से गुजकर डिप्टी कलेक्टर बनता है- इस अवधि को लेखक एक ही छलाग में पारकर गया है। इस पूरे खण्ड में संतों और रिपुदमनसिह के सम्पर्क सूत्र द्वारा लेखक एक अलग दुनिया और अलग किस्म की संस्कृति से परिचित कराता है। इस प्रकार तीसरा खण्ड तथाकथित उच्चवर्गीय लोगों की नैतिक गिरावट की कहानी कहता है। चौथे खण्ड का प्रारभ ज्वाला प्रसाद के ममेरे भाई ज्ञानप्रकाश की भारत-वापसी से होता है जो बैरिस्टर बनने के लिये इग्लैण्ड गया था। इस खण्ड में कई नये चरित्र उभरते हैं- मलका उर्फ माया शर्मा, अलीरजा, सत्यव्रत शर्मा आदि। गगा प्रसाद और ज्ञानप्रकाश तत्कालीन सामाजिक स्थिति और राजनैतिक स्थिति से परिचित कराने वाले माध्यम है। पाचवे और अतिम खण्ड में विद्या और नवल के चरित्र द्वारा लेखक नये युग की पृष्ठभूमि बांधता है और उपन्यास का अन्त भी नये युग की शुरुआत से होता है।

इस उपन्यास में सामाजिक जीवन का वर्गीय सत्य प्रस्तुत किया गया है परन्तु पात्रों के मानसिक द्वन्द्व कम दिखायी देते है। लेखक चरित्रों को परिस्थितियों की सापेक्षता में निर्मित करता है। प्रभुदयाल, लक्ष्मीचद और सतों का चरित्र पूजीवादी समाज की देन है तो वेश्या मलका का श्रीमती माया शर्मा बन जाना सामाजिक मानवता की देन है। ज्ञानप्रकाश, विद्या और नवल के चरित्र के रूप में वर्माजी आज के युग की बुनियादी शक्तियों से परिचित कराते है। पूजीवादी शक्तियों की शोषक, स्वार्थी और विसगतिमय प्रवृत्तियों पर चोट करते हुए पुरानी जीवन-दृष्टियों, सामाजिक-सांस्कृतिक परम्पराओं और मान्यताओं को ध्वंस करके सामाजिक क्रान्ति की ओर झुकाव इस उपन्यास का उपसहार है- 'नवल ने अपने अंदर की एक नयी उमंग को धीरे-धीरे जन्म लेते हुए अनुभव किया। x x x उस समय उसकी दुनिया बदल गयी थी। वह भूल गया था ज्वाला प्रसाद को, रुक्मिणी को, अपने छोटे भाई को, बहिन को। वह भूल गया था कामतानाथ को, उषा को। यही नहीं, वह उस समय ज्ञानप्रकाश

1- भूले-बिसरे चित्र वर्मा पृ० ६८

को भी भूल गया था। उसके सामने था एक विशाल जन-समूह, जिसका समर्थन उसे प्राप्त था जिसकी सद्भावना उसके साथ थी, जिसका विश्वास वह वहन कर रहा था।"[1] इस प्रकार लेखक सामाजिक-परिवर्तन के द्वारा आदर्शवादी समाधान प्रस्तुत करता दिखायी पड़ता है। निकट अतीत के चित्रों का अलबम होने के कारण उपन्यास का नामकरण सार्थक सिद्ध होता है- मानवीय संवेदनाओं के विकास और ह्रास का इतिहास। 'वह फिर नहीं आई' उपन्यास का प्रमुख चरित्र ज्ञानचन्द आत्मकथात्मक शैली में अपने जीवन के एक महत्वपूर्ण अनुभव को प्रस्तुत करता है। तीसरे परिच्छेद से लेखकीय विश्लेषण समाप्त होता है- पात्रों के संवाद प्रारंभ हो जाते हैं और इसके बाद कथा अपने क्रम में चलने लगती है। वर्माजी का यह उपन्यास भी कथानक प्रधान है। इसमें भाग्य और आकस्मिक घटनाओं का सहारा लिया गया है। वास्तव में लेखक का उद्देश्य पूंजीवाद समाज में जीवन की कुरुपताओं को उजागर करना रहा है। रानी श्यामला और जीवनराम के चरित्र शरणार्थियों की करुण-व्यथा को उभारते हैं। प्रत्येक परिच्छेद का प्रारंभ कथावाचक (मैं) भूमिका बनाकर करता है उसमें लेखकीय दृष्टिकोण की प्रधानता है। छठें परिच्छेद में लेखक ने अन्तर्द्वन्द्व और दार्शनिकता से भरी सामाजिकता की जो व्याख्या की है वह कथा की एकान्विति में बाधक है। अन्य उपन्यासों की भांति इस उपन्यास में भी नाटकीय तत्वों का समावेश किया गया है- एक-एक घटना चलचित्र के दृश्य की भाँति उभरकर सामने आ जाती है। सवाद और कायिक अनुभाव चरित्राभिव्यक्ति में सहायक हुये हैं। रानी श्यामला के फिर न लौटने की बात को सार्थक करते हुये उपन्यास का नामकरण 'वह फिर नहीं आई' प्रसंग गर्भित है। चौदहवें परिच्छेद को लेखक ने उपसहार के रूप में लिखा है जिससे उसका उद्देश्य और दर्शन स्पष्ट हो जाता है -- 'लेकिन यह कल कभी नहीं आता। आदमी पैदा होता है, आदमी मरता है। जिन्दगी बनती है, जिन्दगी बिगड़ती है। हृदय बंधता है। हृदय का बधन टूटता है और यह सब 'आज' में होता है। 'कल' एक आवरण है, जिसके उस पार कोई नहीं देख सकता, जिसका संदेश हमारे कान नहीं सुन सकते। उस आवरण के पीछे क्या, इसकी हम अपनी-अपनी भावना के अनुरूप कल्पना ही कर सकते हैं।'[2]

'सामर्थ्य और सीमा' में वर्माजी मानव-नियति की विवशता को अपने उद्देश्य के अनुकूल एक सुनियोजित कथा का रूप देते हैं। उपन्यास में कथा-तत्व नहीं के बराबर है, प्रत्येक पृष्ठ तर्क-वितर्कों से भरा हुआ है। स्थित्यकन, दृश्य-विधान और प्रकृति-चित्रण सभी में लेखक का कवि-हृदय बोलता है परन्तु वह रोचकता और सरसता नहीं है जो इनके अन्य उपन्यासों में पायी जाती है। उपन्यास के प्रारभ में भौगोलिक परिवेश का चित्रण किया गया है। स्टेशन पर कई बड़े व्यक्तियों के आगमन के साथ ही कथा गति पकड़ती है। कुछ चरित्रों के माध्यम से लेखक राजनैतिक गतिविधियों पर भी प्रकाश डालता है। अपने उद्देश्य - नियतिवाद की स्थापना- में वर्माजी इतने अधिक तल्लीन हो गये हैं कि उन्हें उपन्यास के कला-पक्ष को सवारने का मौका ही नहीं मिला है और कदाचित् इसी कारण उन्हें चरित्रों के सूक्ष्म विश्लेषण की आवश्यकता नहीं महसूस हुई। 'प्रत्येक व्यक्ति समर्थ है परन्तु एक सीमा के अन्दर' -- उपन्यास के प्रारभ में ही लेखक इस मत की स्थापना करता है और अंत तक इसी स्थापना का प्रयास करता दिखायी देता है। नाहरसिंह उपन्यास का प्रमुख चिरत्र है और वह आवेश में आकर व्यवस्था, शासन और वर्ग के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करता है। उसकी मानसिक छटपटाहट और व्यथा प्रलाप का रूप धारण कर लेती है। इस प्रकार इस उपन्यास में रोचकता कम विचार की सामग्री अधिक है। कुल मिलाकर 'सामर्थ्य और सीमा' जनसाधारण के स्तर का न होकर उससे ऊपर की चीज है।

१- भूले-बिसरे चित्र भगवतीचरण वर्मा पृ० ४३८

२- वह फिर नहीं आई वर्मा पृ० ८४

'थके पाव' नामक औपन्यासिक कृति मध्यवर्गीय संस्कारों और तनावों से रची-बसी है। उपन्यास का आरभ 'लड़खड़ाते हुए पैर' से होता है जो चलना नहीं चाहते परन्तु चलने के लिए विवश हैं। पहले भाग में एक पात्र के मानसिक द्वन्द्व के द्वारा लेखक कथा की भूमिका बनाता है दूसरे भाग में वह उस पात्र का नाम रखता है - केशव। आत्मकथात्मक शैली में लिखे गये इस उपन्यास में वर्माजी केशव के द्वारा उसके विगत जीवन पर प्रकाश डालते हैं। पात्रों के भाव-जगत को उभारने के प्रयास में लेखक फ्लैश-बैक पद्धति का प्रयोग करता है। उपन्यास के सभी चरित्र प्रतीकात्मक है - सभी टूटे हुये मध्यवर्गीय व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसी कारण किसी भी पात्र का चरित्र उभर नहीं पाया है।

टूटते हुए मध्यवर्गीय व्यक्ति के थके पाव का चित्रण करना ही उपन्यासकार का उद्देश्य है। उपन्यास में जिन सत्यों को लिया गया है वे फार्मूले नहीं बल्कि अनुभव मालूम होते हैं। यह मध्यवर्गीय व्यक्ति के अनुभवों का इतिहास है- 'होगा क्या ? कल से फिर दफ्तरों के चक्कर लगाना शुरु करूँगा। और आपको भी कुछ दौड़-धूप करनी पड़ेगी मेरे लिए। आप तो जानते ही है कि आजकल पढ़े-लिखे लोगों की बेकारी बुरी तरह बढ़ रही है। हर जगह छटनी हो रही है, तनख्वाहों में कमी हो रही है और हर साल हजारों ग्रेजुएट गुलामी करने के लिए तैयार होकर विश्वविद्यालयों से निकल रहे हैं।" सम्पूर्ण उपन्यास यथार्थवादी होते हुए भी उसका अंत आदर्शोन्मुख हो गया है। रिश्वत का एक हजार लेने पर केशव के अन्तर्द्वन्द्व को उभारते हुए-- नौकरी से त्यागपत्र और अनाथालय में रूपया जमा करने के द्वारा-- लेखक समस्याओं का आदर्शवादी समाधान प्रस्तुत करता है। बारह भागों वाले इस उपन्यास के प्रत्येक भाग को लेखक, केशव के विगत जीवन से जोड़ते हुए तारतम्य बनाये रखता है।

'रेखा' यौन-समस्या पर आधारित मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। अल्पकालिक अविध वाले इस उपन्यास में घटनाएं इतनी तेजी से घटती है कि रेखा के जीवन में आमूल परिवर्तन हो जाता है और वह विक्षिप्तावस्था तक पहुच जाती है। उसका पागलपन अकारण और आकस्मिक नहीं है। रेखा 'आत्मा' और 'शरीर' के द्वन्द्व में भटकती हुई पूर्णरुपेण मानसिक सतुलन खो बैठती है। रेखा और प्रभाशंकर के चरित्र के विकास के लिये तथा उनकी चारित्रिक दुर्बलताओं को प्रकाशित करने के लिये लेखक देवकी, दाताराम और रामशकर की प्रासंगिक कथा की अवतारणा करता है। वस्तुत 'रेखा' चित्रात्मक पद्धति का उपन्यास है और इसमें सिनेमा के ढंग की अतिनाटकीयता है। आरंभिक दृश्य में रेखा का शृंगार टेबिल से दौड़ते हुए अपने क्लासरूम में प्रवेश करना तथा दरवाजे से हाजिरी बोलना, शीरी का पहाड़ी सड़क से नीचे कूदकर आत्महत्या का प्रयास तथा रेखा का अचानक वहाँ पहुँचकर उसे बचा लेना होटलों और पहाड़ी दृश्यों की अधिकाधिक योजना, अंतिम दृश्य में तेजगति से गाड़ी चलाते हुए रेखा के हवाई-अड्डे पर पहुचते-पहुंचते योगेन्द्रनाथ के हवाई-जहाज का उड़ जाना और रेखा के घर लौटने पर प्रभाशकर की मृत्यु - ये सारे दृश्य फिल्म के लिये अधिक उपयुक्त प्रतीत होते हैं। रेखा और प्रभाशकर के अतिरिक्त उपन्यास में कई पात्र हैं। कथा का प्रवाह अवरुद्ध होने पर एक नया पुरुष पात्र रेखा के जीवन में आकर कथा में गति उत्पन्न करता है। सवाद तर्कयुक्त और बड़े-बड़े हैं अत वे लेखकीय विश्लेषण से प्रतीत होते हैं। इस विश्लेषण में वर्माजी सामाजिक मनोविज्ञान को वर्णित करते हैं -- 'समाज बदलता है, सामाजिक मान्यताए बदलती है और इसलिए मनुष्य तेजी के साथ बदलती हुई सामाजिक मान्यताओं से सामजस्य बनाये रखने में अपने को असमर्थ पाता है, लेकिन यह मान्यताओं से सामंजस्य बनाये रखना नार्मेल्टी नहीं है -- नार्मेल्टी है भावना का बौद्धिक सतुलन। भावना निरपेक्ष और अपरिवर्तनशील सज्ञा है -- वह नहीं बदलती। जहाँ तक समाज और सामाजिक मान्यताओं के

१- रेखा वर्मा पृ० १०२

बदलने का प्रश्न है, वह मानवीय भावना पर बौद्धिक विकास की गति का परिणाम है, लेकिन मानव की आधारभूत भावनाओं में कोई परिवर्तन नहीं होता।"[1] इस उपन्यास में रेखा के चरित्र के सभी पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है अतः उपन्यास का नामकरण प्रधान पात्राधारित होने के कारण उपयुक्त है।

विशाल परिवेश को समेटे हुए 'सीधी सच्ची बातें' उपन्यास युगीन चित्रण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पूरा उपन्यास दो खण्डों में विभाजित है। पहले खण्ड में जगतप्रकाश के प्रारंभिक जीवन का वर्णन है और दूसरे खण्ड में उसके जेल जाने से लेकर मृत्युपर्यन्त तक का। जगत प्रकाश के हास्टल के जीवन को लेकर शुरु होने वाला यह उपन्यास उसकी मृत्यु के साथ ही समाप्त हो जाता है। उपन्यास का कथानक जगतप्रकाश के इर्द-गिर्द घूमता है। नये-नये चरित्र उससे जुड़ते जाते हैं और जिस-जिस स्थान पर जगत प्रकाश जाता है वहाँ-वहाँ कथा घूमती है। कथाकार राजनैतिक घटनाओं के साथ ही वर्गीय सामाजिक भेद को भी उभारता है। एक मध्यवर्गीय व्यक्ति सीधी-सच्ची बातें कहता हुआ जिस टूटन का शिकार होता है - यह उपन्यास उस पीड़ा की मार्मिक अभिव्यक्ति करता है। उपन्यास के प्रेम-प्रसंग भी घुटन और कुण्ठा को उभारने में सहायक ही हुए हैं। इसका कथानक सुनियोजित है लेखक जो कुछ कहता है नायक के मनोविज्ञान को कुरेदने के लिये और वैसा ही वातावरण और परिस्थिति निर्मित होती है। वास्तव में जगतप्रकाश का टूटकर मर जाना प्रतीक है -- भारत के सैकड़ों लोगों की आकाक्षाओं और विश्वास के टूटकर बिखर जाने का। यद्यपि उपन्यास अन्य पुरुष शैली में लिखा गया है और वर्माजी एक इतिहास की भाति सम्पूर्ण कथा का वर्णन करते हैं। फिर भी उपन्यास में जगतप्रकाश को जिस स्थान पर रखा गया है उससे उपन्यास जगतप्रकाश की आत्मकथा जैसा प्रतीत होता है पूरे उपन्यास में चरित्र विश्लेषण को पर्याप्त स्थान मिला है। इसमें मध्यवर्गीय परिवेश की विसगतियों को उजागर करने के साथ ही लेखक भारत की महत्वपूर्ण राजनैतिक घटनाओं पर भी प्रकाश डालता है।

'सबहिं नचावत राम गोंसाई' वर्माजी का सर्वाधिक सुनियोजित उपन्यास है। प्रतीकात्मक शैली में लिखा गया यह व्यंग्य प्रधान उपन्यास चार भागों में विभक्त है- बुद्धि, भाग्य, भावना और उठापटक। उपन्यास के तीन भागों में एक बनिया परिवार, क्षत्रिय परिवार और ब्राह्मण परिवार की तीन पीढ़ियों की कथा है। तीनों परिवारों के वशानुगत सस्कारों को प्रदर्शित करते हुए लेखक ने तद्युगीन भारत की आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक झाकी प्रस्तुत की है। यह झांकी युगीन यथार्थ का सही चित्र प्रस्तुत करती है। उपन्यास के पूर्वार्द्ध में तीनों परिवारों का वर्णन लेखन ४५-४५ पृष्ठों में करता है। उत्तरार्द्ध में कुछ पृष्ठ संख्या १४५ है जबकि पहले तीन भागों की कुल पृष्ठ सख्या १३५ है। केवल पृष्ठ-योजना ही नहीं वरन् पूर्वार्द्ध के प्रत्येक भाग की काल-सीमा भी एक है और अत बीसवीं शताब्दी के छठे दशक के अंतिम वर्षों से होता है। उत्तरार्द्ध में प्रत्येक परिवार की अंतिम पीढ़ी के व्यक्तियों को लेकर कथा का ताना-बाना बुना गया है। तीनों परिवारों के वशज अपने-अपने रास्ते में चलते हुए चौथे भाग 'उठापटक' में आ टकराते हैं। तीव्र गति से घटित होने वाली घटनाओं के माध्यम से कथा तीव्र गति से चलती रहती है और लेखक वर्तमान समाज की विसगतियों को निर्ममता से उघाड़ता चलता है --

'और उस दिन स्वतंत्रता के प्रथम दिवस- दिवस वाले उत्सव को राधेश्याम ने जिस शान के साथ मनाया, वह कानपुर नगर के इतिहास में अद्वितीय समारोह साबित हुआ। उसकी मिलों में पड़ा हुआ सड़ा आटा और गोदामों में भरा हुआ सड़ा तेल-- इन सबका ठिकाना लग गया। दो दिन तक कगालों को भोजन दिया गया, और सारे नगर में राधेश्याम की जय-जयकार होती रही। कगालों के

१- रेखा वर्मा पृ० १०३

इस भोज के बाद कानपुर नगर में भिखमंगों और कंगालों की सख्या आधी रह गई, आधे लोग राधेश्याम के सड़े हुए भोजन के कारण अपने अति सड़े हुए जीवन से मुक्ति पा गए। भिखमंगों की इस सामूहिक मृत्यु से जनता में खलबली मची, और इससे राधेश्याम को चिंता हुई। लेकिन मामला भिखमंगों का था, वह दबा दिया गया। किसी को यह पता न लग सका कि कितनी मौतें हुई और किस कारण से हुई। इसमें राधेश्याम को करीब दस हजार रूपया खर्च करना पड़ा।"[1]

बुद्धि, भाग्य और भावना के प्रतीक तीनों चरित्र सामाजिक विसगतियों का विडम्बनापूर्ण चित्र अंकित करते हैं। कथा के अंत में लेखक ने उपसंहार के रूप में जो कुछ लिखा है वह कथाकार के जीवनानुभवों का निचोड़ है- 'कहानी पूरी हो गई, लेकिन खत्म नहीं हुई है। अनादिकाल से यह कहानी किसी-न-किसी रूप में चलती आई है अनंतकाल तक किसी-न-किसी रूप में चलती रहेगी।'[2] इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में वर्माजी राजनीति, समाज, प्रशासन आदि सभी क्षेत्रों में घुसी हुई विकृतियों, बदलते हुए परिवेश और विघटित होते हुए मूल्यों और सामाजिक यथार्थ के कुछ जाने पहचाने वर्गीकृत पहलुओं को लेकर एक सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करते हैं।

'प्रश्न और मरीचिका' राजनैतिक उपन्यासों की श्रृंखला में वर्माजी का चौथा एवं अन्तिम उपन्यास है। उपन्यास का कथानक कालावधिपरक है इसमें भारत की आजादी से लेकर भारत-चीन युद्ध के समय तक की महत्वपूर्ण घटनाओं का ब्यौरेवार वर्णन है। उदयराज की आत्मकथा के रूप में लिखा गया यह उपन्यास तंत्र और कौशल की दृष्टि से अभूतपूर्व है। आत्मकथात्मक शैली में एक लम्बे उपन्यास की रचना अपने आपमें कौशल की दृष्टि से महत्वपूर्ण उपलब्धि है। चार भागों में विभक्त उपन्यास के विभाजन का मुख्य आधार उदयराज के जीवन में आने वाले महत्वपूर्ण मोड़ है। प्रथम भाग का उदयराज एक उठता हुआ नवयुवक है, उसमें जीवन के हर क्षेत्र में कुछ कर दिखाने की लालसा है। भावना का उद्दाम वेग उसकी अपरिपक्वता का अहसास कराता है। द्वितीय भाग में उदयराज यथार्थ की भूमि पर स्थापित होता दिखाई देता है। भावनात्मक भटकन के बावजूद विवाह के बंधन में बंधकर उसमें कुछ स्थायित्व आ जाता है। तृतीय भाग में उदयराज एक पारिवारिक व्यक्ति के रूप में-- कुछ अधिक परिपक्व रूप में सामने आता है। और अंतिम भाग में वह अत्यन्त संयमी एवं चिंतनशील सद्गृहस्थ के रूप में। कथा का प्रमुख चरित्र उदयराज अपने अन्तर्जगत का ही साक्षात्कार नहीं कराता अपितु विभिन्न सामाजिक एव राजनैतिक मान्यताओं से अपने मोहभंग की कथा कहता हुआ संशयालुता का शिकार होता जाता है। दूसरी ओर वह विभिन्न राजनैतिक और सामाजिक समूहों, परिवारों और व्यक्तियों के संदर्भ में देश की विषम स्थिति का साक्षात्कार कराता चलता है -- 'मैं इतिहास नहीं लिख रहा हूँ, मैं अपनी कहानी कह रहा हूँ। लेकिन करूँ क्या ? मेरी इस कहानी में इतिहास के सभी तत्व मौजूद हैं। जीवन के अनगिनती उतार-चढ़ाव, मनुष्य की आशा, कुण्ठा और निराशा, निर्माण और विनाश। सभी कुछ तो है मेरी इस कहानी में। लेकिन युग का लेखा-जोखा नहीं कर रहा, क्या उचित है और क्या अनुचित है ? इसका मूल्यांकन करने का मैं अपने को अधिकारी नहीं समझता और सबसे बड़ी बात तो यह है कि मैं तटस्थ भाव से चीजों को परख भी तो नहीं रहा हूँ क्योंकि मैं स्वयं ही इस कहानी का एक अनिवार्य भाग हूँ।'[3] व्यापक फलक पर चित्रित की जाने वाली इस गाथा में कथाकार अपने किसी भी विचार को आरोपित नहीं करता। स्थितियों का विश्लेषण करते-करते वह अचानक अपनी दिशा मोड़ देता है और उपन्यास का अंत एक प्रश्नचिह्न पर होता है

१- सबहिं नचावत राम गोंसाई -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ४०।

२- वही पृ० २८८।

३- प्रश्न और मरीचिका भगवतीचरण वर्मा पृ० [illegible]

जिसकी मरीचिका का अंत नहीं हो सकता। उस काल की घटनाओं का कालबद्ध, इतिहासपरक और समस्यापरक जटिलताओं का वर्णन होने के बावजूद उपन्यास की रोचकता में कमी नहीं आयी है। उपन्यास का प्रारंभ प्रश्न ? से हुआ है और अंत तक प्रश्न ही बना रहता है -'इस यात्रा की परिणति क्या है ? मैं नहीं जानता प्रश्न ही प्रश्न है मेरे सामने और उत्तर में एक भटकाव, सीमाहीन और अनत।'[१] पात्रों के संवाद और लेखक का निरपेक्ष विश्लेषण चरित्रों के साथ ही राजनैतिक परिवेश को उकेरने में सहायक हुआ है।

'युवराज चूण्डा' उपन्यास का नामकरण इसके प्रमुख चरित्र के आधार पर किया गया है। किन्तु लेखक का उद्देश्य चरित्र प्रधान उपन्यास लिखना नहीं प्रतीत होता। वास्तव मे कथाकार मध्ययुगीन इतिहास का ऐसा जीवन्त चित्र प्रस्तुत करना चाहता है जिसमें घटनाएं हैं, स्थितियां है, चरित्र है और है ऐसा जीवन जिसका खाका इतिहास से लिया गया है। जीवन का यह चित्र उपन्यासकार केवल तथ्यों के आधार पर नहीं, सभावनाओं के सहारे निर्मित करता है। उपन्यास का घटनाकाल मध्ययुगीन है। इसमें लेखक जातीय परम्परा की बुनियादी विकृतियों को उद्घाटित करता परिलक्षित होता है। राणा के दरबार का वातावरण तद्युगीन विलासिता का प्रवृत्ति की और सकेत करता है -- 'कुछ देर पहले ही केसरिया भाग का दौर चल चुका था- नशा गमक रहा था। बंसत ऋतु की मस्ती के साथ भांग के नशे की मस्ती उस समय उस दरबार में उपस्थित लोगों की आंखों में झलक रही थी।'[२] उपन्यास के पहले परिच्छेद में लेखक ने भावी आश्चर्यजनक घटनाओं का संकेत दे दिया है। भौगोलिक परिवेश की जानकारी देने और युद्ध के वर्णन से उपन्यास में सजीवता आयी है। उपसहार में लेखक निष्कर्ष देकर अपने उद्देश्य को स्पष्ट करता है - 'इतिहास ने चूण्डा की कहानी में चूण्डा का हठ तो देखा, लेकिन यह हठ किन उदात्त भावनाओं का प्रतीक था, इस पर उसे ध्यान देने का मौका ही नहीं मिला।

चूण्डा की कहानी आदर्शवाद की कहानी है, नितात कुरुप यथार्थ के परिवेश में।'[३] अंचली और गुणवती जैसे नारी चरित्र युवराज चूण्डा के चरित्र को प्रकाश में लाते हैं। और राव रणमल का चरित्र तो मध्ययुगीन सामंती विकृतियों को ही उजागर करता है।

'धुप्पल' नामक आत्मकथात्मक उपन्यास में वर्माजी ने अपने जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन किया है। उनकी इस कृति में उनके जीवन में आने-वाले अनेकों व्यक्तियों के चरित्र सामने आते है। संवेदनशील मनुष्य और परिवेश के बीच घात-प्रतिघात के सैकड़ों चित्र उभरते हैं। अपने जीवनानुभवों को यथार्थत. कागज पर उतार लाना एक महत्वपूर्ण सृजनात्मक उपलब्धि ही माना जायेगा। अपनी नियतिवादी दृष्टि और साफगोई की प्रवृत्ति के कारण जीवन में मिली उपलब्धियों को संयोग मानने वाले वर्माजी के इस उपन्यास का नामकरण प्रसंगगर्भित है। परन्तु धुप्पल मात्र 'संयोग' ही नहीं, लेखकीय सघर्ष का सार्थक दस्तावेज भी है।

'चाणक्य' उपन्यास में वर्माजी वर्णनात्मक शैली के द्वारा पतनोन्मुख मगध साम्राज्य की उन विकृतियों को उद्घाटित करते हैं जो काल-व्यवधान से परे आज भी प्रासगिक है। लेखक का उद्देश्य चाणक्य के व्यक्तित्व का समग्रता के साथ चित्रण करना रहा है परन्तु उनके प्रारभिक जीवन के बारे में उपन्यासकार कुछ नहीं कहता। उपन्यास के आंरभ और अत तक चाणक्य विद्यमान है। चन्द्रगुप्त और नंदवंश का वर्णन तो प्रसगवश हुआ। परन्तु उस ऐतिहासिक पुरुष के अवसान के बारे में

१- प्रश्न और मरीचिका -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ४४२।

२- युवराज चूण्डा -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ३।

३- वही पृ० १४६

उपन्यासकार मुखर नहीं हुआ है। पूरे उपन्यास में संवादों का प्रयोग कम ही हुआ है और चरित्रों का अन्तर्द्वन्द, भी नहीं उभरा है। लेखक तल्लीन होकर नदवंश के पतन और चाणक्य के महाभियान ही कथा सुनाता है।

भगवतीचरण वर्मा एक उपन्यासकार होने के साथ कहानीकार भी है और कहानीकार थोड़े शब्दों में अधिक बात कहने की क्षमता रखता है। प्रेमचन्द के अनुसार- उपन्यास घटनाओं, पात्रों और चरित्रों का समूह है। आख्यायिका केवल एक घटना है- अन्य सब बातें उसी घटना के अन्तर्गत होती है।[1] संक्षिप्तता कहानी का वैशिष्ट्य है अतएव कहानीकार की मूल संवेदना उपन्यासकार से भिन्न होकर एक पृथक् रूप विधान की सर्जना करती है- वह उत्सुकता को बनाये रखते हुए एक निश्चित लक्ष्य को लेकर चलता है। वस्तुतः वर्माजी की कहानियों में उनका किस्सागो रूप स्पष्ट रूप से झलका है- 'प्रेजेण्ट्स' कहानी में लेखक ने आदि मध्य और अंतिम भाग का कलात्मक निर्वाह किया है- परमेश्वरी प्रजेण्ट्स की बात छिड़ने पर अपने जीवन के एक अनुभव को आत्मकथात्मक शैली (मैं) में सुनाता है। कहानी के प्रारंभ में शशिबाला से परिचय होता है और रुमाल गिराना आदि कार्य-व्यापार उनके चरित्र का उद्‌घाटन कर देते हैं, कहानी के दूसरे भाग में कमरे की प्रत्येक वस्तु पर लगी नाम की चिटि उत्सुकता को बढाती है परन्तु कहानी का अंतिम भाग शशिबाला को प्रेजेण्ट में मिली वस्तुओं के बेचने के 'कान्ट्रेक्ट साइन' द्वारा समाप्त होता है- इसके बाद क्या हुआ ? की उत्सुकता बनी ही रहती है। लेखक (मैं) की कहानी सुनाये जाते समय उपस्थिति कथा को यथार्थता और सजीवता प्रदान करती है और परमेश्वरी (मैं) का निरपेक्ष आत्मविश्लेषण उसके अपने चरित्र का उद्‌घाटन करता है साथ ही कथा को गति प्रदान करता है। 'अर्थ पिशाच' कहानी में नैरेटर (मैं) वृद्ध धनिक की मौत और धन के प्रति उसके लोभ का वर्णन करता है। इस कहानी में लेखकीय दृष्टिकोण पूर्वाग्रहयुक्त प्रतीत होता है। धनिक-वृद्ध द्वारा जीवन के अंतिम क्षणों में की गयी स्वीकारोक्ति उसके प्रति पाठक की सहानुभूति जगाती है। 'मैं वास्तव में शैतान हूँ, डाक्टर साहब, बहुत बड़ा शैतान। लोग मुझे करोड़पति कहते हैं और मैं हूँ भी। धन-वैभव और शक्ति मेरे पैरों पर लोटते रहे हैं, मनुष्यता को मैंने ठुकराया है। डाक्टर साहब- मुझे बचाइये। मैं आपको सोने से पाट दूँगा। अपनी सम्पत्ति का उपभोग करने के लिए मुझे जीवन दीजिए।'[2] कहानी का शीर्षक 'अर्थ-पिशाच' प्रतीकात्मक है। 'वरना हम भी आदमी थे काम के' कहानी में मियां राहत का चित्रण बहुत रोचक ढग से किया गया है- लेखक पात्र के व्यक्तित्व का खाका कुछ इस ढग सा खींचता है कि उसका चित्र-स आखों के सामने खिंच जाता है -'यदि आप चालीस-पचास साल के एक ऐसे आदमी को मेरे बंगले के बरामदे में देखें, जो लम्बा-सा और किसी हद तक मोटा-सा कहा सके, जिसका चेहरा गोल, भरा हुआ और उस पर चेचक के दाग, मूंछ नदारद, लेकिन दाढ़ी तोंद तक पहुँचती हुई, सिर पर पट्टे और बाल बीच से खिचे हुए, आंखे बड़ी-बड़ी, ऊपर उभरी हुई और उनमें सुरमा लगा हुआ, चिकन का कुरता और लकलाट का गरारेदार पाजामा पहने हुए हो, तो आप समझ लें कि यही मियॉ राहत है।'[3] 'बेकारी का अभिशाप' कहानी में मिस्टर गुप्ता और तिवारी के साथ लेखक (मैं) जेल में कैदी ललितमोहन के द्वारा सुनायी गई जीवन-गाथा का हू-ब-हू वर्णन करता है, लेखक द्वारा किया गया वर्णन मर्मस्पर्शी है- बेकारी का बोझ ढोते-ढोते जेल गये नवयुवक की व्यथा-कथा। कहानी के संवाद संक्षिप्त है किन्तु कथा को गतिशील बनाने में सहायक हुये है। 'कुंवर साहब मर गये' कहानी में आदि, मध्य और अंतिम तीन भाग है पहले भाग में लेखक कांग्रेस के जुलूस का वर्णन करके कथा की भूमिका बनाता है -- यह वर्णन कमेन्ट्री शैली में किया गया है- कहानी के दूसरे

१- कुछ विचार - प्रेमचन्द, पृ० २८।

२- इन्स्टालमेन्ट भगवतीचरण वर्मा पृ० १६।

३- वही पृ० २२

भाग में कुंवर कमल नारायण द्वारा 'भारत-माता की जय' बोलकर गिरफ्तार होने की खबर के साथ ही आगे की कथा जानने की उत्सुकता बढ़ जाती है - क्योंकि लेखक उस खबर को- 'अप्रत्याशित घटना' के तरह व्यक्त करता है - कहानी के अत में बगले के बरामदे में बैठकर शराब पीते कुँवर साहब की स्थिति का वर्णन और उनकी स्वीकारोक्ति -- 'कुँवर साहब मर गए' - कहानी को रोचक और सजीव बनाती है। 'एक अनुभव' कहानी में दो भाग है - पहले भाग में लेखक (मैं) और उसके मित्रों के सहभोज के मध्य (होटल में) पृथ्वीनाथ के आगमन के साथ कथा एक मोड़ लेती है और पृथ्वी नाथ के जीवन के एक अनुभव को लेखक फ्लैश-बैक पद्धति में वर्णित करता है। कहानी का अंत वस्तुत अत नहीं है वह एक प्रश्नचिह्न उठाता है हमारे सामाजिक ढाचे पर जहाँ औरत एक वस्तु के माफिक समझी जाती है किन्तु फिर भी नारी की धर्म के प्रति आस्था बरकरार है। 'विक्टोरिया क्रॉस' कहानी में लेखक भूमिका बाधते हुए धुप्पल (फ्लूक) की चर्चा करता है -धुप्पल का अर्थ है सयोग। जब कथावाचक (मैं) यह जानना चाहता है कि सुखराम को वीरता के किस कार्य के लिये विक्टोरिया क्रॉस मिला ? तो सुखराम का साथी न बताने का बहाना करते हुए कौतूहल को बढ़ता ही है क्योंकि पाठक यह जानने के लिए जिज्ञासु हो उठता है कि सुखराम को विक्टोरिया क्रॉस कैसे मिला- कहानी के अतिम भाग में उस जिज्ञासा का समाधान होता है। 'एक विचित्र चक्कर है' कहानी में देवेन्द्र के नाम तार आने पर मित्र-मण्डली की बातों का रुख बदलता है और चार लाख की सम्पत्ति का मालिक बन चुका देवेन्द्र फ्लैश बैक पद्धति में विगत जीवन का प्रत्यवलोकन करते हुए कमला और अपने प्रेम की कथा सुनाता है - कमला मरते वक्त चार लाख रूपये देवेन्द्र के नाम कर जाती है -- कहानी का दूसरा भाग एक वर्ष बाद (लेखक) मैं और देवेन्द्र की भेट से प्रारम्भ होता है और कमला के प्रेमी और सवेदनशील देवेन्द्र के स्थान पर एय्याश और नीच देवेन्द्र के परिवर्तित रूप के साथ कथा का समापन होता है। 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' कहानी में लेखक कथा सुनाने के लिये बड़ी लम्बी चौड़ी भूमिका बाधता दिखायी पड़ता है। कथावक्ता हीरो जी का परिचय इतना अधिक लम्बा हो गया है कि कथा की एकान्विति में बाधक बनता है - यह कहानी वर्माजी के किस्सागोई के हुनर का लाजवाब नमूना है। 'बाहर-भीतर' कहानी पात्रों की विभिन्न मन-स्थितियों का चित्रण करती है। निर्मला द्वारा अपने विवाह की सूचना देने पर उसकी चारोसहेलियों की कुण्ठा और द्वन्द्व उभरता है। 'प्रायश्चित' कहानी में लेखक राम की बहू की बाल-सुलभ चंचलता और कबरी बिल्ली की चालाकियों का वर्णन करके पाठक की वृत्ति को रमाने में सफल हुआ है - कबरी बिल्ली को पाटे से मारने की घटना से कहानी में तीव्रता आती है और पाठक आगे की कहानी जानने को उत्सुक हो उठता है - पण्डित परमसुख जिस समय प्रायश्चित के लिये सारा प्रबन्ध करके रामू की माँ से ग्यारह तोले सोने की माग करते हैं उसी समय महरी द्वारा बिल्ली के उठकर भागने की सूचना से कथा समाप्त हो जाती है। 'उत्तरादायित्व' कहानी नैरेटर (मैं) द्वारा किये गये विश्लेषण से प्रारंभ होती है - जगदीश द्वारा की गयी आत्महत्या और उसकी प्रेमिका शीला तथा नैरेटर के बीच वाला सवाद कथा को गतिशील बनाता है। 'परिचयहीनयात्री' में तो लेखक नैरेटर (मैं) के रूप में रेल-यात्री और एक सहयात्री का आखो देखा हाल रोचक ढंग से प्रस्तुत करता है। 'बॉय। एक पेग और' कहानी को स्वाभाविक बनाने के लिये लेखक विश्वकांत द्वारा उसके विगत जीवन पर प्रकाश डालने की नियोजना करता है- विश्वकांत और उसकी प्रेमिका माधवी के मध्य हुआ संवाद संकेतात्मक तरीके से विश्वकांत की विक्षिप्तता का रहस्य बना देता है - कहानी का अंत आधे-अधूरे वाक्यों से होता है। 'इन्स्टालमेण्ट' कहानी में 'विशिष्ट चरित्रों' का वर्णन कुछ इस ढंग से किया गया है कि कहानी रेखाचित्र के अधिक निकट लगती है। अपनी सहपाठिनों के सामने झूठी शान का प्रदर्शन के लिए इन्स्टालमेण्ट पर खरीदी गयी कार उनके लिए समस्या बन जाती है।

'दो बाके' कहानी सग्रह की पहली कहानी 'दो पहलू' दोहरे कथानक से युक्त है दोनों

कहानियों के अंत में लेखक निष्कर्ष रूप में अपना मत देकर जीवन के दो सर्वथा भिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालता है। रामेश्वर द्वारा देश के लिए प्राण न्यौछावर करना और भिखारी का अपने निरर्थक जीवन से चिपटे रहना पाठक को सोचने के लिए विवश कर देते हैं। 'मेज़ की तस्वीर' कहानी में लेखक प्रमुख चरित्र रामनारायण के निरपेक्ष विश्लेषण द्वारा कथा को गति देता है - रामनारायण का आत्मविश्लेषण उसका चरित्र तो स्पष्ट करता ही है साथ ही उसकी पत्नी और मनोरमा के चरित्र पर भी प्रकाश डालता है परन्तु लेखक प्रारंभ में भी जीवन-मृत्यु का प्रश्न उठाता है और अंत में भी-जिसका पूरी कहानी से कहीं कोई सम्बन्ध नहीं है - यह बात खटकती है। 'विवशता' कहानी का प्रारभ स्त्री और प्रेम को लेकर हुआ है और उसके बाद नैरेटर (मैं) विगत जीवन की एक घटना का वर्णन करता है -- लीला द्वारा अपने प्रेमी के रूपये चुराने का कार्य उसके स्वभाव के विपरीत है परन्तु कहानीकार चरित्र की अंत.प्रेरणाओं का स्पष्टीकरण करके उसके आचरण की संगति और ओचित्य प्रमाणित कर देता है। 'कायरता' कहानी में बूढ़ा व्यक्ति उसी सबजज के सामने अपने मुकदमे की सारी घटना का ब्यौरा देता है जिसकी अदालत में उसका मुकदमा चल रहा था- कहानी के अत में रहस्य खुलता है - परन्तु बहुत छिपे हुए तरीके से लेखक इस तथ्य को जाहिर करता है- 'और उस समय मैंने देखा कि विश्वम्भर दयाल का मुख पीला पड़ गया है, उनके मस्तिष्क पर पसीने की बूंदें चमक रही है और उनका सारा शरीर कांप रहा है।'[1] 'काश कि मैं कह सकता' कहानी में लेखक का उद्देश्य रामनाथ और निरुपमा के चरित्र-विश्लेषण द्वारा दो परस्पर विरोधी चरित्रों को उभारना रहा है। 'रेल में' शीर्षक कहानी में लेखक रेल के माहौल के वर्णन द्वारा भूमिका बाधते हुए कहानी के प्रमुख चरित्र कालीशकर का हुलिया बयान करते हुए उसके बाह्य व्यक्तित्व का खाका खींचता है- नैरेटर (मैं) की स्त्री को देखने की तन्मयता का वर्णन- चित्रात्मक वर्णन पद्धति द्वारा किया गया है। कालीशकर और नैरेटर (मैं)- दोनों के कार्य व्यापार उनके चरित्र को उद्‌घाटित करते हैं। 'कुँवर साहब का कुत्ता' शीर्षक कहानी में लेखक कुँवर साहब और मैकू धोबी के चरित्रांकन द्वारा एक गरीब व्यक्ति की विवशता का चित्रण करता है -गधे द्वारा अल्सेसियन कुत्ते को मारने की घटना पर दोनों मालिकों के कार्य-व्यापार उनके वर्गीय चरित्र को उजागर करते हैं। 'तिज़ारत का नया तीरका' शीर्षक कहानी में खुशबख़्तराय के व्यापार करने के नायाब तरीकों का वर्णन है- व्यापार के एक तरीके में घाटा उठाने के बाद दूसरा और दूसरे में घाटा मिलने पर तीसरा तरीका अपनाते हुए राय साहब के सभी तरीके पाठक की उत्सुकता को बढ़ाते गये- इसके बाद क्या होगा ? और एक के बाद एक तरीकों का वर्णन और लेखक की अत प्रकाशक टिप्पणी रोचकता बढ़ाने में सहायक हुई है। 'अनशन' कहानी में मस्तराम पाण्डेय के हुलिये के चित्रात्मक वर्णन द्वारा भूमिका बांधते हुए लेखक आगे की कहानी के कथ्य का सकेत कर देता है। बीच-बीच में पाण्डेय जी द्वारा सुनाये गये मिसरे उनके चरित्र और व्यक्तित्व को उद्‌घाटित करने में सहायक हुये हैं -झटपट मुशी की ससुराल-गाथा यदि न भी होती तो कहानी में कोई अतर नहीं पड़ता। 'लाला तिकड़मीलाल' कहानी में तिकड़मीलाल अपने नाम के अनुरूप तिकड़म करते हुए कहानी के शीर्षक को सार्थक बनाते हैं- नाज़िर मुंशी' कहानी में नैरेटर (लेखक) ज्ञान को कुरुप और अज्ञान को सुंदर बताते हुए कहानी की भूमिका बनाता है- कहानी के मध्य भाग में पचीस वर्ष पहले की यादगार घटना को लेखक पूर्वदीप्ति पद्धति का आश्रय लेकर उभारता है जिसमें कहानी के प्रमुख चरित्र नाज़िर मुंशी सम्पूर्ण रूप में उभरते हैं और कहानी के अतिम भाग में नाजिर मुशी का वह रूप उभरता है - जिसकी आत्म मर चुकी होती है -कहानी का अंत लेखकीय टिप्पणी द्वारा होता है - 'हम सब नाजिर मुशी हैं, हम सब धन के गुलाम हैं। हम सबों की आत्मा को धन के पिशाच ने अपने पैरों के नीचे कुचल

१- दो बांके वर्मा पृ० २८

रक्खा है।'[१] 'पराजय अथवा मृत्यु' कहानी में भुवनेश्वरी देवी की आत्महत्या की खबर से कहानी का प्रारंभ होता है और इसके बाद उनके द्वारा मृत्यु पूर्व लिखे गये पत्र से कथा को गति मिलती है - कहानी का अंत जिस लेखकीय बयान के साथ होता है उससे अंत आरोपित लगता है। 'दो बांके' कहानी में वर्माजी ने भूमिका बांधते हुए- लखनऊ की प्रसिद्ध वस्तुओं के क्रम में प्रसिद्ध व्यक्तियों के वर्णन से- दो बाकों का जिक्र किया है और लेखक कथोपकथन द्वारा उस्तादों के चरित्र को स्पष्ट करता है - 'इस पार वाले बाके ने कहा- 'उस्ताद, तबीअत नहीं हाती कि तुम्हारे जैसे बहादुर आदमी का खून करूँ।'

उस पार वाले बांके ने कहा -- ''उस्ताद, तबीअत नहीं होती कि तुम्हारे जैसे शेरदिल आदमी की लाश गिराऊँ।'

थोड़ी देर के लिए दोनों मौन हो गये, पजा गुथा हुआ, टस-से-मस नहीं हो रहा है।

'इस पार वाले बांके ने कहा - 'उस्ताद, झगड़ा किस बात का है ?'

उस पार वाले बांके ने कहा - 'उस्ताद, यही सवाल मेरे सामने है।'

इस पार वाले बाके ने कहा - 'उस्ताद, पुल के इस तरफ के हिस्से का मालिक मैं।'

उस पार वाले बांके ने कहा - 'उस्ताद, पुल के इस तरफ के हिस्से का मालिक मैं।'

और दोनों ने एक साथ कहा - 'पुल की दूसरी तरफ से न हमें कोई मतलब है और न हमारे शागिर्दों को।'[२] दोनों बांकों के इस नाटकीयता पूर्ण आडम्बर और झूठी प्रशसा के भाव लेखक की अत प्रकाशक टिप्पणी- एक लट्ठधारी देहाती की टीका -- 'भुला स्वांग खूब भर्‌यौ' - द्वारा उद्‌घाटित होते है।

तीसरे कहानी संग्रह 'राख और चिंगारी' की पहली कहानी 'छह आने का टिकट' कहानी में सम्पादक किशोर के दफ्तर में रामखेलावन नारायण प्रसाद सिंह के आगमन के साथ ही उनके बारे में जानने की उत्सुकता बढ जाती है - सम्पादक के घर में जमे हुए रामखेलावनजी - अपने अजीबोगरीब कारनामों से कथा को रोचक बनाते हैं। 'रहस्य और रहस्योद्‌घाटन' दोहरे कथानक से युक्त कहानी है जिसमें लेखक तान्त्रिकों और भविष्य वक्ताओं के किस्से सुनाने के लिए आफिसर्स क्लब की नियोजना करता है- कहानी के अंत में बेयरे के कथन को लेखक निष्कर्ष के रूप में प्रस्तुत करता है। 'पटा-बनेठी' शीर्षक कहानी में लेखक चरित्रों के शील-निरुपण के लिये कथोपकथन का सहारा लेता है- कहानी कई मोड़ों से होते हुए अपने लक्ष्य की ओर बढ़ती है और यह तथ्य सामने आता है कि हमारे समाज की दो पीढ़ियों के विचारों में विशेष अंतर नहीं आया है। 'पियारी' कहानी को लेखक ने राजा बाबू के स्वागत कथन के रूप में निर्मित किया है परन्तु मनोहर नामक दूसरा पात्र पूरी कहानी में सामने नहीं आता- लेखक के कथन से उसका आभास मात्र होता है। कहानी का अंत पियारी के प्रायश्चित स्वरूप कहे गये वाक्य से होता है और इसके साथ ही होता है पियारी का निधन। 'दो रातें' कहानी का अंत एक विस्मयकारी घटना से हुआ है - जीवनराम और उस युवती की दूसरी भेंट जिन परिस्थितियों में होती है उससे कहानी का अंत मार्मिक और प्रभावशाली बना है। 'बतंगड़' कहानी का अंत भी कथावाचक के निष्कर्ष के रूप में दृष्टिगत हुआ है- इस प्रसंग में यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि अधिकांश कहानियों की तरह इस कहानी का कथावाचक भी कहानी का पात्र है। 'खिलावन का नरक' कहानी में लेखक दो स्त्री-पुरुषों के संभाषण से बहुत कुछ कह देता है - सुखिया की शक्ल-सूरत से तो पाठक परिचित नहीं

१- दो बांके -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ६४।

२- वही पृ० १११-११२

हो पाता किन्तु उसकी बातों से विदेश में रहकर धन कमाने वाले उसके पति की एव निम्नमध्यवर्गीय लोगों की पारिवारिक स्थिति, जीवन की विवशताओं तथा अर्द्धग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले सरकारी कर्मचारियों की चारित्रिक कमजोरियों का कच्चा-चिट्ठा खुल जाता है- कोई कह रहा था- 'यह बारिश भी अजब बेमौके शुरु हो गयी। भगवान जाने कब तक होती रहे।'

और उसका उत्तर मिला, 'तुम्हें क्या - मुसीबत तो हमारी है। अम्माजी पुछिहैं - कहॉ रही - तब का कहब ? और अम्माजी दद्दाजी से एक-एक की सौ-सौ जड़िहैं।'

खिलावन के मानो काटो तो खून नहीं, यह आवाज तो सुखिया की थी। सुखिया उस समय इस मदिर में और उसके साथ आदमी। दबे पावों वह और भीतर खिसका।

मर्द ने कहा, 'अरी कुछ न होगा। तेरी सास बक-झक कर चुप हो जायेगी। हॉ- उस दिन तेरे ससुर ने जो मुझे देख लिया था, तो क्या हुआ ?'

'होता क्या ?' आवाज औरत की थी- पहिले तो बहुत बिगड़े, कहिन की हम नाक कटाय दीन्ह घर से निकरैं की धमकी दीन्ह- लेकिन जब चादी की हसली देखिन और अम्माजी हमरे अँचरा माँ बँधे पॉच रुपैया जो हमें दीन्ह रहौ खोल के उनके सामने रख दीन्हिन, तो शान्त हुई गे।' और स्त्री हंस पड़ी।

खिलावन के मुख पर पसीने की बूदे आ रही थीं।

मर्द ने फिर कहा, 'और वह तेरा वह-उसकी कुछ खबर मिली।'

'कहॉ-आज छै महीना से न एक रुपया भेजिस और न कोनों चिट्ठी-पत्री लिखिस। मालूम होत है कौनो रॉड के फेर मॉ पड़िगा। नास होय ऊका। इहॉ घर माँ सब भूखन मरत हैं, तुम्हरे पाँच रुपैया से आज खाना मिला है'- और कुछ रुककर स्त्री ने फिर कहा, 'हमारे देवर का एक-आध बीघा जमीन दिवाय देय। जिलादार आप तो इतनौ नहीं करि सकत हौ ?'[1] 'आवारे' कहानी में भी लेखक बम्बई नगरी के दादर मुहल्ले के ईरानी होटल में बैठे रामगोपाल के कार्य-व्यापार से कहानी प्रारभ करता है- उसके बाद एक ही कमरे में रहने वाले पाच युवकों की जीवन-चर्या का वर्णन करता है। यह कहानी बम्बई जैसी महानगरी में रहने वाले व्यक्तियों की तंगहाली का बयान करती है। 'राख और चिंगारी' नामक कहानी में नायिका गीता के अन्तर्द्वन्द्व के बीच घटनाओं को इतने अच्छे ढंग से पिरोया गया है कि कथा में एकक्रम न होते हुए भी कथा-क्रम में विशृंखलता का आभास नहीं होने पाता- भाई की मौत, असामान्य मानसिक स्थिति में रमेश से उसकी भेंट, विवाह की सूचना मिलने पर घरवालों का आना और तब विवाह न करने के अप्रत्याशित निर्णय से कहानी में नया मोड़ उपस्थित होता है और इसके साथ ही कहानी का अंत हो जाता है। 'उन्माद' कहानी भी निश्चय-अनिश्चय के द्वन्द्व से आगे बढ़ी है और अत तक यह द्वन्द्व समाप्त नहीं होता। कथा के दोनों चरित्र सुचारु रुप से जीवन आरम्भ नहीं कर पाते।

इसके अंतिम कहानी-सग्रह 'मोर्चाबन्दी' की कहानियों में प्रौढ़ लेखक का परिपक्व रुपशिल्प की दृष्टि से- सामने आता है। 'सौदा हाथ से निकल गया' कहानी में लेखक पर्दे के पीछे रहते हुए दत्तचित्त होकर रायइकबाल शंकर और उनके परिवार की कथा रोचक ढग से सुनाता है रद्धो बीबी और छमिया महरी द्वारा ऐतिहासिक मेज का पाया जलाये जाने के वर्णन से कथा के अंत का संकेत मिल जाता है दूसरे ही परिच्छेद में। और एक महत्वपूर्ण सौदा हाथ से निकल जाता है। 'क्षमायाचना' कहानी का प्रारभ रविप्रकाश की टैक्सी के वर्ली सी फेस की पांच मजिला इमारत के सामने पहुचने से होता है। बम्बई के एक छोटे से फ्लैट को लेकर हुई पिता-पुत्र की कहा-सुनी से कहानी गति पकड़ती है और अत

१ प्रतिनिधि कहानियाँ वर्मा पृ० ६७-६८

में महंगाई की मार से त्रस्त रिटायर्ड पिता अपने पुत्र की समझदारी की कद्र करते हुए उससे क्षमायाचना करना चाहते हैं। 'संकट' कहानी आदिमपुर गाव की बस्ती में थानेदार, पोस्टमास्टर, महाजन, हेडमास्टर, ग्रामप्रधान और ताल्लुकेदार के मिलकर भाग छानने से कथा आरभ होती है- पडित घुमरी दुबे द्वारा मुडन की साइत बिचरवाने की घटना से कथा लक्ष्य की ओर अग्रसर होती है क्योंकि मुडन में होने वाले खर्चे को लेकर उत्पन्न हुआ सकट ही कहानी का मूल कथ्य है। अभिशप्त जी को विदाई में मिले सब्जी के दो झाबों और उन्हें निशातगज की बाजार में बेचने का रोचक वर्णन पाठक की वृत्ति को रमाने में सफल हुआ है- लेखक झाबों के साथ मिले रत्नाकर सिंह के पत्र से उत्सुकता को बढ़ाता है। 'रगीलेलाल तीर्थयात्री' कहानी का प्रारंभ अविनाशचन्द्र (मैं) के चौबीस वर्ष पहले के जीवन के प्रत्यवलोकन से होता है और उसके बाद कहानी वर्तमान समय में लौट आती है- दो पुराने दोस्तों और उनके परिवार के कार्य-व्यापार वर्तमान समाज का यथार्थ चित्रण करते हैं। यह सामाजिक विडम्बना ही है कि हमेशा जेल की यात्रा करने वाला व्यक्ति तीर्थयात्री के रुप में जाना जाता है। 'वसीयत' कहानी की शुरुआत आचार्य चूड़ामणि मिश्र द्वारा अपने शिष्य जनार्दन जोशी को वसीयत सौंपने के साथ होती है - तेरही के बाद सुनायी जाने वाली आचार्य मिश्र की उस वसीयत पर कहानी के चरित्रों के साथ-साथ पाठक की दृष्टि भी आरभ से टिक जाती है- वसीयत का एक-एक अंश सुनने के बाद कुतूहल बढ़ता ही जाता है। वसीयत का अत होने के साथ कहानी भी समाप्त हो जाती है। कहानी का वह स्थल बड़ा रोचक है जहॉ नैरेटर (मैं) आचार्य मिश्र द्वारा दिय गये तोते के यह बोलने पर- मै पण्डित हूँ। - तुम बुद्धू हो। - अस्सी घाट में पिंजरा खोलकर उसे उड़ा देता है। 'खानदानी हरामजादे' कहानी की शुरुआत लार्ड कर्जन और धोबी कन्हाई को लेकर होती है दूसरे भाग में लेखक अपनी मूल कथा पर आ जाता है - 'उजड्डता, गुण्डापन सेवाभाव, सच्चाई और नेकी इन गुणों और अवगुणों के कुछ अजीब सम्मिश्रण के रूप में सजीवन पाण्डेय ने दुनिया में जन्म लिया था।"[1] चरित्रों के संवाद उनके चरित्र निरुपण में तो सहायक हुये ही हैं साथ परिवेश की विसगतियों को उजागर करते हैं। 'समझौता' कहानी का प्रारभ नैरेटर (मैं) जयकृष्ण शर्मा को लेकर करता है - कहानी में कई मोड़ आते हैं- साड़ी का डिब्बा और प्रेम-पत्र शर्माजी के पत्नी के पास पहुँचते ही तनाव का आरम्भ हो जाता है और विभिन्न मोडों से गुजरते हुए- समझौते के साथ ही कहानी समाप्त हो जाती है। अत में कहानीकार द्वारा लिखा गया नोट उसे प्रभावोत्पादक बनाता है- 'इस समझौते के बाद मेरा सबसे प्यारा दोस्त जयकृष्ण शर्मा मुझसे छूट गया। कभी भूले-भटके मिल जाता है तो दो-चार औपचारिक बातें हो जाती हैं। स्काच-ह्विस्की का मजा ही भूल गया हूँ। और सबसे बड़ी बात तो यह कि डालडा, मिट्टी का तेल, साबुन आदि न जाने कितनी चीजों के लिए तरसना पड़ रहा है; क्योंकि कन्हैयालाल सॉवरिया अब जी-जान से हरिहर हाईस्कूल और हरिहर सेवा-सस्थान के धधे में लग गया है।'[2] 'गनेसीलाल का रामराज' कहानी में गनेसीलाल के अजीबोगरीब कारनामे उसके चरित्र पर तो प्रकाश डालते ही हैं साथ ही परिवेश की विसंगतियों पर चुटीला व्यंग्य करते हैं। देश के कर्णधार किस प्रकार देश की जनता का विभिन्न तरीकों से शोषण करते हैं। 'दिल का दौरा' कहानी के पहले और दूसरे परिच्छेद में ही लेखक कहानी के प्रमुखपात्र ज्ञानीजी की चारित्रिक विशेषताओं की ओर सकेत कर देता है- मयूराक्षी बाला का प्रकरण और नौकर रामदीन को ब्याह के लिये छ सौ रुपये देना। कहानी का वह स्थल बड़ा रोचक है जब दुर्गा, ज्ञानीजी के हरकतों का विरोध करने के लिए उनकी ओर कुल्हाडी लेकर बढ़ती है और अंत में दुर्गा के घर से भागने और ज्ञानीजी को दिल का दौरा पड़ने से कहानी समाप्त हो जाती है। 'जबरा मारे रोने न दे' कहानी में लेखक

१- मोर्चाबन्दी भगवतीचरण वर्मा पृ० ७१।

२ वही पृ० ९४

पत्रकार और पुलिस के मध्य हुई झड़प का चित्रण बड़े रोचक ढग से करता है साथ ही युगीन यथार्थ को भी उभारता है। 'गुन न हिरानो गुनगाहक हिरानो है' कहानी में मित्रों की मण्डली के बीच सुनायी गई दो कथाओं का वर्णन है। ये दोनों कहानियाँ सदाशिवसेने और रत्नकुमार के चरित्रों के माध्यम से युगीन बदलाव की ओर सकेत करती है। 'मोर्चाबन्दी' कहानी में लेखक लालसजीवन सिंह और उनके परिवार से परिचित कराने के बाद कहानी के दूसरे भाग में ही संजीवन कालोनी में हुई मोर्चाबन्दी के कारण से परिचित करा देता है। लाल सजीवन सिह और चन्द्रिका महाराज की पार्टियों के कार्य-व्यापारों और वाद-विवाद से अंत तक संघर्ष की स्थिति बनी रहती है। इस कहानी में भी कहानीकार ने 'नोट' लिखकर उसके अंत को प्रभावोत्पादक बनाने का प्रयास किया है - 'कल से लगातार तार आ रहे हैं कि कहानी भेजो, तो आज तक की कहनी इतनी ही है- आगे क्या होगा, कहा नहीं जा सकता। इतना तय है कि दगा नहीं होगा- यह मोर्चाबन्दी भी कुछ दिनों की है। सुलह हो ही जायेगी। लेकिन चन्द्रिका महाराज पर जो मुकदमा दायर कर दिया गया है वह बरसों चलेगा।'[१] 'त्याग और ग्रहण' कहानी में लेखक बड़ी लम्बी-चौड़ी भूमिका बनाकर कहानी का प्रारभ करता है। पण्डित मधूसूदन मिश्र की जीवनचर्या के माध्यम से कहानीकार युगीन यथार्थ का चित्रण करता है।

इस प्रकार भगवतीचरण वर्मा की कृति व्यक्तित्व मूलत एक किस्सागो का सा है। वे एक निपुण किस्सागो की तरह कथ्य को, चरित्रों को और घटनाओं को पूरी रोचकता में विकसित करते हैं। ऐसा करते हुए वे वस्तुगत यथार्थ और चरित्र की आन्तरिक बारीकियों के बीच जरूरी रचनात्मक तालमेल का निर्वाह भी करते हैं। उनके यहाँ कथा या चरित्र निर्माण की अपनी कुछ निजी रुढ़ियाँ है जिनका उपयोग वे प्राय' अपनी सभी रचनाओं में करते हैं। इन रुढ़ियों में भारतीय कथा परम्परा के अपने प्रभाव काम कर रहे हैं। इनके द्वारा लेखक कथा में या चरित्र विकास में एक रचनात्मक सगति का निर्माण करता है। साथ ही कथाकृति की अद्‌भुत ढग से कथा कृति में प्रमाणित होने की क्षमता भी दिखाई देती है। वर्माजी का रचना ससार यथार्थ का पुर्नसृजन ही नहीं यथार्थ का कलात्मक पुर्नसृजन है।

❋

१- मोर्चाबन्दी वर्मा पृ० ६४

भगवतीचरण वर्मा की कथा-भाषा

शब्द भाषा के मूलाधार हैं और भाषा मनुष्य की भावनाओं की अभिव्यक्ति का साधन है। भाषा में मनुष्य के आन्तरिक भावों को वहन करने की सामर्थ्य है। कथा में भाषा का प्रयोग दो प्रकार से किया जाता है पहला कथाकार की ओर से दूसरा कथा में नियोजित पात्रों की ओर से। प्रत्येक कृति में प्रयुक्त भाषा का रुप भिन्न-भिन्न रहता है। विषय, कथ्य वातावरण और उद्देश्य के अनुसार भाषा का अपना एक स्तर होता है जो कृतिकार की शैली के अनुरुप व्यक्त होता है।

परम्परागत उपन्यासों में भाषा के परिष्कार या प्रयोगों की ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है। अधिकतर उपन्यास वर्णनात्मक भाषा में या सीधे सपाट बयान देने के ढंग से लिखे गये हैं अत भाषा की निहित सम्भावनाओं को उपन्यास के माध्यम से सम्प्रेषित नहीं किया जा सका। आधुनिक उपन्यासकार समसामयिक परिवेश तथा स्थितियों के भीषण यथार्थ से आक्रान्त मनुष्य की जटिलतम प्रक्रियाओं को गहनता से सम्प्रेषित एव अभिव्यक्त कर सकने योग्य भाषा के निर्माण में संलग्न है। अत उपन्यासकार भाषा को किसी शास्त्रीय नियम के अनुसार परिष्कृत एव परिमार्जित करने का प्रयास नहीं करता। भाषा को वह जीवन्त और लचीले माध्यम की भांति मानता है जिसे आवश्यकतानुसार स्थितियों के अनुरुप प्रयोग किया जा सके। भगवतीचरणवर्मा ने प्रेमचन्द की भाषा-परम्परा का अनुगमन करते हुए जीवनगत यथार्थ को, अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिए खड़ी बोली को माध्यम बनाया।

वर्माजी की कथा-कला की विशेषता भाषा-सरचना में देखने को मिलती है। कथ्य की सबल अभिव्यक्ति के निमित्त इन्होंने भाषा के क्षेत्र में बहुलेरे प्रयोग किये हैं -- स्थान, पात्र और वातावरण का अकन करने में भाषा सरल, सहज और प्रभावपूर्ण है, प्रबुद्ध पात्रों की वैचारिकता को अभिव्यक्ति देते समय भाषा विचार-प्रधान है जैसे- 'चित्रलेखा', 'चाणक्य' और 'सामर्थ्य और सीमा' की भाषा। नारी सौन्दर्य और प्राकृतिक सुषमा का अकन करते समय भाषा की काव्यात्मकता दृष्टिगत होती है। जीवन के बहुरगी यथार्थ का चित्रण करने के कारण साहित्य में पात्रों की विविधता रहती है अत. जीवन के विस्तार के कारण भाषा में व्यापकता और विविधता अपना स्वाभाविक है। वस्तुत. वर्माजी की कथा-भाषा सरल, सहज और व्यावहारिक खड़ी बोली है- सीधे सहज ढंग और बेलाग लेखनी के माध्यम से पात्रों और घटनाओं का जीवन्त चित्र प्रस्तुत किया है- प्रतीकों, बिम्बों और मुहावरों से युक्त इनकी भाषा व्यापक अर्थ देने की सामर्थ्य रखती है।

'पतन' नामक उपन्यास में नवाब वाजिद अलीशाह के समय का भारतीय समाज है। 'पतन' वर्माजी का पहला उपन्यास है किन्तु भाषा की दृष्टि से उनके रचनाकार की सतर्कता यहाँ देखी जा सकती है। लेखक का उद्देश्य अपने कथ्य के अनुरूप भाषा का निर्माण है और वह इसके लिये प्रयास भी करता है। वर्माजी की औपन्यासिक शैली वर्णनात्मक है - वर्णनात्मक शैली में रचनाकार वर्णनकर्त्ता के रूप में रचना में उपस्थित होता है। इस प्रकार वह अपनी मनपसद भाषा का उसके मुहावरों समेत इस्तेमाल भी कर सकता है। 'पतन' का सामाजिक परिवेश मुगलकालीन है किन्तु इसका चित्रण करता हुआ लेखक भाषा की मुगलिया भगिमा अनिवार्य नहीं समझता, वह लिखता है-- 'झाड़ तथा फ़ानूस लटक रहे थे और कमरा सुन्दर चित्रों से सुसज्जित था फ़रस के मुलायम तथा सुबर कालीन बिछे थे उसके सामने एक पलंग पड़ा था जिस पर एक मखमल का गद्दा बिछा हुआ था उस

पर दुग्ध से भी स्वच्छ एक कामदार रेशमी चादर बिछी हुई थी। जरी के काम की तकिया रखी थी और रेशम की एक ओढ़ने की चाद भी पड़ी थी।'[1] इस प्रकार लेखक मुगलकालीन संस्कृति और उसके वैभव का वर्णन खड़ी बोली के सर्वप्रचलित रुप में करता है। यद्यपि चरित्रों के परस्पर वार्तालाप आदि के सदर्भ में वह अरबी-फारसी के शब्दों का उपयोग भी करता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को आधार बनाकर लिखे गये उपन्यास 'चित्रलेखा' की भाषा प्राजल तथा दार्शनिक विचारों से कहीं-कहीं बोझिल है- प्रबुद्ध पात्रों की वैचारिकता की अभिव्यक्ति उपन्यास मे गभीरता की सृष्टि करती है। मौर्यकालीन वातावरण को उकेरते हुए वर्माजी सामान्यत. क्लिष्ट अप्रचलित शब्दों का प्रयोग करते हैं परन्तु उनकी सस्कृतगर्भित भाषा परिवेश को जीवन्त रुप देने में सहायक हुई है- 'महायज्ञ के अभिमंत्रित धूम्र से सुवासित राज-प्रासाद के विशाल प्रांगण में सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के अतिथि आसीन थे। रत्नजटित स्वर्ण के राजसिहासन पर महाराज विद्यमान थे और उनका मुख पूर्व की ओर था। अनेक दक्षिण ओर क्रम से यथायोग्य विशाल साम्राज्य के आमन्त्रित सामतगण बैठे थे। और वाम पार्श्व में राज्य के प्रधान कर्मचारी। सामने कर्मकाण्डी ब्राह्मणों तथा तपस्वियों का जमघट था।'[2] कथाकार चरित्रों के मनोभावों की अभिव्यक्ति स्वाभाविक और सहज ढग से करता है- चाहे जीवन के सुख का भोग करने वाले बीजगुप्त और चित्रलेखा का यौवन के अन्त के विषय में विचार करना हो या समाज में नये-नये प्रवेश पाये श्वेतांक का नर्तकी चित्रलेखा का साथ होने पर उठने वाला अन्तर्द्वन्द्व, हो। इस उपन्यास में वर्माजी ने विषय की प्रकृति के अनुकूल दैनिक जीवन में प्रयुक्त मुहावरों का प्रयोग किया है तो उक्ति सौन्दर्य की सृष्टि के निमित्त प्राकृतिक उपादानों के प्रयोग द्वारा अपनी उद्भावना शक्ति का परिचय दिया है।

'तीन वर्ष' नामक उपन्यास में विश्वविद्यालय का शैक्षिक परिवेश है। यहाँ युवा विद्यार्थी अपनी-अपनी वर्गीय रुचियों और प्रवृत्तियों के साथ चित्रित हुए है। उपन्यास की भाषा उनके चरित्रों की निजता, अन्तर्द्वन्द्व और आकाक्षा को व्यक्त करने का गभीर संघर्ष करती है साथ ही विश्वविद्यालय में व्याप्त विसगतियों को रेखाकित करने की क्षमता भी उसमें है। भाषा की स्वाभाविकता को बनाये रखने के लिए वर्माजी ने अग्रेजी मिश्रित हिन्दी से बचने का कोई प्रयास नहीं किया है चाहे यह प्रयोग वार्तालाप में हो या लेखकीय टिप्पणी में -- 'चाय से भरे हुए टी-पाट में मिल्क-जग का दूध उड़ेलकर और शुगर-बेसिन की चीनी डालकर लीला ने टी पाट अजित के सामने रख दिया।'[3]

'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' में स्वाधीनता आन्दोलन के दिनों का विशेष रुप से सन् १६३० के आस-पास का सामाजिक-राजनीतिक यथार्थ है- यह यथार्थ बहुस्तरीय तथा घटनाबहुल है। चरित्र-बहुलता तो वर्माजी को प्रिय है ही। भाषा के सामने यहाँ ज्यादा गभीर चुनौतियॉ है- एक तरफ उसका सरोकार अपने समय के जीते-जागते इतिहास से है। इस इतिहास की प्रकृति, गतिविधियों और सघर्ष को समझने की चुनौती उनके सामने है। इसके अतिरिक्त कथा की एकसूत्रता के भीतर घटनाओं और चरित्रों के वैविध्य का संयोजन भी उसकी चुनौती है। 'टेढ़े-मेढ़े रास्ते' में वर्माजी की भाषा इन चुनौतियों का सामना करती है। चरित्रों के द्वन्द्व, उनकी आकांक्षा तथा उनकी आन्तरिक जटिलताओं को पकड़ने की खूबी भी यहाँ देखी जा सकती है। भावनाओं के उद्दाम आवेग में गोते मारते हुए रामनाथ अपने कर्मों का आकलन करते हुए पश्चाताप करते हैं-- 'सब कुछ समाप्त हो गया- कोई नहीं-

---

१- पतन- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ६३।

२- चित्रलेखा भगवतीचरण वर्मा पृ० ३०

३- तीन वर्ष वर्मा पृ० ८१

सब गए। अकेले तुम प्रेत की तरह मौजूद हो रामनाथ। प्रभा को मृत्यु से रोका जा सकता था- अगर जेल मे जाकर तुम उससे न मिले होते। उमा को रूपये देकर तुम बचा सकते थे- लेकिन तुमने उसे अधकार ओर निराशा में ढकेलकर हमेशा के लिये उसे अपना शत्रु बना लिया। और दया-- वह तुम्हारे पास आया अपनी पत्नी और बच्चों के साथ। लेकिन तुमने उसे निकाल बाहर किया। अपने ही हाथों तुमने अपना विनाश किया। तुम्हारी समर्थता- तम्हारी अहम्यन्यता- यह सब निर्माण नहीं कर सके-- इन्होंने भयानक विनाश किया-- तुम अधम हो- तुम पापी हो।''[१] रामनाथ की यह स्वीकारोक्ति उसकी सारी पीड़ा, विवशता और असहायता को उभारती है। लेखक परिवार के बीच बनते-बिगड़ते सम्बन्ध सूत्रों को ही नहीं पहचानता वरन् प्रभावशाली ढग से उभारता भी है। व्यक्ति के माध्यम से या उसके सदर्भ में समाज के मूल्यों, सत्यों और सम्बन्धों के अनेक सगत-असगत पहलू खुलते जाते है। झगडू मिसिर की स्वाधीनता आन्दोलन के प्रति राय के द्वारा लेखक पात्र की मानसिकता से परिचय कराता है-- 'लेकिन एक बात आप निश्चय करि के समझ राखौ। यू सहर का जोश देश की स्वाधीनता की लड़ाई मे काम न देई। शहरवाले लोग देखत है तमाशा , ... देखते नाहीं है, तमाशा करत है। उनका खाय-वियन की कमी तो आय नहीं, पेट भरा है मौज की जिन्दगी बितावत है। आज एक खैल से तबियत ऊबी, काल दूसर खैल रच दीन्हिन।'[२] इस प्रकार इस उपन्यास की भाषा सरल, स्वाभाविक ओर चरित्रों की मनोदशाओं के अनुकूल है। अंग्रेजी शब्दों और सूक्तियों का प्रयोग भाषा में भावानुरूप स्वाभाविकता लाने में सहायक हुआ है।

'आखिरी दाव' नामक उपन्यास में जटिल सामाजिक यथार्थ को व्यक्त किया गया है। यहॉ पूजी को लेखक ने मूल्यों और मानवीय सम्बन्धों को विघटित और पतनशील बनाने वाले तत्व के रुप में पहचाना है। इस प्रकार 'आखिरी दॉव' नामक उपन्यास में रचनाकार के लिये भाषा की चुनौतियाँ कठिन है उसका काम न केवल मध्यवर्गीय समाज के जटिल यथार्थ का साक्षात्कार और अभिव्यक्ति है अपितु इस समाज के अन्तर्द्वन्द्वग्रस्त चरित्रों की अभिव्यक्ति भी है उन चरित्रों की विविधता, उनके व्यक्तित्व का विकास और उनकी संघर्षपूर्ण परस्परता की अभिव्यक्ति भी भाषा के जिम्मे है। वर्माजी ने इस उपन्यास में भाषा को कथ्य की अपेक्षा के अनुसार विकसित किया है। यह उपन्यास वर्तमान सभ्यता, सम्बन्धों और मूल्यों के भीतर निहित अर्थ के दबाव की पहचान कराता है। फिल्मी जीवन में सेठ शिवकुमार, शीतल प्रसाद और राधा की बाहरी सफेदपोशी के भीतर छिपे हुए कुरुप चरित्र सामने आते हैं। चरित्रो के अन्तर्द्वन्द्व जीवन की विसंगतियों को उजागर करते हैं। चार हजार रुपये लेने के लिये रामेश्वर विवश चमेली को सेठ शिवकुमार के पास छोड़ जाता है और स्वयं फ्लैट की व्यवस्था करने के लिये चला जाता है- 'अपने चारों ओर बुने जाते जाल में वह बुरी तरह फसती जा रही है- चमेली यह अनुभव कर रही थी, पर वह विवश थी। फ्लैट की चाभी लेकर रामेश्वर चला गया और चमेली को लगा जैसे रामेश्वर असहायावस्था में अकेली छोड़ गया। यही नहीं, रामेश्वर मानो चमेली पर अपना अधिकार चमेली के हाथों वापस सौंप गया है।'[३] कथन में वक्रता लाने के लिये और भावों को अधिक स्पष्ट करने के लिये लेखक मुहावरों का प्रयोग करता है। कथा बम्बई नगरी को केन्द्रित करके लिखी गयी है अतः भाषा में बम्बईया लटके-झटके यत्र-तत्र दृष्टिगोचर होते हैं।

'अपने खिलौने' नामक उपन्यास में पूजीपति समाज के छिछले प्रेम-व्यापारों का चित्रण है।

१- टेढ़े-मेढ़े रास्ते -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ४६६

२- वही -- पृ० २९४।

३- आखिरी दांव वर्मा पृ० ७२-७३

आधुनिक समाज में जाति-धर्म के मिले-जुले रुप के दर्शन होते हैं अत सभी पात्र उर्दू और अग्रेजी मिश्रित भाषा का प्रयोग करते हैं। उपन्यास की प्रमुख चरित्र मीना के नख-शिख का वर्णन करते समय वर्माजी ने हास्यात्मक लहजे में मोती जैसे दांतों, लिपिस्टिक से रगे लाल होंठों और मझोले कद का रेखाकन किया है। आधुनिक युग के खिलौने यथार्थ के किस धरातल पर खड़े है और उनकी मानसिकता कितनी विकृत हो चुकी है। उपन्यासकार की भाषा उसकी अभिव्यक्ति करने में समर्थ है। 'रामास्वामी पर व्हिस्की का रंग जमने लगा था,' ओह, मुझे पुलिस के हवाले करोगी- यह कहकर कि हम स्काउण्ड्रेल्स है' लेकिन माई डार्लिंग वैम्प हम सब फिल्म वाले स्काउण्ड्रेल्स हैं- छंटे हुए और नम्बरी। इन फिल्मवालों में प्रोड्यूसर-डायरेक्टर, हीरो-हीरोइन, वैम्प-एक्टर्स सभी शामिल है। हा-हा-हा। -दुनिया जानती है। यू रास्कल शैदा। गिलास खत्म करो, अब तो जम रहा है। 'तो माई डार्लिंग वैम्प, तुम हम लोगों का कुछ भी नहीं बिगाड़ सकती, क्योंकि हम लोगों ने तुम्हारी भतीजी को खरीदा है, एक लाख पर एक साल के लिए।'[1] उपन्यास की भाषा सीधी-सादी खड़ी बोली है परन्तु उसमें प्रसगानुरुप मुहावरे ओर शायरी का प्रयोग हुआ है।

'भूले बिसरे चित्र' नामक उपन्यास में भी एक मध्यवर्गीय परिवार का यथार्थ है। लेखक ने इस परिवार को अपने समय के समाज की सापेक्षता में देखने का प्रयास किया है। अर्थ यानी पूजी की विनाशकारी मुद्राएँ यहॉ भी है और ज्यादा जटिल रुप में है। इस उपन्यास का कैनवस बडा है इसमें चार पीढियों की कथा है और इस कथा में वर्णित पीढ़ियों का चरित्र, उनका सघर्ष और शेष समाज में मूल्यभग की भयानकता उभरकर सामने आती है। इस उपन्यास में वर्माजी की भाषा में ज्यादा सहजता, चुस्ती और सामर्थ्य दिखायी देता है वह परिवेश, कथ्य और चरित्र की अभिव्यक्ति में पूरी तरह से सक्षम है। परिवारों का टूटना- आज के परिवारों की नयी-पुरानी पीढ़ियों के सघर्ष और उनकी चेतना की टकराहट का परिणाम है- 'मुशी शिवलाल सोचने लगे। अधिकार और शक्ति अपना स्थान बदल रहे थे, एक जगह से हटकर दूसरी जगह जा रहे थे। परिवार की परम्परा टूट रही थी। धीमे से स्वर में उन्होंने कहा, 'तू छोटी को चाभी क्यों नहीं दे देती ? घर की मालकिन तो वह है। उसे कितना बुरा लगता होगा ?'

छिनकी तमक उठी, 'घर की मालकिन ज्वाला की बहू आय। ई जो सब राज-पाट आय तौन ज्वाला की बदौलत सब लोग भोग रहे ऑय। तौन ज्वाला की बहू है लौण्डी और मालकिन हुई गई छोटी।'[2] छिनकी चाची और मुंशी शिवलाल का यह वार्तालाप परिवार में होने वाले भावी विघटन का सकेत दे देता है। लेखक वर्तमान समाज- पजूवादी समाज की अनेक विसगतियों-- सम्बन्धगत और मूल्यगत का पर्दाफाश करता है। इस प्रक्रिया में सम्बन्धों और मूल्यों की रिक्तता और नारी का शोषण करने वाले व्यक्तियों का कुरुप चेहरा सामने आ जाता है- 'मैं वेश्या हूँ, यही कहना चाहते हो तुम। लेकिन कौन नहीं बेच रहा है अपने को। कुछ अपना शरीर बेचते हैं कुछ अपनी आत्मा बेचते हैं, भोग-विलास में अपने को खो देना, पशु बन जाना, यह आत्मा को शैतान के हाथों बेच देना है। राजा सत्यजित प्रसन्न, रानी हेमवती, कैलासो और तुम . तुम सब के सब अपनी आत्मा को बेच चुके हो। मैं रानी हूँ, मेरे पास लाखों रुपये है। और तुम अपनी तरफ तो देखो, तुम क्या हो ? तुम जलते हो, कुढ़ते हो, तुम्हारे अदर घृणा है, तुम्हारे अदर हिंसा है।'[3] आवेग में आकर किया गया संतों का

१- अपने खिलौने - भगवतीचरण वर्मा, पृ० १५०।

२- भूले बिसरे चित्र - भवगतीचरण वर्मा पृ० ८८।

३- वही पृ० २३७

प्रलाप पूंजीवादी व्यवसायिकता को उजागर करने के साथ ही परिवेशगत दुर्बलताओं पर भी चोट करता है। नवीन युग की परिकल्पना करते हुए लेखक विकास की नूतन सम्भावनाओं के साथ ही उपन्यास का अंत करता है। भावों की अभिव्यक्ति के लिये मुहावरों का यथासम्भव प्रयोग लेखक ने किया है तथा अरबी-फारसी और अंग्रेजी के शब्द यत्र-तत्र अपनी छटा बिखेरते रहते हैं।

'सामर्थ्य और सीमा' उपन्यास में नियतिवाद का पिष्टपेषण होने के कारण विचार-तत्व की प्रधानता है। लेखक रानी मानकुमारी और उनकी ओर आकृष्ट शिष्टमण्डल के सदस्यों के माध्यम से उपन्यास में सरसता लाने का प्रयास करता है। जिन्दगी के लिये संघर्ष करते हुये उपन्यास के सभी चरित्र अदृश्य सत्ता-नियति द्वारा परिचालित हैं। दार्शनिकता का समावेश होते हुए भी भाषा सरल और स्पष्ट है। नाहर सिंह जैसा दार्शनिक व्यक्ति रानी मानकुमारी और उनकी ओर आकृष्ट व्यक्तियों का चित्रण प्राकृतिक उपादानों के माध्यम से व्यंजना के द्वारा करता है।-- 'मैं देख रहा हूँ कि फूल का रस और पराग छलक रहा है और भौंरे चक्कर लगा रहे है-- अनगिनत भौंरे अपने-अपने प्राणों का मोहक संगीत लिये हुए। फूल के मन में उल्लास है, फूल के मन में भय है। और यह उल्लास और भय ये दोनों एक साथ मिलकर उलझन में डाल देने वाले बन जाते हैं।'[१] रानी मानकुमारी के सौन्दर्य का चित्रण करते समय भी लेखक की काव्यात्मकता झलक उठती है। कथा आधुनिक समाज से सम्बन्धित होने के कारण अंग्रेजी, उर्दू और मुहावरों का प्रयोग किया गया है। विचार-तत्व की प्रधानता होने के कारण भाषा में गंभीरता के साथ बोझिलता भी समाविष्ट हैं।

'थके पांव' उपन्यास मध्यवर्गीय जीवन की गाथा है। मध्यवर्गीय व्यक्ति की टूटन, घुटन और कुण्ठा के अनेकों चित्र इस उपन्यास में उभरते हैं। मान्यताओं और परम्पराओं का निर्वाह करते हुए मोहन अपने पिता और पितामह से भी अधिक बुरी स्थिति में पहुँच जाता है-- 'जूते उतारकर मोहन रसोई में बैठ गया। उस समय वास्तव में उसे बड़ी भूख लगी थी, दस बजे सुबह उसने खाना खाया था। सुशीला ने उसे नाश्ता परस दिया, कड़ाही चूल्हे से उतारकर वह मोहन को नाश्ता कराने लगी और इस बार उसने अपने पति को गौर से देखा। आभाविहीन, दुबला-सा चेहरा, आंखे कुछ बुझी-बुझी और खोई-खोई मुख पर किसी प्रकार का उल्लास नहीं। और फिर उसकी नजर अपने पति के कपड़ों पर पड़ी। एक मैली-सी धोती उसके ऊपर एक फटी कमीज जो कोट से ढकी हुई थी। वह फटी कमीज दोपहर के समय सुशीला ने ही तो अपने पति को दी थी। और उसके खुले गले के कोट का कालर भी घिसने लगा था।'[२] बंगला और उर्दू प्रभाव युक्त हिन्दी, मुहावरों और लोकोक्ति-प्रयोग परिवेश और परिस्थितियों को उकेरने में सहायक हुआ है।

'रेखा' उपन्यास में दर्शन और मनोविज्ञान की प्रधानता है। वर्माजी की रचना-भाषा इस उपन्यास में एक आधुनिक नारी की मानसिक गुत्थियों को सुलझाने का प्रयास करती है। अतः पात्रों के व्यक्तित्व के रेखांकन के साथ ही चरित्रों का अन्तर्द्वन्द्व भी उभरा है। लेखक रेखा के चारित्रिक पतन के लिए उसकी परिस्थितियों को जिम्मेदार ठहराता है। परिस्थितियाँ एक के बाद एक पुरुष से जुड़ाव के बाद उस पर हावी होती चली जाती है- 'सोमेश्वर चला गया और रेखा बैठी हुई आश्चर्य करती रही उस सोमेश्वर पर। बिल्कुल एक जिद्दी बच्चे का-सा व्यक्तित्व लिये हुए यह आदमी बड़ा विचित्र-सा लग रहा था उसे। उन्मुक्त और निर्बन्ध, किसी हद तक अराजकता की सीमा तक पहुँचा हुआ। इस आदमी में निजी आकर्षण था। वह सोमेश्वर के सबंध में क्यों सोच रही है इस पर आश्चर्य हो रहा था। वह सोमेश्र पर से अपना ध्यान हटाना चाहती थी, लेकिन इसमें उसे सफलता नहीं मिल रही थी।

१- सामर्थ्य और सीमा वर्मा पृ० ७०८

२ थके पांव वर्मा पृ० ७४

सामने वाले उपन्यास में उसका मन न लग रहा था।''[१] उपन्यास के सभी पात्र शिक्षित हैं अत. अंग्रेजी के व्यावहारिक शब्दों का प्रयोग तो हुआ है साथ ही भाषा को प्रभावपूर्ण बनाने के लिये लेखक सूक्तियों का प्रयोग भी करता है।

'सीधी सच्ची बातें' नामक उपन्यास में भी सामाजिक यथार्थ और व्यक्ति की आन्तरिक जटिलतायें व्यक्त हुई हैं। वर्माजी ने यहाँ जगतप्रकाश नामक एक ऐसे चरित्र की रचना के है। जिसके माध्यम से समाज में घटित हो रहे मूल्यभग को पहचानना उनके लिये आसान हो जाता है। इस प्रकार इस उपन्यास में भी वर्माजी की रचना-भाषा दोहरी चुनौतियों से जूझ रही है एक तरफ उसके सामने आधुनिक समाज की जटिलता को उसकी गहराई में भेदने की चुनौती है तो दूसरी तरफ इस यथार्थ की सापेक्षता में निर्मित चरित्रों की जटिलता में प्रवेश का जोखिम। इस उपन्यास में लेखक मध्यवर्गीय व्यक्ति की घुटन और कुण्ठा को जगतप्रकाश के माध्यम से उकेरता है- सामाजिक विसंगतियों के साथ ही राजनैतिक विसंगतिया भी उभरती हैं और लेखक तथाकथित सिद्धान्तों में पड़ी दरारों की ओर इगित करता है- परन्तु इन सबसे मुक्ति न पाना जीवन की विडम्बना है। विघटित मूल्यों के इस दौर में जगतप्रकाश अनजाने ही कटु हो उठता है। वर्माजी मूल्यों और मान्यताओं की निरर्थकता को पात्रों की मानसिकता से अन्तर्भूत करके चित्रित करते हैं-- ' महात्मा गाधी ने कहा था-- अब मुझे जीने की इच्छा नहीं होती लेकिन जगतप्रकाश को अनुभव हो रहा था कि उस के अंदर जीने की इच्छा मर चुकी है। घुटन-- भयानक और असह्य घुटन। उस घुटन को वह कभी-कभी दूर कर लेता था जमील से बात करके, उसके सामने अपने मनोव्यथा को उँडेल करके। और जिस जमील को वह अभिन्न, अडिग और आदर्श समझता था, वह जमील कायर की भाति भाग गया था उसे अकेला छोड़कर।'[२] इस प्रकार लेखक की व्यग्यात्मक भाषा देश और समाज में व्याप्त तमाम अन्तर्विरोधों को बेनकाब करने में समर्थ है। कम्युनिज्म को फैशन के तौर पर ओढने वाले रईस लोगों के ऊपर व्यवस्था कोई हाथ नहीं डाल पाती परन्तु जगत प्रकाश देवली के कन्सेन्ट्रेशन कैम्प में बद कर दिया जाता है। अन्य उपन्यासों की भाँति इस उपन्यास में भी अरबी फारसी शब्दों का, मुहावरों का, सूक्तियों का प्रयोग किया गया है तथा अग्रेजी शब्द यत्र-तत्र अपनी छटा बिखेरते हैं।

'सबहिं नचावत राम गोसाई' नामक उपन्यास में जटिल सामाजिक-राजनैतिक यथार्थ की उपस्थिति- यहाँ लेखक बुद्धि, भाग्य और भावना के प्रतीक चरित्रों के द्वारा विघटित होते हुए मूल्यों और मानवीय सम्बन्धों की पड़ताल करता दिखायी देता है। इस उपन्यास में भी लेखक वर्णनकर्त्ता के रुप में उपस्थित है अत वह भाषा का सही इस्तेमाल करता दिखायी देता है। परन्तु चरित्रों के परस्पर वार्तालाप लेखक की भाषा से कुछ अलग ढंग के हैं-- 'तेरे चाचा रामसजीवन, मेरे पाप का उदय हुआ है। वह लखनऊ लौट आया है, एक चुड़ैल जैसी मेम से ब्याह करके। उसके साथ उसके दो लड़के भी हैं। नंदिनी।' और राजा रामसमुझ की आँखों से फर-फर आँसू गिरने लगे।'[३] उपन्यास में १६२० से लेकर स्वातन्त्र्योत्तर काल तक का राजनैतिक-सामाजिक यथार्थ है। कथा तीन अलग-अलग परिवारों से सबधित है एक तरफ उसका सरोकार अपने समय के जीते-जागते इतिहास से है दूसरी तरफ कथा में घटनाओं और चरित्रों का सयोजन भी उसकी चुनौती है। इस उपन्यास में वर्माजी की भाषा में सहजता, चुस्ती और सामर्थ्य दिखायी देता है वह परिवेश, कथा और चरित्र की अभिव्यक्ति में पूरी तरह सक्षम है।

१- रेखा -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ८३।

२ सीधी सच्ची बातें वर्मा पृ० ४५२

३- सबहिं नचावत राम गोसाई वर्मा पृ० ११६

'प्रश्न और मरीचिका' नामक उपन्यास देश के बटवारे के कारण उत्पन्न हिंसा और आतंक के माहौल और उसके बाद देश में व्याप्त भ्रष्टाचार का ऐतिहासिक दस्तावेज है। लेखक की नियतिवादी दृष्टि के कारण उपन्यास में दार्शनिकता का आवरण पड़ा हुआ है। उपन्यास की भाषा चरित्रों की निजता, अन्तर्द्वन्द्व और आकाक्षा को व्यक्त करने का प्रयास करती है। इसके साथ ही राजनैतिक क्षेत्र में व्याप्त विसगतियों को व्यक्त करने की क्षमता भी उसमें है। इस प्रकार इस उपन्यास में भी वर्माजी की रचना-भाषा दोहरी चुनौतियों से जूझ रही है एक तरफ लेखक आधुनिक समाज की जटिलता को उसकी गहराई में भेदता है तो दूसरी तरफ चरित्रों के द्वन्द्व, उनकी आकाक्षाओं तथा उनकी आन्तरिक जटिलताओं को पकड़ने की खूबी भी यहाँ देखी जा सकती है। उपन्यास के मुख्य चरित्र उदयप्रकाश की राजनैतिक सोच देश के बटवारे के मूल में छिपी हुई स्वार्थपरता और सत्ता की भूख को सामने लाती है-- 'एक संघर्ष चल रहा है समस्त देश में, दूसरा सघर्ष चल रहा है देश की राजधानी दिल्ली में। दोनों सघर्षों के रुप ऊपर से अलग-अलग दिख रहे हैं, लेकिन मुझे ऐसा दिखता है कि दोनों सघर्षों के मूल तत्व एक ही हैं, वह तत्व है सत्ता का। देश का साम्प्रदायिक आधार पर जो बटवारा हुआ उसकी तह में नेहरू और जिन्ना के बीच में सत्ता का ही सघर्ष था।'[१] वैसे तो उपन्यास की भाषा सरल खड़ी बोली है परन्तु मुस्लिम पात्रों द्वारा उर्दू मिश्रित हिन्दी का प्रयोग किया गया है, उर्दू और अग्रेजी के प्रचलित शब्द भाषा को स्वाभाविकता प्रदान करते हैं।

'युवराज चूण्डा' नामक उपन्यासयुगीन इतिहास को आधार मानकर लिखा गया है। मेवाड़ और मारवाड राजघरानों का टकराव मध्ययुगीन परिवेश को जीवत करता है। सामन्तगण अपनी वर्गीय रुचियों और प्रवृत्तियों के साथ चित्रित हुए हैं। उपन्यास की भाषा एक ओर मध्ययुगीन राजनैतिक-सामाजिक यथार्थ को व्यक्त करती है दूसरी ओर चरित्रों को उनकी निजता, द्वन्द्व और विकृतियों के साथ व्यक्त करने के लिये सघर्ष करती है। वर्माजी की रचना-भाषा मध्ययुगीन विसंगतियों को उजागर करती है -- 'राजपरिवारों में दासी के अस्तित्व को जैसे कभी स्वीकारा ही नहीं गया। वह तो महज प्राणहीन काया ही समझी जाती रही। दासियों के लिये अपनी भावना का प्रदर्शन वर्जित माना जाता रहा। रधिया की माता की मृत्यु इसी भावना के प्रदर्शन का दुष्परिणाम थी। रधिया यह जान चुकी थी और इसीलिए एक अन्दर से दहकते मगर सुप्त ज्वालामुखी की भाँति अमिया का दायित्व उसने अपने ऊपर ले लिया।'[२] मुहावरें, अरबी-फारसी के शब्द तथा प्रचलित सूक्तियों का प्रयोग भावाभिव्यक्ति में सहायक हुआ है।

आत्मकथा 'धुप्पल' में लेखक के अपने जीवन के उतार-चढ़ाव और अनुभवों का वर्णन है। प्रवाह के क्रम में अंग्रेजी और अरबी-फारसी के शब्दों का समावेश हो गया है। सूक्तियों और कविताओं के उल्लेख से कथाकार भाषा को स्वाभाविकता प्रदान करता है।

'चाणक्य' उपन्यास में मौर्यकालीन परिवेश का चित्रण करता हुआ लेखक अपनी भाषा के उचित रुप का प्रयोग करता है। चरित्रों के परस्पर वार्तालाप सस्कृतनिष्ठ शब्दावली से युक्त है। चरित्रों की विविधता, उनके व्यक्तित्व का विकास और उनकी सघर्षपूर्ण स्थितियों की अभिव्यक्ति भी भाषा पर निर्भर है। इस उपन्यास की भाषा परिवेश, कथ्य और चरित्र की अभिव्यक्ति में पूरी तरह सक्षम है -- 'मैं कह नहीं सकता। तुम्हारा जो नीतिशास्त्र है, शायद वही भविष्य का सत्य है। लेकिन यह भविष्य अपने अक में क्या-क्या छिपाये है, यह कोई नहीं जानता, यह सब तो स्वतः प्रकट होता जायेगा। तो

---

१ प्रश्न और मरीचिका -- भगवतीचरण वर्मा- पृ० ६१।

२ युवराज चूण्डा वर्मा पृ० १३३।

उसकी चिंता करना व्यर्थ है। अभी तो हमें अपनी स्वाभाविक गति से चलते रहना इष्ट है।'[1] इस प्रकार लेखक मौर्यकालीन संसकृति, उसके वैभव तथा चाणक्य के उत्थान के वर्णन में भाषा के सहज और स्वाभाविक रुप का प्रयोग करता है।

उपन्यासों की ही भाँति वर्माजी की कहानियों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। उनके 'किस्सागो' रुप का असली परिचय तो कहानियों से ही मिलता है - अपने जीवन में घटित अनेक घटनाओं को लेखक बड़े मनोयोग से दत्तचित्त होकर सुनाता है।[2] 'यत्र-तत्र उर्दू और अंग्रेजी के शब्द भी दिखायी पड़ते हैं -- भाषा में पैनापन लाने के लिये मुहावरों का प्रयोग भी किया गया है- कुल मिलाकर कहानियों में वर्माजी की भाषा का रुप सरल और व्यावहारिक, आम बोल-चाल की भाषा का है। प्रथम कहानी संग्रह 'इन्स्टालमेण्ट' में 'बाहर-भीतर' और 'प्रायश्चित' -- इन दो कहानियों को छोड़कर नैरेटर (मैं) विशुद्ध कथावाचक शैली में कहानी सुनाता है। 'प्रेजेण्ट्स' कहानी में वर्माजी की रचना-भाषा एक सौ तेरह प्रेजेण्ट के रूप में एक सौ तेरह प्रेमियों की स्मृतियों के अभिशापित चिह्नों को सजोये शशिबाला के विडम्बना पूर्ण जीवन की व्यथा-कथा उभारती है-- 'अब बंधन की कोई आवश्यकता नहीं है। जीवन एक खेल है, जिसका सबसे सुन्दर हृदय का खेल नहीं भोग-विलास का खेल है और खुलकर खेलना ही हमारा कर्त्तव्य है। परमेश्वरी बाबू, यह मेरी स्मृति की कहानी है और मेरी स्मृति के रूप को तो आपने देखा ही है।' 'अर्थ-पिशाच' कहानी में लेखक ने सम्भाषण के द्वारा धन के लोभी व्यक्ति की मानसिकता का चित्रण किया है। चरित्रों के अर्न्तद्वन्द्व और उनकी जटिलताओं को व्यक्त करने में कहानीकार की भाषा सक्षम है। लेखक अपनी भाषा में लिखता है -- 'बिना मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए हुए ही उसने फिर कहा- डाक्टर साहब, आप डरियेगा नहीं मेरी शक्ति क्षीण हो गई है, मुझसे भी प्रबल एक दूसरी शक्ति मुझ पर विजय पा रही है, मैं आपका अहित नहीं कर सकता। आप नहीं जानते, मैं क्या हूँ। आज से पहले मै भी नहीं जान सका था- यह मेरे जीवन का प्रथम सत्य है और साथ ही यह मेरे जीवन का अंतिम सत्य होगा- मैं शैतान हूँ शैतान।'[3] 'वरना हम भी आदमी थे काम के' कहानी में लेखक मियाँ राहत के व्यक्तित्व का खाका। चित्रात्मक भाषा में खींचता है- भाषा में स्वाभाविकता लाने के लिए उर्दू-शब्दों का और शायरी का प्रयोग किया गया है 'बेकारी का अभिशाप' कहानी में लेखक की रचना-भाषा एक बेकार युवक और उसके परिवार की बदहाली की करुण-व्यथा उभारती है। ललितमोहन की अन्तस् व्यथा इन शब्दों में फूट पड़ती है- 'एकाएक बांध टूट पड़ा। उसका शान्त मुख विकृत हो गया। एक पाशविक विद्रोह की छाया उसके मुख पर छा गई। मेरा हाथ जोर से पकड़कर उसने कहा चुप रहो, उनकी याद मुझे मत दिलाओ। अच्छा होता वे एक-एककर मर जाते। अच्छा होता यह दुनिया ही नष्ट हो जाती- अच्छा होता . . ।'[4]

'कुँवर साहब मर गये' कहानी में लेखक कांग्रेस के जुलूस का वर्णन करता है। उस वर्णन में भाषा की स्वाभाविकता देखते ही बनती है - कहानी के प्रमुख चरित्र कुँवर साहब के माध्यम से लेखक सामाजिक विसंगतियों को उभारने का प्रयास करता है- सत्याग्रही के रुप में प्रसिद्धि पा चुके कुँवर साहब, कोतवाल साहब से व्हिस्की का गिलास पाने के साथ ही अपने असली रुप में सामने आ जाते है-- 'कुँवर साहब की जान में जान आ गई। कोतवाल साहब ने मौका देखा। बोले- कुँवर साहब। आप कैसे भूल पड़ें ?

१- चाणक्य -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ३८।

२- इन्स्टालमेण्ट -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ११।

३- वही पृ० १६

४- वही पृ० ३५ ३६

एक ठण्डी सॉस लेकर कुँवर साहब ने कहा-- आज घर में शराब खत्म हो गई थी, और प्यास जोर की थी। शहर में दुकानों पर धरना था, इसलिए सिविल लाइन्स जा रहा था।

कोतवाल साहब ने कहा- क्या बताऊँ कुँवर साहब, इन कांग्रेस वालो ने नाक में दम कर रक्खा है आप जानते हैं आज सिविल लाइन्स की दुकानो पर भी धरना देने आ रहे थे।" यह सम्भाषण कुँवर कमलनारायण की आखे खोलता है और खद्दरपोश-कांग्रेसियों के प्रति उनका आक्रोश फूट पड़ता है। कुँवर साहब की कार को जुलूस के साथ देकर लोगों का लू-लू बोलना, फिकरे कसना और प्रत्युत्तर में कुवर साहब का गालियॉ देना- इत्यादि वर्णन लेखक सहज, स्वाभाविक भाषा में करता है। 'एक अनुभव' कहानी मे लेखक की भाषा गरीबी और लाचारी के कारण शरीर का व्यापार करने वाली ओरत की करुण-व्यथा उभारती है- एक पुरुष द्वारा सहानुभूतिवश दिये गये रुपये उसके अन्तस् में सोयी नारी को जगा देते हें- 'इस बार उसकी मुस्कराहट लोप हो गई। वह मुख जिस पर कामुकता हस रही थी, एकाएक पीला पड़ गया। मेरे सामने करुणा की एक प्रतिमूर्ति खड़ी थी। उसने धीरे से कहा- बाबूजी, मै यह रुपया न लूँगी।

क्यों ? क्या तुम अपने काम को इतना पसन्द करती हो कि एक महीने के लिये भी नहीं छोड़ सकती?

उसका गला भर आया- हाथ जोडती हूँ, बाबूजी। हाथ जोड़ती हूँ, आप यह न कहिए। मै करुँगी, आप जो कुछ कहते हैं, वह करुँगी। यह कहकर उसने नोट मेरे हाथ से ले लिया। उस समय उसके हाथ कॉप रहे थे।'[२] रुपयो के खातिर शरीर का व्यापार करने वाली औरत स्वेच्छा से-दया-से-दिये गये रुपयों को लेते वक्त काप उठती है- वर्माजी की रचना भाषा पाटक की प्रसुप्त चेतना को झकझोरती है। इस कहानी में भाषा की स्वाभाविकता दर्शनीय है। विक्टोरिया क्रॉस' कहानी में लेखक भाग्य और सयोग पर आधारित एक मजेदार गप सुनाता है- कथ्य के अनुकूल ही पात्रों की क्रिया-प्रतिक्रिया भाषा के द्वारा व्यक्त होती है। विक्टोरिया क्रॉस जैसा सम्मान पाये सुखराम और उसका साथी नैरेटर (मैं) के मेज पर आकर बैठने से जिस तरह का आचरण करते हैं वह उनकी मूर्खता को प्रदर्शित करता है- 'उन फौजियों को शायद मेरा उनकी मेज पर बैठना बुरा लगा, क्योकि एक ने ऑखें मिचमिचाई और दूसरे ने अपनी मूँछ पर हाथ फेरा। एक ने खॉसा और दूसरे ने मेज पर हाथ पटका। एक ने मुँह बनाया और दूसरे ने नाक सिकोड़ी।'[३] यही कायर और दब्बू किस्म के सुखराम बीबी द्वारा पीटे जाने पर विक्टोरिया क्रॉस जेब मे रख लेते है- प्रस्तुत कहानी की भाषा कथा के अनुकूल सरल, सहज, और व्यवहारिक है। 'एक विचित्र चक्कर है' कहानी में भी लेखक स्थितियों से आये चारित्रिक बदलाव को व्यक्त करता है- सीधी सपाट भाषा उन बदलावों को व्यक्त करने में समर्थ हे। 'मुगलों ने सल्तनत बख़्श दी' कहानी में भी लेखक हीरोजी की चारित्रिक विशेषताओं और कार्य-व्यापारों की तो सशक्त अभिव्यक्ति करता ही है साथ ही, अंग्रेजों द्वारा मुगल-बादशाहत हड़पने की कथा भी रोचक ढग से सुनाता है जो उनके शिल्प-सामर्थ्य की परिचायक होने के साथ ही भाषा सामर्थ्य की परिचायक है। 'बाहर-भीतर' कहानी की भाषा भी नारी-मन की कुण्ठाओं की अभिव्यक्ति सहज ढग से करती है। इसी तरह 'प्रायश्चित' कहानी भी लेखक के किस्सागोई के हुनर से तो परिचित कराती ही है साथ ही सरल भाषा में चरित्रों के आचरण और कार्य-व्यापार को व्यक्त करने में समर्थ है। रामू की वहू और कबरी बिल्ली के बीच छिडा अघोषित शीत युद्ध सहज रुप से व्यक्त हुआ है -- 'लेकिन ठहरी चौदह वर्ष की बालिका,

---

१- इन्स्टालमेण्ट -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ४३।

२ वही पृ० ५४।

३- वही पृ० ५६

कभी भण्डार-घर खुला है, तो कभी भण्डार-घर में बैठे-बैठे सो गई। कबरी बिल्ली को मौका मिला, घी-दूध पर अब वह जुट गई। रामू की बहू की जान आफत में और कबरी बिल्ली के छक्के पजे। रामू की बहू हॉड़ी में घी रखते-रखते ऊँघ गई और बचा हुआ घी कबरी के पेट में। रामू की बहू दूध ढँक कर मिसरानी को जिन्स देने गई और दूध नदारद। अगर बात यह यहीं तक रह जाती है, तो भी बुरा न था, कबरी रामू की बहू से कुछ ऐसा परक गई थी कि रामू की बहू के लिए खाना-पीना दुश्वार। रामू की बहू के कमरे में रबड़ी से भरी कटोरी पहुँची और रामू जब आये तब कटोरी साफ चटी हुई। बाजार से बालाई आई और जब तक रामू की बहू ने पान लगाया बालाई गायब।'[1] 'उत्तरदायित्व' कहानी में जीवन और मृत्यु से जुड़े दार्शनिक प्रश्नों को व्यक्त करते समय भी लेखक की भाषा की सहजता दर्शनीय है। 'परिचयहीन यात्री' कहानी में भी दार्शनिक विषय को सरल भाषा में ही अभिव्यक्ति मिली है। 'बॉय। एक पेग और' कहानी में वार्तालाप के मध्य आये छोटे-छोटे वाक्य चरित्रों की मानसिकता की व्यजना करने में समर्थ है- 'मैंने उससे कहा- पिताजी न आ सकेंगे। यह कहकर मैंने उसके हाथ में तार रख दिया। तार पढ़ते ही माधवी चौंक उठी उसका मुख पीला पड़ गया- विश्व! तुम्हारे साथ मेरी पूर्ण सहानुभूति है। -सहानुभूति कैसी ? मैंने पूछा। उसने कहा- यही कि तुम्हारी सारी सम्पत्ति निकल गई। मैं हॅस पड़ा- इससे क्या ? तुम तो मुझे मिल रही हो। सम्पत्ति का मूल्य तो तुम्हारे मूल्य से बढ़कर नहीं है। -शायद ! माधवी ने कहा- अब क्या करोगे ? क्या करूंगा ? मैने पूछा। - यही कि तुम्हारे पिता बीमार हैं, उनके पास जाना तुम्हारा धर्म है। हॉ, ठीक कहा। विवाह के बाद हम दोनों चलेंगे। - तुम बड़े स्वार्थी हो विश्व। तुम्हारे पिता बीमार और निराश हैं, और तुम अपने सुख की सोच रहे हो। तुम अपने पिता के यहॉ जाओ विवाह की तिथि बढ़ाई जा सकती है। मैंने कहा - माधवी। तुम देवी हो। उफ। कितनी भूल की थी, कितनी भूल की थी, विश्वकात का हाथ मेज पर रक्खे हुए गिलास पर जा पड़ा- बॉय, एक पेग और।'[2] 'इन्स्टालमेण्ट' कहानी में भी लेखक सरल और स्पष्ट भाषा में इक्के और एक्केवान का जो रोचक चित्र खींचता है उसे पढ़कर बरबस हसी आ जाती है। 'दो बाके' कहानी सग्रह की पहली कहानी 'दो पहलू' में जीवन के दो सर्वथा भिन्न पहलू उभरते हैं जिस सरल-सहज भाषा में लेखक प्रकृति और जीवन की सुन्दरता का वर्णन करता है उसी भाषा में परिवेश और जीवन की कुरुपता को उभारता है - 'एक औरत ने उसके सामने जूठन की पूड़ी का एक टुकड़ा फेंका, और उसके सामने उस टुकड़े के गिरते ही उस टुकड़े का अधिकारी एक कुत्ता झपटा। पूड़ी के उस टुकड़े को उस भिखारी ने और उस कुत्ते ने साथ-साथ पकड़ा, दो सेकेण्ड तक नर और पशु में छीना-झपटी हुई और अत में कुत्ते पर भिखारी ने एक डंडे के सहारे विजय पाई।'[3] 'मेज़ की तस्वीर' कहानी रामनारायण के अन्तर्द्वन्द्व को प्रेमिका और पत्नी की तुलना के माध्यम से उभारती है- अंत में उसकी विचारधारा रुपये की प्रेम पर विजय के साथ भग होती है- उसकी विचारधारा सरल और स्पष्ट भाषा के द्वारा व्यजित हुई है। 'विवशता' कहानी में लेखक लीला में आये बदलाव को जिन शब्दों में व्यक्त करता है उससे लीला की पीड़ा भरी जिन्दगी का संकेत मिल जाता है-- 'मेरे सामने एक प्राणहीन स्त्री खड़ी थी; लीला बदल गई थी- बुरी तरह बदल गई थी। उसके गाल पीले पड़ गये थे, उसकी ऑखों की चमक जाती रही थी। उसके मुख पर सूनेपन की स्पष्ट रेखायें विद्यमान थीं, उसकी आत्मा का सूनापन उसके सारे अस्तित्व में छलक पड़ा था।'[4] 'कायरता' कहानी में बूढ़े के रुप में एक ऐसा चरित्र उभरता है जो तीस

१- इन्स्टालमेण्ट -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ६१।

२- वही, पृ० १२२।

३- दो बाँके भगवतीचरण वर्मा पृ० ११

४ वही पृ० १६

वर्ष तक अपने भाई की सम्पत्ति पाने की आशा में जीता है। परन्तु अंत में उस सम्पत्ति पर किसी और का अधिकार हो जाता है। उसके दत्तक भतीजे- परमानंद से पचास हजार की रिश्वत लिये सबजज परमेश्वरी दयाल का जो सही चित्र लेखक ने खींचा है- लेखक की रचना-भाषा सबजज की मानसिक स्थिति की अभिव्यक्ति करने में समर्थ है। 'काश कि मैं कह सकता' कहानी में मातृभूमि पर प्राण न्यौछावर करने वाले निरुपमा के पति और उसके बाद उसके परिवार की खराब आर्थिक स्थिति को देखते हुए उसकी पत्नी के गलत रास्ते पर बढ़ते हुए कदम आदि के द्वारा जो चित्र उभरे हैं। उन सबके माध्यम से लेखक सरल और स्पष्ट भाषा में सामाजिक विडम्बनाओं को ही उजागर करता है। 'रेल में' शीर्षक कहानी में लेखक द्वारा किया गया चरित्रों के हुलिये का विवरण भाषा की चित्रात्मकता का परिचय देता है। कथा में कथ्य और परिवेश के अनुकूल अंग्रेजी और उर्दू के मिश्रित शब्दों -- 'कपास', 'तसदीक', 'सपोर्ट', 'असवाब' - का प्रयोग किया गया है। 'कुँवर साहब का कुत्ता' कहानी में लेखक की भाषा निरंजन जैसे बेरोजगार युवक के उद्गार के माध्यम से सामाजिक विसंगतियों पर चोट करती है- 'अच्छा हेता यदि भगवान ने मुझे कुँवर साहब का कुत्ता बनाकर पैदा किया होता। ऐसी हालत में मुझे तीन समय अच्छे से अच्छा खाना तो मिलता, गोश्त, दूध, बिसकुट, सभी कुछ। और फिर एक नौकर, एक मकान और देख-भाल करने के लिए एक डाक्टर भी मैं पाता। और सबसे बड़ी बात यह है कि मैं मौका-बेमौका कुँवर साहब तथा कुँवरानी साहबा का मुँह भी चाट लेता।'[1] इत्तिला और अमले जैसे शब्द कथा को स्वाभाविकता प्रदान करते हैं। 'तिजारत का नया तरीका' कहानी में लेखक खुशबख़्तराय और उनके पिता के कार्य-व्यापारों का वर्णन कुछ इस ढंग से करता है कि उसे पढ़कर बरबस हँसी आ जाती है- 'मुंशी उल्फतराय के शराब के नशे में तिमंजिले से उड़ने की कोशिश करने पर वहाँ से गिरकर मन जाने की सूचना तार द्वारा जिस समय उनके एकमात्र सुपुत्र तथा उत्तराधिकारी मुंशीखुशबख्तराय उर्फ मिस्टर के० राय के पास आई उस समय वे एक एंग्लोइण्डियन गर्ल के कारण एक टामी से पिटने के बाद अस्पताल से मरहम-पट्टी करवाकर अपने कमरे में दर्द से कराह रहे थे।'[2] खुशबख्तराय के व्यापार करने के नायाब तरीकों का वर्णन भी उतना ही नायाब है- लेखक ने अपनी अभिव्यक्ति क्षमता का परिचय देते हुए सरल और स्पष्ट भाषा में उन नायाब तरीकों का वर्णन किया है, 'अनशन' कहानी में पाण्डेयजी की पेटू प्रवृत्ति और 'लाला तिकड़मीलाल' में लालाजी की तिकड़मों का वर्णन सरल और स्पष्ट भाषा में लेखक रोचक ढंग से करता है। 'नाजिर मुंशी' कहानी में लेखक की रचना-भाषा अर्थ की सर्वव्यापी सत्ता का चित्रण करते हुए नाजिर मुंशी के चरित्र के रुप में मनुष्य की चेतना के आर्थिक रूपान्तरण की कहानी कहती है। 'पराजय अथवा मृत्यु' कहानी में लेखक की भाषा भुवनेश्वरी देवी के चरित्र के माध्यम से सामाजिक विडम्बनाओं से साक्षात्कार कराती है -- पुरुष के प्रति अपने लेखों में जहर उगलने वाली नारी पुरुष के प्रति आकृष्ट होने पर - पराजय अथवा ग्लानि का शिकार होकर मृत्यु का वरण कर लेती है - जीवन के इस कुरुप सत्य का मार्मिक चित्र इस कहानी में उभरता है। 'दो बाँके' कहानी में भी लेखक की रचना-भाषा दोनों बाकों के संवाद के माध्यम से झूठा स्वांग भरने वालों की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करती है - लाठियाँ और पंजा कसकर तमाशबीनों के सामने अपनी जवांमर्दी का सबूत देने वाले दोनों बाँके के चरित्र का उद्घाटन लेखकीय टिप्पणी 'भुला स्वांग खूब भर्‌यौ' के द्वारा हो जाता है।

वर्माजी के तीसरे कहानी संग्रह 'राख और चिंगारी' में दस कहानियाँ संग्रहीत है। इसमें संकलित सभी कहानियों की भाषा की खड़ी बोली है- पात्रों के व्यक्तित्व का खाका खींचने में भाषा की

१- **दो बाँके -- भगवतीचरण वर्मा पृ० ४६।**

२- **वही पृ० ५४**

चित्रात्मकता दर्शनीय है। इस सग्रह की तीन कहानियॉ-- 'खिलावन का नरक', 'पियारी' और 'दो रातें' वर्माजी की प्रतिनिधि कहानियॉ है। 'पियारी' कहानी में धन के लोभ के कारण अपना घर बरबाद करने वाली स्त्री मृत्यु के मुख पर पहुँचकर करुणा और दया की पात्र बन जाती है- पति से मिलने और क्षमायाचना करने की आशा अत तक संजोये 'पियारी' कहानी की रचना-भाषा उस नारी की कारुणिक स्थिति की अभिव्यक्ति में सक्षम है - 'राजा बावू। एक विनै है- जब उइ मिलै तो कहि दीन्हब कि रास्ता देखत-देखत, ... और इतना कहकर लुढक पड़ी। ठीक उसी तरह जैसे प्राण निकल जाने पर मृत-शरीर लुढक पड़ता है।'[1] 'दो रातें' कहानी मे वर्माजी भाषा के द्वारा पवित्र प्रेम की आकांक्षी एक वेश्या के जीवन की विडम्बना को उभारते हैं- जीवन में एक बार किये प्रेम की स्मृति को सजोये एक नारी अपने उस स्वप्न के टूटने पर कितनी पीड़ित हो उठती है- 'जिन्दगी में एक रात केवल एक रात मैंने प्रेम किया। वही जिन्दगी का एकमात्र सपना था। उस सपने को मैंने अस्तित्व बनाकर रखना चाहा था जीवन बाबू, उस एक रात के प्रेम को मैंने अनन्त रातों मे भरना चाहा था- पर वह न हो सका।'[2] लेखक की भाषा एक वेश्या की पीड़ा की मार्मिक अभिव्यक्ति करने में सफल हुई है। 'खिलावन का नरक' कहानी में वर्माजी का भाषा प्रवासी पति की पीड़ा को उभारती है जो परदेश से अपने बिछुडे परिवार से मिलने की आशा लेकर आता है परन्तु अपनी पत्नी को गैर-मर्द के साथ देखकर पुन. उसी नरक में लौट पड़ता है। 'रहस्य और रहस्योद्घाटन' कहानी को लेखक बेयरे की टिप्पणी के माध्यम से प्रभावोत्पादक बनाता है। 'पटा-बनेठी' और 'बतगड' कहानी स्त्री-पुरुषों के भिन्न-भिन्न रूपों को उद्घाटित करती है। 'आवारे' कहानी में लेखक बम्बई नगरी की विसगतियों को सरल परन्तु सशक्त भाषा में अभिव्यक्त करता है। 'राख और चिगारी' कहानी में नारी का अन्तर्द्वन्द्व उभरा है, तो 'उन्माद' कहानी में विवाहित स्त्री-पुरुष का उन्मादित रुप दोनों रुपों को उभारने में कहानी की भाषा पूर्णरुपेण समर्थ है। 'छह आने का टिकट' कहानी पात्रों की मन स्थिति और चारित्रिक विशेषताओं को सरल भाषा में अभिव्यक्त करती है।

एक लम्बे अतराल के बाद लिखे गये कहानी संग्रह 'मोर्चाबन्दी' में कथाओं का आधार बिन्दु है आधुनिक परिवेश का यथार्थ- चित्रण। 'सौदा हाथ से निकल गया' कहानी में लेखक रज्जो बीबी ओर छमिया महरी की- रसोई गैस खत्म होने पर उत्पन्न परेशानियों का वर्णन तो रोचक ढग से करता ही है साथ ही ऐतिहासिक मेज के टूटे पाये से बने शानदार लजीज खाने कोरमा, शामी, बिरयानी- का आनद उठाते हुए मीरचन्दानी और राय इकबाल शकर की पाच हजार की रकम के जल जाने के गम की अभिव्यक्ति सरल किन्तु सशक्त भाषा के द्वारा करता है। 'क्षमायाचना' कहानी की भाषा महानगरीय जीवन की विसगतियों और नौकरशाही मे व्याप्त भ्रष्टाचार पर व्यग्यात्मक प्रहार करती है। बम्बई महानगरी में बड़े-बड़े अधिकारी के बेटे भी कितने तगहाल मकानों में रहते है- 'जिस कमरे में रविप्रकाश का असबाब रखा गया था, वह अठारह-बारह का एक लम्बा-सा कमरा था जिसे परदे का पार्टीशन लगाकर दो भागों में विभाजित कर दिया गया था। आठ-बारह का एक हिस्सा जिसमें उस समय यूफोम का एक शानदार पलंग पड़ा था, एक तिपाई, दो कुरसियॉ, अच्छी तरह से सजा हुआ था। दूसरे दस-बारह के भाग में सोफा सेट, रेडियोग्राम, किताबों की नीची आलमारियॉ यानी बिल्कुल एक आधुनिक ड्राइंग रूम की सजावट।'[3] 'संकट' कहानी को लेखक सरल भाषा कवि अभिशप्त और लाल रत्नाकर सिंह के समक्ष उत्पन्न सकटों और उसके कारण उत्पन्न भिन्न-भिन्न परिस्थितियों का वर्णन

१- **प्रतिनिधि कहानियॉं -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ७४।**

२- **वही पृ० ८०।**

३ **मोर्चाबन्दी वर्मा पृ० २५**

करती है। बाराबकी और सुल्तानपुर की सीमाओं से लगे हुए गॉव आदिमपुर में- मिडिल स्कूल के हेडमास्टर, पोस्टमास्टर, थानेदार, ग्रामप्रधान और महाजन- इन चरित्रों के माध्यम से लेखक एक गॉव के आधारभूत स्तम्भों और उनके आचरण-व्यवहार को प्रत्येक गाव के कर्णधारों का प्रतीक चरित्र बना देता है- भाषा का तेवर उनकी क्रिया-प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति करने में समर्थ है। 'रगीलेलाल तीर्थयात्री' कहानी में लेखक द्वारा प्रयुक्त शीर्षक का औचित्य कहानी के अत में समझ में आता है। आधुनिक जीवन में भ्रष्टाचार की जड़े बहुत गहरे पेठ चुकी है-एक पिता द्वारा अपने पुत्र की बुराइयों को अवसर के अनुसार कैश करता है- लेखक की रचना-भाषा सामाजिक सबंधों के असली रुप को सामने लाती है- "तो तीन कामकाजी लौण्डे थे, उन्हें तो हमने धन्धे से लगा दिया, रहा यह आवारा और मुँहजोर रगीले, तो जब कभी हमारी किसी फर्म में छापा पड़ता है पकड़ा-धकड़ा जाता हे तब यह सामने कर दिया जाता है। इन फर्मों के मालिकों में रगीले भी तो है। साल भर मे एकाध बार महीना पन्द्रह दिन के लिए यह हॅसते-खेलते कृष्णमन्दिर की तीर्थयात्रा कर आता है।[1] 'वसीयत' कहानी में लेखक आचार्य चूड़ामणि के परिवार के माध्यम से पैसा मिलने पर सम्बन्धियों में आये बदलाव को व्यक्त करने में पूर्ण सफल रहा है। सम्बन्धियों का पैसा मिलने के पहले के व्यवहार और बाद के व्यवहार की अभिव्यक्ति मे भाषा का तेवर स्वाभाविक और सशक्त है- यहाँ तक कि आचार्य का परम प्रिय शिष्य जनार्दन भी वसीयत के अन्तिम उपहार के रुप में मिले गगाराम तोते के- तुम बुद्धू है। मे पण्डित हूँ बोलने पर उसे पिजरा खोलकर मुक्त कर देता है- इस प्रकार वर्तमान सामाजिक सस्कृति का कच्चा-चिट्ठा खोलने में वर्माजी की भाषा समर्थ है। 'खानदानी हरामजादे' कहानी राजनैतिक क्षेत्र में अपने-अपने फन में माहिर उस्तादों और उनकी तिकड़मों की कलई खोलती है- ये चरित्र व्यवस्था का रुख किस तरह अपनी तरफ मोड़ लेते हैं- लेखक की भाषा उस मुड़ते हुए रुख को व्यक्त करने में समर्थ है तो 'समझौता' कहानी नैतिक और सामाजिक मूल्यों में आयी गिरावट को उसी व्यग्यात्मक लहजे में व्यक्त करती है। 'गनेसीलाल का रामराज' कहानी की भाषा भी राजनैतिक क्षेत्र में व्याप्त उठा-पटक और तिकडमो को गनेसीलाल के चरित्र के माध्यम से उद्घाटित करती है- 'मिनिस्टरी मिलती नहीं ली जाती है। इस बार चुनाव- अभियान में हमारी पार्टी केवल मेरी बनायी रामराज की योजना के बल पर ही बहुमत प्राप्त कर सकती है। देखता हूँ, कैसे नहीं, बनाते हैं मुझे मिनिस्टर।'[२] वर्माजी की भाषा चरित्रो के अन्तर्विरोधों को उभारने में समर्थ है- 'दिल का दोरा' कहानी में गौरमोहनज्ञानी के चरित्र का विश्लेषण करने मे उनकी इस क्षमता का परिचय मिल जाता है- 'सही को गलत और गलत को सही साबित करने की दक्षता, किसी के आगे न झुकने और किसी से न दबने वाला आत्मविश्वास से भरा अहम। श्री गौरमोहनज्ञानी अपने जीवन में सफल व्यक्ति कहे जा सकते हैं। यदि सफलता शब्द की परिभाषा में सड़ी-गली नैतिकता की दुहाई निकाल दी जाय। जहॉ तक नैतिकता शब्द का प्रश्न है वह धर्म के साथ जुड़ा हुआ हे और गौरमोहनज्ञानी की धर्म पर आस्था पर किसी को शका नहीं हो सकती।'[३] 'जवरा मारे रोने न दे' कहानी में लेखक की भाषा पुलिस वालों के चरित्र को उभारने में समर्थ है- 'चौधरी अनहर हुसैन अनुभवी आदमी थे, थानेदारी से सीढ़ियॉ फॉदते हुए एस०एस०पी० बने थे। वह सीधे दीनबन्धु पाठक की सेवा में उपस्थित हुए और उन्हें साथ लेकर थाने पहुँचे। उस समय ठाकुर धम्मनसिह बड़े मजे में पैर फैलाये इतमीनान के साथ नियमित रूप से गालीगलौज कर रहे

१- मोर्चाबन्दी -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० ५५।

२ वही, पृ० १०६।

३- वही पृ० १११

थे।'[१] 'गुन न हिरानो गुनगाहक हिरानो' कहानी की रचना भाषा आज के युग में सबके गुणी बन जाने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करने में समर्थ है। गुनगाहक कोई भी नहीं दिखता - सभी अपनी-अपनी क्षमताओं के प्रदर्शन के लिए बेताब है। 'मोर्चाबंदी' कहानी में दो पार्टियों के बीच छिड़े युद्ध का लेखक रोचक ढंग से चित्रण करता है। कहानी का आरंभ वर्माजी भूमिका बांधते हुए करते हैं और उस भूमिका से ही आगे ही कहानी कैसी है ? इसका संकेत मिल जाता है - 'यह अपने ढंग का अनोखा युद्ध है और इस युद्ध की अपने ढंग की अनोखी मोर्चाबन्दी है।

युद्ध क्षेत्र है लखनऊ की छोटी-सी सजीवन कालोनी जो प्रमुखत: छोटे-छोटे अफसरों, राजकर्मचारियों एवं व्यापारियों की बस्ती है। पढ़े-लिखे सम्पन्न लोग ऊपर से आधुनिक युग के प्रगतिशील, लेकिन अन्दर से बड़े धार्मिक, असीम आस्था और विश्वास रखने वाले। बुद्धिमत्ता, तिकड़म, सरलता और दांव-पेच का विचित्र योग।'[२] 'त्याग और ग्रहण' कहानी में लेखक की रचना-भाषा राजनैतिक विसंगतियों को उजागर करती है। पात्र के बाह्य व्यक्तित्व का खाका लेखक सरल भाषा में खींचता है परन्तु उनके क्रिया-कलाप राजनैतिक यथार्थ का साक्षात्कार कराने में सक्षम है।

इस प्रकार वर्माजी की कथा-भाषा के सरलता, सहजता, यथार्थ की अभिव्यक्ति और विसंगतियों को उजागर करने की क्षमता- उनकी रचनात्मक दक्षता का प्रमाण है।

---

१ मोर्चाबन्दी -- भगवतीचरण वर्मा, पृ० १२७।

२ वही पृ० १४०

उपसंहार

भगवतीचरण वर्मा आधुनिक भारतीय साहित्य के उन कृतिकारों में से एक हैं जिन्होंने मात्र एक या दो विधाओं तक ही अपनी सम्भावनाओं को सीमित नहीं किया- कविता, उपन्यास, कहानी एकाकी, नाटक, निबध, हास्य-व्यंग्य- सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलायी है। उसके कथा साहित्य में ऐतिहासिक उतार-चढ़ाव और भारतीय समाज के बाहरी और भीतरी ठहरावों एव बदलावों का चित्रण है। वस्तुत इनका साहित्य मानव-समाज के विविध रुपों को दर्शाता है। 'चित्रलेखा' से प्रारम्भ प्रश्नमयी कथा-यात्रा विभिन्न टेढ़े-मेढ़े रास्तो से गुजरते हुए अपने पड़ाव तक पहुचती है- भले ही भटकाव के रुप में ही। 'अपने खिलौने' का हास्य-व्यंग्यकार 'सबहि नचावत राम गोसाई' में राजनीतिक उठा-पटक को किसी सीमा तक उघाड़ने में सफल हुआ है- 'दो बाके' और 'प्रायश्चित' कहानियों के क्रम में लिखा गया यह उपन्यास अपनी शैलीगत विशिष्टता के कारण एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। प्रेम, सेक्स, नियति और व्यवस्था के प्रति विद्रोह आदि विषय वर्माजी के सभी उपन्यासों में प्राय' किसी न किसी रुप में विद्यमान है चाहे 'तीन वर्ष' हो या 'रेखा', 'सामर्थ्य और सीमा' हो या 'सबहिं नचावत राम गोसाई' सामाजिक पृष्ठभूमि को आधार बनाकर लिखे गये इनके अधिकाश उपन्यासों मे व्यक्ति के हित में समाज की गर्हित परम्पराओं को बदलने की आकाक्षा व्यक्त हुई है और समाज की कुरुपताओं के प्रति आक्रोश भी। किन्तु समाज की सद्व्यवस्थाओं एव नियमों के प्रति आस्था एव निष्ठा भी प्रच्छन्न रुप से विद्यमान है इसलिये यथार्थ, विद्रोह आक्रोश एव व्यग्य के बीच भी उनके मन में छिपी आस्था कभी-कभी आदर्श का स्वर छेड़ देती है। जीवन-सघर्ष की भूल-भुलैया का भटकाव व्यक्ति का रुप ही बदल देता है चाहे वह 'भूले-बिसरे चित्र' की सतों हो या 'तीन वर्ष' का रमेश- यही भटकाव लेखक को नियतिवादी बनाता है। 'सीधी-सच्ची बातें' का जगतप्रकाश आदर्शनिष्ठा का प्रतीक बिम्ब बनकर रह गया है इस उपन्यास का विश्लेषण करते हुए धर्मवीर भारती लिखते हैं- और इन तमाम घटनाओं और उलझती चिन्तनधाराओं और विघटित हुए मूल्यों के बीच उन साधारण लोगों की कहानी जो इन आन्दोलनों से जुड़े हैं, कुछ इन बहावों में बह जाते हैं, कुछ पलायन कर ऐश्वर्य के आसान रास्ते अपना लेते हैं, कुछ गांधीवादी नैतिकता के सीधे-सादे मूल्यों पर अड़े रहते हैं और पिछड़ जाते हैं। इस उपन्यास का अन्त उस आशावादी स्वर में नहीं होता जैसा पहले उपन्यास का है, इसके नायक की मृत्यु लगभग उसी दिन होती है, जिस दिन दिल्ली में गांधीजी की हत्या होती है। लगता है एक व्यक्ति नहीं, एक नैतिक मूल्यों का युग बीत गया है।'[१] 'प्रश्न और मरीचिका' में अवश्य लेखक अपनी सरलीकरण और आदर्शात्मक चरित्र-चित्रण की प्रवृत्ति का परित्याग करता है- राजनीतिक-सामाजिक सदर्भ में प्रचलित सिद्धान्तों से सन्तुष्ट नहीं हो सका है। प्रत्येक वाद की व्यावहारिक विकृतियों के कारण उसे वे पूर्णत' स्वीकार नहीं कर पाते अत उनका अधिकांश साहित्य विकृतियों की परत खोलता चलता है- 'इस प्रकार जीवन के सभी महत्वपूर्ण पक्षों पर वे एक-के-बाद-एक सभी सिद्धान्तों का प्रत्याख्यान करते हैं और प्रत्याख्यानों के इस महाशून्य का प्रत्याख्यान नियतिवाद से होता दीख पड़ता है। पर 'प्रश्न और मरीचिका' तक पहुँचते-पहुँचते भले ही उसको खुले तौर पर खारिज न किया गया हो, नियतिवाद को भी प्रश्नों का व्यूह घेरना शुरु कर देता है।'[२]

अपवाद स्वरूप कुछ उपन्यासो को छोड़कर वर्माजी प्राय सभी उपन्यासों में राजनीतिक-सामाजिक समस्याओं और उनसे जुड़े प्रश्नों को उठाते रहे हैं। प्रारम्भिक उपन्यासों में लेखक पाप-पुण्य, वासना और प्रेम आदि विषयों में जहाँ बिना किसी शका के स्पष्ट बयान देता है वही बाद के उपन्यासों में लेखक

१- धर्मयुग -- १८ अक्टूबर १९८१ पृ० ३६।

२- वर्मा श्रीपाल शुक्ल पृ० ६१

थे।'[१] 'गुन न हिरानो गुनगाहक हिरानो' कहानी की रचना भाषा आज के युग में सबके गुणी बन जाने की प्रवृत्ति पर व्यंग्य करने में समर्थ है। गुनगाहक कोई भी नहीं दिखता - सभी अपनी-अपनी क्षमताओं के प्रदर्शन के लिए बेताब है। 'बोर्चाबंदी' कहानी में दो पार्टियों के बीच छिड़े युद्ध का लेखक रोचक ढंग से चित्रण करता है। कहानी का आरंभ वर्माजी भूमिका बाधते हुए करते हैं और उस भूमिका से ही आगे ही कहानी कैसी है ? इसका सकेत मिल जाता है - 'यह अपने ढंग का अनोखा युद्ध है और इस युद्ध की अपने ढंग की अनोखी मोर्चाबन्दी है।

युद्ध क्षेत्र है लखनऊ की छोटी-सी संजीवन कालोनी जो प्रमुखत छोटे-छोटे अफसरों, राजकर्मचारियों एवं व्यापारियों की बस्ती है। पढ़े-लिखे सम्पन्न लोग ऊपर से आधुनिक युग के प्रगतिशील, लेकिन अन्दर से बड़े धार्मिक, असीम आस्था और विश्वास रखने वाले। बुद्धिमत्ता, तिकड़म, सरलता और दाव-पेच का विचित्र योग।'[२] 'त्याग और ग्रहण' कहानी में लेखक की रचना-भाषा राजनैतिक विसगतियों को उजागर करती है। पात्र के बाह्य व्यक्तित्व का खाका लेखक सरल भाषा में खींचता है परन्तु उनके क्रिया-कलाप राजनैतिक यथार्थ का साक्षात्कार कराने में सक्षम है।

इस प्रकार वर्माजी की कथा-भाषा के सरलता, सहजता, यथार्थ की अभिव्यक्ति और विसंगतियों को उजागर करने की क्षमता- उनकी रचनात्मक दक्षता का प्रमाण है।

१- मोर्चाबन्दी — भगवतीचरण वर्मा पृ० १२७।

२ वही पृ० १४०

भगवतीचरण वर्मा आधुनिक भारतीय साहित्य के उन कृतिकारों में से एक हैं [illegible] एक या दो विधाओं तक ही अपनी सम्भावनाओं को सीमित नहीं किया कविता, [illegible] एकाकी, नाटक, निबध, हास्य-व्यग्य- सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है। [illegible] में ऐतिहासिक उतार-चढ़ाव और भारतीय समाज के बाहरी और भीतरी [illegible] चित्रण है। वस्तुत- इनका साहित्य मानव-समाज के विविध रूपों को दर्शाता है। [illegible] प्रश्नमयी कथा-यात्रा विभिन्न टेढ़े-मेढ़े रास्तो से गुजरते हुए अपने [illegible] भटकाव के रुप में ही। 'अपने खिलौने' का हास्य-व्यग्यकार 'सबहि नचावत राम गोसाईं' [illegible] उठा-पटक को किसी सीमा तक उघाड़ने में सफल हुआ है- 'दो बाँके' और [illegible] क्रम में लिखा गया यह उपन्यास अपनी शैलीगत विशिष्टता के कारण एक महत्वपूर्ण [illegible] सेक्स, नियति और व्यवस्था के प्रति विद्रोह आदि विषय वर्माजी के सभी उपन्यासों में [illegible] किसी रुप में विद्यमान है चाहे 'तीन वर्ष' हो या 'रेखा', 'सामर्थ्य और सीमा' हो [illegible] गोसाई' सामाजिक पृष्ठभूमि को आधार बनाकर लिखे गये इनके अधिकांश उपन्यासों [illegible] हित में समाज की गर्हित परम्पराओं को बदलने की आकांक्षा व्यक्त हुई है और [illegible] के प्रति आक्रोश भी। किन्तु समाज की सद्व्यवस्थाओं एव नियमों के प्रति [illegible] रुप से विद्यमान है इसलिये यथार्थ, विद्रोह आक्रोश एव व्यग्य के बाद भी [illegible] कभी-कभी आदर्श का स्वर छेड़ देती है। जीवन-सघर्ष की भूल भुलैया [illegible] बदल देता है चाहे वह 'भूले-बिसरे चित्र' की संतों हो या 'तीन वर्ष' का रमेश [illegible] नियतिवादी बनाता है। 'सीधी-सच्ची बातें' का जगतप्रकाश आदर्शनिष्ठा का प्रतीक [illegible] गया है इस उपन्यास का विश्लेषण करते हुए धर्मवीर भारती लिखते हैं- 'और इन [illegible] उलझती चिन्तनधाराओं और विघटित हुए मूल्यों के बीच उन साधारण लोगों [illegible] आन्दोलनों से जुड़े हैं, कुछ इन बहावों में बह जाते हैं, कुछ पलायन कर [illegible] लेते हैं, कुछ गांधीवादी नैतिकता के सीधे-सादे मूल्यों पर अड़े रहते हैं और [illegible] उपन्यास का अन्त उस आशावादी स्वर में नहीं होता जैसा पहले उपन्यास का है [illegible] लगभग उसी दिन होती है, जिस दिन दिल्ली में गांधीजी की हत्या होती है। [illegible] एक नैतिक मूल्यों का युग बीत गया है।'[1] 'प्रश्न और मरीचिका' में अवश्य [illegible] ओर आदर्शात्मक चरित्र-चित्रण की प्रवृत्ति का परित्याग करता है [illegible] प्रचलित सिद्धान्तों से सन्तुष्ट नहीं हो सका है। प्रत्येक वाद की व्यावहारिक विकृतियों [illegible] पूर्णत' स्वीकार नहीं कर पाते अत' उनका अधिकांश साहित्य विकृतियों [illegible] 'इस प्रकार जीवन के सभी महत्वपूर्ण पक्षों पर वे एक-के-बाद-एक सभी सिद्धान्तों [illegible] हैं और प्रत्याख्यानों के इस महाशून्य का प्रत्याख्यान नियतिवाद से होता दीख पड़ता है [illegible] मरीचिका' तक पहुँचते-पहुँचते भले ही उसको खुले तौर पर खारिज न किया गया हो [illegible] भी प्रश्नों का व्यूह घेरना शुरु कर देता है।'[2]

अपवाद स्वरूप कुछ उपन्यासो को छोड़कर वर्माजी प्राय. सभी उपन्यासों में [illegible] समस्याओं और उनसे जुड़े प्रश्नों को उठाते रहे हैं। प्रारम्भिक उपन्यासों में [illegible] और प्रेम आदि विषयों में जहाँ बिना किसी शका के स्पष्ट बयान देता है वहाँ [illegible]

१- धर्मयुग १८ अक्टूबर १९९१ पृ० ३९।

२- वर्मा श्रीलाल शुक्ल पृ० ६१

अपने सभी प्रश्नों के प्रति सशय ग्रस्त सा दिखायी देता है युगीन समस्याओं को विश्लेषित करने का प्रयास करता हुआ लेखक जटिलताओं को परखकर किसी प्रकार का समाधान प्रस्तुत नहीं करता ओर इसी कारण बाद के उपन्यासों में लेखक किसी प्रकार का सिद्धान्त स्थापित करने का प्रयास नहीं करता। राजनैतिक समस्याओं को उठाते हुए भी वर्माजी किसी भी राजनैतिक सिद्धान्त के प्रति बद्ध नहीं है। उनका दृष्टिकोण सभी सिद्धान्तों के प्रति निषेधवादी है। वास्तव में वर्माजी की रुचि मानवीय त्रासदी का चित्रण करने में रही है। राजनीतिक मीमासा तो उसमें अनायास आ गयी है- 'परन्तु राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण उपन्यास का मन्तव्य नहीं है। उस युग में तेजी से हो रहे बदलावों के बीच फॅसे हुए व्यक्तियों की आशाऍ निराशाऍ मानव-मूल्यों को पकड़ने के नाटकीय प्रयास, अपने मनोभावों की उद्दामता में अचानक गिरने और गिरते ही चले जाने की त्रासदियॉ- यही वे चित्र हैं जो 'भूले-बिसरे चित्र' के एक सशक्त 'कोलाज' का सृजन करते हैं।'[1] प्रारम्भिक उपन्यासों में लेखक उतनी सशक्त अभिव्यक्ति नहीं कर सका है जितनी भूले-बिसरे चित्र आदि अन्य उपन्यासों में। परन्तु पाप-पुण्य की समस्या, नियतिवाद, सामन्ती विलासिता और पूजीवादी व्यवस्था की विकृतियों के चित्रण में वर्माजी विशेष रुचि रखते हैं-- इन विषयों के प्रति लेखक का आग्रह किसी न किसी रुप में परवर्ती उपन्यासों में विद्यमान है। 'चित्रलेखा' में उठाये गये प्रश्न को ही बदले हुए सदर्भो के साथ वह बार-बार उठाता है- मनुष्य का चरित्र और मूल चरित्र से भटकने या उस पर कुछ कृत्रिम आरोपित कर लेने से अत में उसका पतन-लेखक की इस पूरी कथा-यात्रा में प्रश्न के संदर्भ बदलते गये है और सन्दर्भ बदल जाने से प्रश्न की व्याप्ति भी बदलती गयी है। 'और पाप' ? यह बुनियादी प्रश्न बड़ी से बड़ी मरीचिका में अपनी पूरी धज के साथ खड़ा दिखायी देता है। नैतिक गिरावट की मरीचिका में एक बुनियादी प्रश्न अनुत्तरित भटकता है और उसी प्रश्न से लेखक अपने उपन्यास का प्रारभ करता है- 'सही-गलत, कुछ है और नहीं भी है। समझ में नहीं आ रहा है। वैसे जो कुछ है, वह सब गलत है और उस सबमें स्वय मैं भी हूँ। हर तरफ से एक ही आवाज सुनाई देती है मुझे- मैं गलत हूँ। लेकिन मैं कहॉ से गलत हूँ, किस तरह से गलत हूँ, क्यों गलत हूँ इन प्रश्नों का उत्तर मैं नहीं दे सकता और मै सोच रहा हूँ कि क्या कोई उत्तर है भी'?[2]

इनकी कहानियों में गहरी बात को हल्के ढंग से कहने की प्रवृत्ति दिखाई देती है। 'दो बाके', 'प्रायश्चित', 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी' जैसी कहानियॉ परिहास एव व्यंग्य का अभूतपूर्व नमूना बन गयी है। इस तरह की कहानियॉ, इस शताब्दी के छठे और परवर्ती दशकों में लिखी जाने वाली व्यग्यपरक कहानियों का प्रेरणा स्त्रोत मानी जा सकती है जिन्हें बाद में स्वय वर्माजी हरिशकर परसाई और शरदजोशी जैसे लेखको ने सृजित किया। वर्माजी की सभी कहानियॉ समकालीन जीवन की दैनन्दिन स्थितियों की विसगति को हल्के ढग से उद्घाटित करती है और रोचकता के साथ किसी ऐसी कुरुपता या समस्या की ओर ध्यान आकृष्ट करती है जो व्यक्तिगत दिखते हुए भी मूलत. सामूहिक है। इनकी अधिकांश कहानियाँ उनके आरभिक दिनों के लेखन की है किन्तु जीवन के अन्तिम दशक में वे एक बार पुन. कहानी-लेखन की ओर प्रवृत्त हुए- अन्तिम कहानी सग्रह 'मोर्चाबन्दी' में सगृहीत बारह कहानियों का तंत्र, अंदाज और उनकी अन्तर्निहित प्रवृत्ति मूलतः वही है जो उनकी आरभिक कहानियों की है। इन कहानियों में भी हल्के व्यग्यपरक ढग से समकालीन जीवन की विसंगतियों को किसी न किसी चरित्र के माध्यम से उधेड़ा गया है। प्रेमचंद और प्रसाद की कहानियों की सी प्रखरता और बहुआयामित्व न होते हुए भी इनकी कहानियों का अपना एक ढग है जो उन्हें दूसरे समकालीन कहानीकारों से अलग करता है।

❁

---

१ भगवतीचरण वर्मा -- श्रीलाल शक्ल, पृ० ५४।

२ प्रश्न और मरीचिका वर्मा पृ० ११

आधार-ग्रंथ सूची

उपन्यास :

भगवतीचरण वर्मा		पतन
भगवतीचरण वर्मा		चित्रलेखा
भगवतीचरण वर्मा	.	तीन वर्ष
भगवतीचरण वर्मा	:	टेढ़े मेढ़े रास्ते
भगवतीचरण वर्मा	.	आखिरी दाव
भगवतीचरण वर्मा	:	अपने खिलौने
भगवतीचरण वर्मा		भूले बिसरे चित्र
भगवतीचरण वर्मा		वह फिर नहीं आई
भगवतीचरण वर्मा		सामर्थ्य और सीमा
भगवतीचरण वर्मा		थके पाव
भगवतीचरण वर्मा	.	रेखा
भगवतीचरण वर्मा	:	सीधी-सच्ची बातें
भगवतीचरण वर्मा	:	सबहि नचावत राम गोसाईं
भगवतीचरण वर्मा	.	प्रश्न और मरीचिका
भगवतीचरण वर्मा		युवराज चूण्डा
भगवतीचरण वर्मा		धुप्पल
भगवतीचरण वर्मा	.	चाणक्य
भगवतीचरण वर्मा		कहि न जाए का कहिए (अप्रकाशित)

कहानियाँ :

भगवतीचरण वर्मा	इन्स्टालमेण्ट
भगवतीचरण वर्मा	दो बाके
भगवतीचरण वर्मा	मेरी कहानियॉं
भगवतीचरण वर्मा	मोर्चा बन्दी

आलोचनात्मक ग्रंथ :

डा० श्रीमती) इन्दु शुक्ला वर्मा

कर्णसिंह चौहान	साहित्य के बुनियादी सरोकार
कुसुम वार्ष्णेय	भगवतीचरण वर्मा
कुँवरपाल सिंह	साहित्य समीक्षा और मार्क्सवाद
जगन्नाथप्रसाद शर्मा	हिन्दी कहानी का रचना-विधान
डॉ० देवराज	साहित्य और संस्कृति
नगेन्द्र	नगेन्द्र का काव्य चिन्तन
डॉ० निर्मला जैन	साहित्य का समाजशास्त्री अध्ययन
नंददुलारे वाजपेयी	आधुनिक साहित्य
प्रताप नारायण टण्डन	हिन्दी उपन्यास में कथा-शिल्प का विकास
भगवतीचरण वर्मा	साहित्य के सिद्धान्त तथा रुप
मैनेजर पाण्डेय	साहित्य और इतिहास दृष्टि
मैनेजर पाण्डेय	साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका।
रामप्रकाश कपूर	हिन्दी के सात युगान्तरकारी उपन्यास।
रेल्फ फाक्स	उपन्यास और लोकजीवन
डॉ० रांगेय राघव	सीधा-सादा रास्ता
लक्ष्मीनारायण लाल	हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास
डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय	बीसवीं शताब्दी हिन्दी साहित्य नए संदर्भ
ब्रजनारायण सिंह	उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा
विश्वनाथ प्रसाद तिवारी	रचना के सरोकार
डॉ० सत्पाल चुघ	प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की शिल्पविधि
सावित्री शर्मा	भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास
श्यामचरण दुबे	परम्परा, इतिहास-बोध और संस्कृति
शिवनारायण श्रीवास्तव	हिन्दी उपन्यास
शिवकुमार मिश्र	दर्शन, साहित्य और समाज
श्रीलाल शुक्ल	भगवतीचरण वर्मा
त्रिभुवन सिंह	हिन्दी उपन्यास ' शिल्प और प्रयोग

पत्रिकाएँ :

कादम्बिनी, विपक्ष, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, पहल, सारिका, वसुधा, हंस।